महामति श्री प्राणनाथजी प्रणीत

श्री कलश

(हिन्दी)

प्रकाशक
श्री ५ नवतनपुरीधाम
जामनगर

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज

महामति श्री प्राणनाथजी महाराज

श्री कलश

(हिन्दुस्तानी)

राग श्री मारु

सुनियो बानी सोहागनी, हुती जो अकथ अगम ।
सो वीतक कहूं तुमको, उड जासी सब भरम ॥ १

हे सुहागिन आत्माओ ! इन दिव्य वचनोंको सुनो, जो अभी तक अकथ (अवर्णनीय) तथा अगम (अगम्य-मनकी शक्तिसे परे) कहे गए हैं. मैं तुम्हें वह वृत्तान्त (वीतक) सुनाऊँ जिसे सुनने पर सभी भ्रान्तियाँ मिट जाएँगी.

रास कह्या कछू सुनके, अब तो मूल अंकूर ।
कलस होत सबन को, नूर पर नूर सिर नूर ॥ २

सद्गुरुके मुखारविन्दसे सुने अनुसार मैंने रासका कुछ वर्णन किया है. अब तो उनकी कृपाके कारण परमधामका मूल सम्बन्ध (अंकुर) उदय हुआ है. यह कलश ग्रन्थ सम्पूर्ण धर्म ग्रन्थोंके प्रकाशके समान सर्वोपरि रास ग्रन्थ तथा उसके प्रकाश स्वरूप प्रकाश ग्रन्थके भी प्रकाशके रूपमें कलशके समान प्रतिष्ठित होगा अर्थात् यह वाणी अखण्ड व्रज-राससे परे अक्षरधाम तथा उससे भी परे अक्षरातीत परमधामकी जानकारी देनेमें कलशके समान श्रेष्ठ सिद्ध होगी.

कथियल तो कही सुनी, पर अकथ ना एते दिन ।
सो तो अब जाहेर भई, जो आग्या थें उतपन ॥ ३

विभिन्न कथाएँ तो कहनेमें या सुननेमें आतीं हैं किन्तु पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचानकी बात आज तक अकथित (अकथ) रही है. सद्गुरुकी आज्ञासे अब वह अकथित वार्ता (प्रसङ्ग) मेरे द्वारा प्रकट हो रही है.

मुझे मेहेर मेहेबूबें करी, अंदर परदा खोल ।
सो सुख सनमंधियनसों, कहूं सो दो एक बोल ॥ ४

मेरे प्रियतम सद्गुरु धनीने मुझ पर अति कृपा की. मेरे हृदयका अज्ञानरूपी आवरण दूर कर वे स्वयं उसमें विराजमान हुए. इससे मुझे जो आनन्द (सुख) प्राप्त हुआ, उसी प्रसङ्गकी दो बातें मैं अपने सम्बन्धी आत्माओंसे कहता हूँ.

मासूकें मोहे मिल के, करी सो दिल दे गुझ ।
कहे तूं दे पडउतर, जो मैं पूछत हों तुझ ॥ ५

सद्गुरुने मेरे हृदयमें बैठकर अपने दिलकी गोपनीय (पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत श्री कृष्णजीके साक्षात्कारकी) बातें कीं. उस समय श्रीकृष्णजीने उन्हें कहा, मैं तुमसे जो पूछता हूँ उसका उत्तर दो.

तूं कौन आई इत क्योंकर, कहां है तेरा वतन ।
नार तूं कौन खसम की, द्रढ कर कहो बचन ॥ ६

तुम कौन हो ? इस जगतमें तुम्हें कैसे आना हुआ ? तुम्हारा मूल घर कहाँ है ? तुम किस धनीकी अर्धाङ्गिनी हो ? इन सबका उत्तर दृढ़ता पूर्वक दो.

तूं जागत है के नींद में, करके देख विचार ।
विध सारी याकी कहो, इन जिमी के परकार ॥ ७

तुम जाग रहे हो या नींदमें हो ? विचार पूर्वक देखो और इस जगतकी वास्तविकताके सम्बन्धमें विस्तारपूर्वक कहो.

तब मैं पियासों यों कह्या, जो तुम पूछी बात ।
मैं मेरी मत माफक, कहूंगी तैसी भांत ॥ ८

उस समय प्रत्युत्तर देते हुए सद्गुरुने श्री कृष्णजीसे कहा, हे धनी ! आप मुझसे जो कुछ पूछ रहे हैं, मैं उसे अपनी बुद्धिके अनुसार उसी प्रकार कहूँगा.

सुनो पिया अब मैं कहूं, तुम पूछी सुध मंडल ।
ए कहूं मैं क्यों कर, छल बल वल अकल ॥ ९

हे धनी ! सुनिए, अब मैं कहता हूँ. आपने इस जगतकी बात पूछी है. मैं किस प्रकार इसका वर्णन करूँ ? यह तो छल, बल, कुटिलता एवं चातुर्यपूर्ण है.

मैं न पेहेचानों आपको, ना सुध अपनों घर ।
पीउ पेहेचान भी नींद में, मैं जागत हों या पर ॥ १०

मैं स्वयंको नहीं पहचानता और मुझे अपने घरकी सुधि भी नहीं है. मुझे अपने धनीकी पहचान भी अज्ञानरूपी नींदमें ही हुई है. इस प्रकार मैं जागृत हूँ.

ए मोहोल रच्यो जो मंडप, सो अटक रह्यो अंत्रीख ।
कर कर फिकर कै थके, पर पाई न काहूं रीत ॥ ११

मण्डपकी भाँति बना (रचा) हुआ यह ब्रह्माण्ड अन्तरिक्षमें अटक रहा है. अनेक ज्ञानीजन इस विषय पर खोज करते हुए थक गए, किन्तु किसीको भी इसकी जानकारी नहीं हुई.

जल जिमी तेज वाए को, अवकास कियो है इंड ।
चौदे तबक चारों तरफों, परपंच खडा परचंड ॥ १२

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्त्वोंसे इस ब्रह्माण्डकी रचना हुई है. चौदह लोकोंमें चारों ओर इन्हीं पाँच तत्त्वोंका प्रचण्ड प्रपञ्च दिखाई देता है.

यामें खेल कै होवहीं, सो केते कहूं विचित्र ।
तिमर तेज रूत रंग फिरें, ससि सूर फिरें नखत्र ॥ १३

इस जगतमें कई प्रकारके खेल होते हैं, उनकी विचित्रताका वर्णन कहाँ तक करूँ ? यहाँ पर सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र तथा तारागण घूमते रहते हैं, जिससे दिन (तेज), रात (तिमिर) तथा विभिन्न ऋतुएँ रङ्ग बदलती रहतीं हैं.

तबक चौदे इंड में, जिमी जोजन कोट पचास ।
साढे तीन कोट ता बीच में, होत अंधेरी उजास ॥ १४

इस ब्रह्माण्डके चौदह लोकोंमें-से इस पृथ्वीका व्यास पचास करोड़ योजनका है. उसमें-से साढ़े तीन करोड़ योजनके अन्दर ही नियमित रूपसे दिन और रात (प्रकाश और अन्धकार) हुआ करते हैं.

उजास सूर को कहावहीं, सो तो अंधेरी के तिमर ।
तिनथें कछू न सूझहीं, जिमी आप ना घर ॥ १५

यहाँ पर सूर्यका जो प्रकाश कहलाता है वस्तुतः वह अज्ञानरूपी अन्धकार ही होता है क्योंकि उससे यह झूठी दुनियाँ (जिमी), स्वयं (आत्मा) तथा घर (परमधाम) किसीकी भी पहचान नहीं होती है.

जब थें सूरज देखिए, लेत अंधेरी घेर ।
जीव पसू पंखी आदमी, सब फिरें याके फेर ॥ १६

जब सूर्यका उदय होता है तब अज्ञानरूपी अन्धकार सबको घेर लेता है. इसलिए पशु, पक्षी, मनुष्य आदि (सभी जीव) इसी अज्ञान (माया) के चक्रमें फिरते रहते हैं.

काल ना देखें इन फेरें, याही तिमर के फंद ।
ए सूरज आंखों देखिए, परे याही फंद के बंध ॥ १७

इस चक्रमें पड़ने पर व्यतीत हो रहे समयकी सुधि नहीं रहती, इसलिए इसे अज्ञानका फन्दा माना गया है. इस सूर्यके प्रकाशको आँखोंसे देखने पर भी सब लोग अज्ञानरूपी अन्धकारके फन्देमें बँधे रहते हैं.

वाओ बादल बीज गाजहीं, जिमी जल ना समाए ।
ए पांचों आप देखाए के, फेर ना पैदा हो जाए ॥ १८

वर्षाऋतुमें वायुके प्रबल प्रवाहमें बादल टकराते हैं जिससे बिजली चमकती है एवं वर्षा होती है जिसका जल पृथ्वीमें नहीं समाता है. ये पाँचों तत्त्व अपनी-अपनी शक्ति प्रदर्शित कर ऐसे अदृश्य होते हैं मानों फिर कभी पैदा ही नहीं होंगे.

या भांत अनेक ब्रह्मांड में, देत देखाई दसों दिस ।
ए मोहजल लेहेरां लेवहीं, सागर सब एक रस ॥ १९

इस प्रकार ब्रह्माण्डमें दशों दिशाओंमें अनेक प्रकारके परिवर्तन दिखाई देते हैं. इस भवसागरमें मोहजलकी अनेक लहरें उठतीं हैं और सबकी सब एक रस होकर उसीमें समा जातीं हैं.

ए कोहेडा काली रैन का, कोई न पावे कल मूल ।
कहां कल किल्ली कुलफ, जो द्वार न पाइए सूल ॥ २०

यहाँ पर अन्धेरी रातके समान चारों ओर अज्ञानरूपी अन्धकार छाया हुआ है. किसीको भी मूल परमधामकी समझ नहीं है. जब पारका द्वार ही नहीं मिल रहा है तो ताले और चाबीकी जानकारीकी तो बात ही क्या रही ?

ए तीनों लोक तिमर के, लिए जो तीनों ही घेर ।
ए निरखे मैं नीके कर, पर पाइए ना काहूं सेर ॥ २१

ये तीनों (स्वर्ग, मृत्यु एवं पाताल) लोक अज्ञानसे उत्पन्न हुए हैं और इन तीनोंमें अज्ञानरूपी अन्धकार ही व्याप्त है. मैंने इनको भली प्रकारसे देखा किन्तु इस ब्रह्माण्डसे पार निकलनेका कोई मार्ग ही दिखाई नहीं दिया.

ए अंधेरी इन भांत की, काहूं सांध न सूझे सल ।
ए सुध काहूं ना परी, कै गए कर कर बल ॥ २२

यह अन्धकार इस प्रकार फैला हुआ है कि कहीं भी इसका किनारा तथा इससे बाहर निकलनेका मार्ग सूझता नहीं है. कई लोग प्रयत्न करते हुए चले गए किन्तु किसीको भी इसकी सुधि नहीं मिली.

ग्यान लिया कर दीपक, अंधेर आप नहीं गम ।
जोत दीपक इत क्या करे, ए तो चौदे तबकों तम ॥ २३

दीपकके समान सांसारिक कर्मकाण्डका ज्ञान लेकर निकलने वाले लोग स्वयं अन्धकारमें होनेके कारण उन्हें परमात्माकी सुधि (गम) नहीं होती. जब चौदह लोकोंमें चारों ओर अज्ञानरूप अन्धकार छाया हुआ है, तो टिमटिमाते दीपककी ज्योतिके समान कर्मकाण्डके ज्ञानसे क्या हो सकता है ?

ए देखे ही पडिए दुख में, कोई ब्राध को रचियो रोग ।
छुटकायो छूटे नहीं, नाहिंन देखन जोग ॥ २४

इस संसारको देखने मात्रसे भी (जन्म लेते ही) दुःखमें पड़ जाते हैं मानों किसी भयङ्कर रोगकी भाँति इसकी रचना हुई है. इसमें फँस जाने पर यह छुड़ानेसे भी नहीं छूटता. इसलिए यह सर्वथा देखने योग्य नहीं है.

टेढी संकडी गलियां, तामें फिरे फेर फेर ।
गुन पख अंग इन्द्रियां, कियो अंधेरी में अंधेर ॥ २५

इसमें कर्म, उपासना आदिकी टेढ़ी तथा संकरी गलियाँ हैं. जीव उनमें पड़कर जन्ममृत्युके चक्रमें बार-बार पड़ जाता है. गुण, पक्ष, अङ्ग तथा इन्द्रियाँ भी विषयोंकी ओर खींच कर अज्ञानरूपी अन्धकारमें और अन्धेरा फैलातीं हैं.

तत्त्व पांचों जो देखिए, यामें ना कोई थिर ।
परले होसी पल में, वैराट सचराचर ॥ २६

इन पाँचों तत्त्वोंको देखने पर लगता है कि इनमें कोई भी स्थिर नहीं है. पल मात्रमें प्रलय होकर इस विराट ब्रह्माण्डके चल-अचल सब पदार्थ मिट जाएँगे.

ए उपजे पांचों मोहथें, और मोह को तो नाहीं पार ।
नेत नेत केहे निगम फिरे, आगे सुध ना परी निराकार ॥ २७

ये पाँचों तत्त्व मोहसे उत्पन्न हुए हैं और मोहका कोई पारावार नहीं है. परमात्माको खोजते हुए वेदादि शास्त्र भी 'नेति' 'नेति' कहकर लौट गए. उन्हें निराकारसे आगेकी सुधि नहीं हुई.

मूल बिना ए मंडल, नहीं नेहेचल निरधार ।
निकसन कोई न पावही, वार न काहूं पार ॥ २८

बिना मूलका यह जगत मण्डल निश्चय ही स्थिर (अविनाशी) नहीं है. कोई भी इससे बाहर निकल नहीं पाता और इसका कोई पारावार भी नहीं है.

पंथ पैंडे कै चलहीं, कै भेष दरसन ।
ता बीच अंधेरी ग्यान की, पावे ना कोई निकसन ॥ २९

इस जगतमें अनेक धर्म-सम्प्रदाय, मत-मतान्तर, पन्थ-पैड़े अपने-अपने वेश और सिद्धान्त (दर्शन) लेकर चलते हैं. परन्तु सबके अन्दर मोहयुक्त ज्ञान (अज्ञान) का आवरण (अन्धकार) छाया हुआ होनेसे कोई भी इस जगतसे निकलकर मुक्त न हो सका.

यामें ज्यों ज्यों खोजिए, त्यों त्यों बंध पडते जाए ।
कै उदम जो कीजिए, तो भी तिमर न छोडे ताए ॥ ३०

इस संसारमें मायासे छूटनेके लिए जैसे-जैसे खोज (साधनाएँ) करते हैं वैसे-वैसे और बन्धनमें पड़ते हुए चले जाते हैं. अनेक प्रयत्न करने पर भी माया (अज्ञान) का अन्धकार उनसे छूटता नहीं है.

इत जुध किए कै सूरमों, पेहेन टोप सिल्हे पाखर ।
वचन बडे रन बोलके, सो भी उलट पडे आखर ॥ ३१

इस जगतमें अनेक ऋषिमुनियों तथा साधकोंने शूरता दिखाते हुए त्याग, शील, सन्तोष, क्षमा आदि सद्‌गुणोंका कवच पहनकर दुनियाँकी झूठी मान्यताओंके विरूद्ध युद्ध (सामना) किया. अहं ब्रह्मास्मि (मैं स्वयं ब्रह्म स्वरूप हूँ) जैसे बड़े-बड़े वचन भी कहे किन्तु माया पर विजय प्राप्त किए बिना ही उन्हें लौट जाना पड़ा.

ए सुध अजूं किन ना परी, बढत जात विवाद ।
ए खेल तो है एक खिन का, पर जाने सदा अनाद ॥ ३२

अभी तक किसीको भी पूर्णब्रह्म परमात्माकी सुधि नहीं हुई. इस विषयमें

परस्पर वादविवाद ही बढ़ता गया. वस्तुतः यह खेल तो क्षणमात्रका है परन्तु सबको यही प्रतीत होता है कि यह तो सदा रहने वाला अनादि है.

खेल खावंद जो त्रैगुन, जाने याथें जासी फेर ।
ए निरखे मैं नीके कर, अजूं ए भी मिने अंधेर ॥ ३३

सामान्य लोगोंकी मान्यता है कि इस खेलके स्वामी त्रिगुणाधिपति ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरकी उपासनासे जन्म-मृत्युका चक्र छूट जाएगा. परन्तु मैंने यह भली-भाँति परख लिया है कि ये तीनों भी अभी तक अज्ञानरूपी अन्धकारमें ही हैं.

ए द्वार कोई खोल के, कबहूं ना निकस्या कोए ।
ए बुजरक जो छल के, बैठे देखे बेसुध होए ॥ ३४

मुक्तिका द्वार खोलकर कोई भी आगे नहीं निकला है. इस मायावी विश्वमें बड़े कहलाने वाले त्रिदेवोंको भी मायामें ही बेसुध होकर बैठे हुए पाया गया.

ए जिन बांधे सो खोलहीं, तोलों ना छूटे बंध ।
या विध खेल खावंद की, तो औरों कहा सनंध ॥ ३५

जिसने मायाके ये बन्धन बाँधे हैं वह अक्षरब्रह्म ही इस फन्देको खोल सकता है, तब तक इन बन्धनोंसे कोई भी नहीं छूट सकता. विश्वके कर्णधार (त्रिदेव) की भी ऐसी दशा है तो अन्य सामान्य साधकोंकी तो बात ही क्या है ?

निज बुध आवे अग्याएं, तोलों ना छूटे मोह ।
आतम तो अंधेर में, सो बुध बिना बल ना होए ॥ ३६

पूर्णब्रह्म परमात्माकी आज्ञासे जबतक अक्षरकी जाग्रत बुद्धि (तारतम ज्ञान) इस जगतमें नहीं आएगी तब तक मोहके बन्धनोंसे कोई छूट नहीं पाएगा. यह आत्मा (जीव) तो अज्ञानरूपी अन्धकारमें भटक रही है. बुद्धजीकी जागृत बुद्धिके बिना किसीकी भी आत्म-दृष्टि नहीं खुल सकती.

ए तो कही इन इंड की, पिया पूछ्यो जो परसन ।
कहूं और अजूं बोहोत हैं, वे भी सुनो बचन ॥ ३७

हे धनी ! आपने जो प्रश्न किया है उसमें मैंने इस ब्रह्माण्डकी बात कही है. इस प्रकारकी अन्य भी अनेक बातें कहने जैसी हैं, आप कृपया उन वचनोंको भी सुनें.

प्रकरण १ चौपाई ३७

खोजको प्रकरण-राग श्री मारु

पिया मैं बोहोत भांत तोको खोजिया, छोड धंधा सब और ।
पूछत फिरों सोहागनी, कोई बतावे पिया ठौर ॥ १

हे प्रियतम धनी ! मैंने सब कार्य व्यवहार छोड़कर अनेक प्रकारसे आपको ढूँढा. मैंने अनेक सुहागिनी आत्माओंसे भी पूछा कि कोई तो मेरे प्रियतम धनीका स्थान बता दे.

मैं नेक बात याकी कहूं, तुम कारन खोज्या खेल ।
कोई ना कहे मैं देखिया, जिन नीके कर खोजेल ॥ २

इस झूठे खेलमें आपको प्राप्त करनेके लिए मैंने जिस प्रकार खोज की उसके बारेमें थोड़ा-सा बताऊँ. यहाँ पर जिन लोगोंने भली-भाँति खोज की है उनमें-से किसीने भी यह नहीं बताया कि हमें परमात्माका साक्षात्कार हुआ है.

सास्त्र साधु जो साखियां, मैं देखी सबोंकी मत ।
पिया सुध काहूं में नहीं, कोई न बतावे तित ॥ ३

शास्त्रोंके वचन एवं सन्तोंकी वाणीकी साक्षियोंको मैंने भलीभाँति देखा (सुना), परन्तु कहीं भी अपने धनीकी सुधि नहीं मिली. कोई भी उस घरकी बात नहीं बता सका.

छोटे बडे जिन खोजिया, पर न पाया करतार ।
संसा सब कोई ले चल्या, पर छूट्या नहीं विकार ॥ ४

सामान्य जनसे लेकर बड़े-बड़े ऋषि-महर्षियोंने भी खोज की किन्तु किसीने भी सृष्टिके नियन्ता परमात्माको नहीं पाया. सब लोग इस विषयमें सन्देह करते हुए चले गए परन्तु किसीके भी विकार दूर नहीं हुए.

झूठा ए छल कठिन, काहूं ना किसी की गम ।
कहां वतन कहां खसम, कौन जिमी कौन हम ॥ ५

यह छल स्वरूप झूठा संसार बड़ा कठिन है. कोई भी इसके रहस्यको समझ नहीं पाया कि मेरा घर कहाँ है ? मेर स्वामी कहाँ हैं और कौन हैं ? यह जगत क्या है ? एवं हम स्वयं कौन हैं ?

ए देखी बाजी छल की, छलकी तो उलटी रीत ।
इनमें सीधा दौडके, कोई ना निकस्या जीत ॥ ६

मैंने जगतके ये छल-कपट पूर्ण खेल देखे. छलकी तो रीति ही उलटी है. छलरूपी इस दुनियाँमें सीधा चलकर कोई भी कभी विजयी नहीं हुआ है.

मैं देख्या दिल विचार के, चितसों अरथ लगाए ।
इस मंडल में आतमा, चल्या ना कोई जगाए ॥ ७

मैंने विचार पूर्वक देखा और शास्त्रोंके गहन अर्थोंको भी ग्रहण किया. इस दुनियाँसे अपनी आत्माको जागृतकर कोई भी पार नहीं पहुँच पाया है.

मेहेनत तो बोहोतों करी, अहेनिस खोज विचार ।
तिन भी छल छूटा नहीं, गए हाथ पटक कै हार ॥ ८

पूर्णब्रह्म परमात्माको प्राप्त करनेके लिए अनेक साधकोंने कठिन साधनाएँ कीं, रात-दिन विचार पूर्वक खोजा, किन्तु उन लोगोंसे भी मायाका छल नहीं छूटा. अन्तमें वे भी हारकर हाथ पटकते हुए चले गए.

मोहादिक के आद लों, जेती उपजी सृष्ट ।
तिन सारों ने यों कह्या, जो किनहूं ना देखा द्रष्ट ॥ ९

मोहतत्त्व आदिकी उत्पत्तिसे लेकर आज तक इस ब्रह्माण्डमें जितनी भी सृष्टि हुई है, उन सब लोगोंने ऐसा ही कहा कि इस सृष्टिके नियन्ता परमात्माको किसीने भी नहीं देखा.

वरना वरनों खोजिया, जेती बुनि आदम ।
एता द्रढ किने ना किया, कहां खसम कौन हम ॥ १०

इस संसारमें जितने भी वर्णावर्ण (गृहस्थ-साधु) तथा प्रथम मानव मनु (आदम) की सन्तान हैं उन सबने परमतत्त्व (परमात्मा) को खोजा, परन्तु किसीने भी निश्चय पूर्वक यह नहीं बताया कि परब्रह्म परमात्मा कहाँ रहते हैं और हम कौन हैं ?

आद मध और अबलों, सब बोले या विध ।
केवल विदेही हो गए, तिन भी ना कही सुध ॥ ११

सृष्टि रचनाके आरम्भसे लेकर आज तक सभी ज्ञानी-ध्यानी लोग यही कहते गए. राजा जनक जैसे विदेही भी हो गए, किन्तु उन्होंने भी परम तत्त्वकी सुधि नहीं दी.

वेदों कथ कथ यों कथ्या, सब मिथ्या चौदे लोक ।
बकते बकते यों बके, एक अनेक सब फोक ॥ १२

वेदोंने भी बहुत-कुछ कहते हुए यह तथ्य बताया कि चौदह लोकोंमें विस्तृत यह जगत मिथ्या है. इसी बातको दोहराते हुए उन्होंने पुनः पुनः यही कहा कि एक परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य सब कुछ असत्य (अस्तित्वहीन) है.

बुध तुरिया द्रष्ट श्रवना, जहांलों पोहोंचे मन ।
ए होसी उतपन सब फना, जो आवे मिने वचन ॥ १३

बुद्धि, समाहित चित्त, दृष्टि, श्रवणशक्ति और मनकी पहुँच जहाँ तक है वे

सब उत्पन्न होकर नाश होने वाले हैं. जिनका वर्णन शब्दों द्वारा हो सकता है, वे सब नाशवान हैं.

वेदांती भी केहे थके, द्वैत खोजी पर पर ।
अद्वैत सबद जो बोलिए, तो सिर पडे उतर ॥ १४

वेदान्ती भी इस द्वैत जगतमें परम तत्त्वको अनेक प्रकारसे खोजते हुए थक गए. अन्तमें उन्होंने कहा कि अद्वैतके विषयमें यदि एक शब्दका भी उच्चारण होगा तो सिर धड़से अलग हो जाएगा. [राजा जनककी सभामें गार्गी द्वारा परमात्माके बारेमें बार-बार पूछने पर महर्षि याज्ञवल्क्यने उसे सावधान करते हुए इस प्रकार कहा कि अद्वैत ब्रह्मके विषयमें और अधिक पूछोगी तो तुम्हारा सिर उड़ जाएगा अर्थात् अहङ्कार शून्य होने पर ही अद्वैत ब्रह्मकी अनुभूति होती है.]

मन चित बुध श्रवना, पोहोंचे द्रष्ट ना सबदा कोए ।
षट प्रमानथें रहित है, सो द्रढ कैसे होए ॥ १५

मन, चित्त, बुद्धि, श्रवण, दृष्टि और शब्द ये सब परमात्मा तक नहीं पहुँचते हैं. परब्रह्म परमात्मा इन छः प्रमाणोंसे परे हैं, तो फिर उनका स्वरूप कैसे दृढ़ (निश्चित) हो सकता है ?

द्वैत आडे अद्वैत के, सब द्वैतै को विस्तार ।
छोड द्वैत आगे वचन, किने ना कियो निरधार ॥ १६

यह संसार द्वैत (माया) का ही विस्तार है. अद्वैत परमात्माकी प्राप्तिके लिए यह माया (द्वैत) व्यवधान रूप बन गई है. इस द्वैत (माया) को लाँघकर आगे अद्वैत परमात्माकी बात किसीने निर्धारित नहीं की.

ए अलख किनहूं ना लखी, आदैथें अकल ।
ऐसी निराकार निरंजन, व्याप रही सकल ॥ १७

सृष्टि रचनासे लेकर आज तक अपनी बुद्धिसे किसीने भी इस अगोचर

(शून्य-निराकार) को स्पष्ट रूपसे नहीं पहचाना. यह माया ही इस प्रकार निराकार और निरञ्जन (अदृश्य) रूपसे जगतमें व्याप्त है.

चेतन व्यापी व्याप में, सो फेर फेर आवे जाए ।
जड को चेतन ए करे, चेतन को मुरछाए ॥ १८

शरीरमें व्याप्त चेतन (जीव) इसी मायाके प्रभावके कारण वारंवार जन्म और मृत्युके चक्रमें पड़ जाता है. यह जीव जड़ शरीरमें प्रवेश कर उसे चेतनवत् बना देता है और उससे निकलकर उसे निश्चेतन कर देता है.

ऊपर तले मांहें बाहेर, दसों दिसा सब एह ।
छोड याको कोई ना कहे, ठौर खसम का जेह ॥ १९

पातालसे लेकर शून्य-निराकार तक दशों दिशाओंमें परमात्माकी माया ही व्यापक रूपसे फैली हुई है. उसे लाँघकर परमात्माका अद्वैत परमधाम किसीने भी नहीं बताया.

जो कछू कहिए वचने, सो तो सब अनित ।
वतन सरूप कोई ना कहे, तो क्यों कर जाइए तित ॥ २०

शब्दों (वचनों) के द्वारा कही जाने वाली समस्त वस्तुएँ अनित्य हैं. ऐसे शब्दोंके द्वारा भी किसीने परब्रह्म परमात्माका चिन्मय स्वरूप और दिव्य धामके विषयमें निश्चित रूपसे नहीं बताया है, फिर वहाँ कैसे जाया जाएगा?

पेड काली किन ना देखी, सब छाया में रहे उरझाए ।
गम छायाकी भी ना परी, तो पेड पार क्यों लखाए ॥ २१

इस अन्धकार पूर्ण मायाका मूल काल निरञ्जन शक्तिको किसीने भी नहीं देखा. सब उसकी छाया (मोहतत्त्व, शून्य एवं निराकार) में ही उलझकर रह गए. जब उस छाया (निराकार) की ही गम (पहचान) न हो सकी तो फिर इसके मूलसे परेकी पहचान कैसे होगी ?

ए जाए ना उलंघी देखीती, ना कछू होए पेहेचान ।
तो दुलहा कैसे पाइए, जाको नेक ना सुन्यो निसान ॥ २२

वस्तुतः इस दृश्यमान मायाको कोई लाँघ नहीं सकता और इसकी पहचान भी नहीं हो सकती, तो दुल्हा-परब्रह्म परमात्माको कैसे पाया जा सकता है ? जिनकी पहचानके लिए जरा-सी निशानी भी सुननेमें नहीं आई है.

खसम जो न्यारा द्वैत से, और ठौर सब द्वैत ।
किने ना कह्यो ठौर नेहेचल, तो पाइए कैसी रीत ॥ २३

परब्रह्म परमात्मा तो इस द्वैत मायासे सर्वथा भिन्न (अद्वैतमें प्रतिष्ठित) हैं. अद्वैत भूमिकाके अतिरिक्त सब स्थान द्वैत ही हैं. किसीने भी अद्वैत भूमिकाके सन्दर्भमें निश्चय पूर्वक नहीं कहा है तो फिर उसे किस प्रकार पाया जाए ?

ए मत वेद वेदांत की, सास्त्र सबों ए ग्यान ।
सो साधु लेकर दौडहीं, आगे मोह न देवे जान ॥ २४

वेद, वेदान्त तथा सभी शास्त्रोंका मत भी इस प्रकार अस्पष्ट रहा है. ऐसे ही अधूरे ज्ञानको लेकर साधुजन ब्रह्मको ढूँढनेका प्रयत्न करते हैं किन्तु यह मोहतत्त्व उन्हें आगे जाने नहीं देता.

या विध ग्यान जो चरचहीं, सो मैं देख्या चित ल्याए ।
ज्यों मनुआ सुपने मिने, बेसुध गोते खाए ॥ २५

इस प्रकार द्वैत और अद्वैत विषयक ज्ञान चर्चाएँ संसारमें होती रहतीं हैं. उनको भी मैंने ध्यान पूर्वक सुना. जैसे मन स्वप्नमें गोता लगाता रहता है, उसी प्रकार मायावी ज्ञान लेकर चर्चा करने वाले लोग भी बेसुध होकर मायामें ही गोते खाते रहते हैं.

छिन में कहे सब ब्रह्म है, छिन में बंझा पूत ।
मद माते मरकट ज्यों, करे सो अनेक रूप ॥ २६

(वेदके महावाक्यों-अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि, सर्वं खल्विदं ब्रह्म, अयमात्माब्रह्म आदिको यथार्थ न जानने वाले तथाकथित विद्वान) एक क्षणमें

तो यह कहते हैं कि यह सब कुछ ब्रह्म है, दूसरे क्षण कहते हैं कि यह मायासे उत्पन्न जगत बाँझके पुत्र जैसा अभाव मात्र है (इसका कोई अस्तित्व ही नहीं है). अविद्यामें रत ये लोग ऐसी विपरीत बातें कहते हुए मदोन्मत्त बन्दरकी भाँति अनेक रूप धारण करते हैं.

छिनमें कहे सत असत, माया कछुए कही न जाए ।
यों संग संसा द्रढ हुआ, सब धोखे रहे फिराए ॥ २७

वे एक क्षणमें तो संसारको सत्य बताते हैं और दूसरे ही क्षणमें उसे असत्य कहते हैं. फिर ऐसा भी कहते हैं कि इस मायाके विषयमें स्पष्ट रूपसे कुछ कहा नहीं जा सकता. इस प्रकार लोगोंके मनमें सन्देह बना रहा, जिसके कारण सभी लोग धोखेमें चक्कर काटते रहे.

छिन में कहे हैं आप में, छिन में कहे बाहेर ।
छिन में कहे मांहें न बाहेर, याको सबद न कोई निरधार ॥ २८

वे कभी तो परब्रह्म परमात्माको अपने अन्तरमें विराजमान बताते हैं और दूसरे क्षण कहते हैं कि ब्रह्म इस पिण्डसे बाहर है. फिर एक क्षणके अन्दर ही कहते हैं कि ब्रह्म न तो पिण्डमें है और न ही ब्रह्माण्डमें है, वह तो बाहर भीतर कहीं भी नहीं है. इस प्रकार इनके मत निश्चित नहीं हैं.

छिन में कछू और कहे, छिन में और की और ।
सो बात द्रढ क्यों होवहीं, जाको वचन ना रेहेवे ठौर ॥ २९

एक क्षणके अन्दर एक बात करते हैं तो दूसरे क्षण और ही बात करते हैं. उनकी बातोंमें दृढ़ता कैसे होगी जिनके वचन ही स्थिर नहीं हैं.

जैसे बालक बावरा, खेले हंसता रोए ।
ऐसे साधु सास्त्र में, द्रढ ना सबदा कोए ॥ ३०

जैसे छोटे बच्चे तथा दीवाने (पागल) लोग क्षणमें खेलते हैं, क्षणमें हँसते हैं और क्षणमें रोते भी हैं, उनमें कोई स्थिरता नहीं होती. वैसे ही अपरिपक्व बुद्धि वाले साधु शास्त्र वचनोंमें उलझे हैं. इनके किसी भी शब्दमें दृढ़ता नहीं है.

ए सब सींग ससक, बंझा पूत वैराट ।
फूल गगन नाम धराए के, उडाए देवे सब ठाट ॥ ३१

वेदान्त मतके अनुसार यह संसार खरगोशके सींग, बाँझ स्त्रीके पुत्र और आकाशके फूलकी भाँति अस्तित्व रहित है, ऐसा कहकर वे समस्त जगतके वैभवको क्षणभरमें नकार (उड़ा) देते हैं.

आप होत फूल गगन, बढत जात गुमान ।
देखीतां छल छेतरे, हाए हाए ऐसी ना सुजान ॥ ३२

इस प्रकार वे स्वयं भी आकाशके पुष्पकी भाँति अपना ही अस्तित्व मिटाते हैं, फिर भी उनमें अल्प ज्ञानका अभिमान बढ़ता जाता है. देखते ही देखते यह छलवती माया सभीको ठग रही है. हाय, यह माया कितनी चतुर और सुजान है !

कोई ना परखे छल को, जिन छल में है आप ।
तो न्यारा खसम जो छलथें, सो क्यों पाइए साख्यात ॥ ३३

जिस छलरूपिणी मायामें वे स्वयं हैं उस मायाको (उनमेंसे) कोई भी नहीं पहचान पाया, तो इस मायासे न्यारे परब्रह्म परमात्माका साक्षात्कार कैसे हो पाएगा ?

अटक रहे सब इतहीं, आगे सबद न पावे सेर ।
ए इंड गोलक बीच में, याके मोह तत्व चौफेर ॥ ३४

सब लोग इसी मायामें अटके हुए हैं. इससे परेका ज्ञानमार्ग उन्हें नहीं मिला. इस अण्डाकार ब्रह्माण्डके चारों ओर मोहतत्त्वका ही विस्तार है.

सबद जो सारे मोह लों, एक लवा न निकस्या पार ।
खोज खोज ताही सबद को, फेर फेर पडे अंधार ॥ ३५

सांसारिक ज्ञान (अपरा विद्या) के इन शब्दोंकी पहुँच मोहतत्त्व पर्यन्त ही सीमित है. शब्दका एक लव मात्र भी उससे आगे निकल नहीं पाया तथापि ज्ञानीजन उसी अपरा विद्याके शब्दोंके द्वारा परब्रह्मको खोजकर वारंवार अन्धकारमें पड़ जाते हैं.

ए ख्वाबी दम सब नींद लों, ए दम नींदै के आधार ।
जो कदी आगे बल करे, तो गले नींदै में निराकार ॥ ३६

इन सांसारिक जीवोंका मूल आधार निद्रा ही है और इनकी पहुँच भी वहीं तक ही है. यदि कोई जीव किसी प्रकार उससे आगे बढ़नेका प्रयास भी कर ले तो भी वह उसी निद्रारूपी निराकारमें ही विलीन हो जाता है.

तबक चौदे ख्वाब के, याको पेडै नींद निदान ।
नींद के पार जो खसम, सो ए क्यों करे पेहेचान ॥ ३७

यह चौदह लोकों वाला ब्रह्माण्ड स्वप्नका है. इसका मूल निश्चय ही नींद है. परब्रह्म परमात्मा इस नींदसे परे हैं, फिर ये स्वप्नके जीव उन्हें कैसे पहचान पाएँगे ?

बडी बुध वाले जो कहावहीं, सो सीतल भए इन भांत ।
ना पेहेचान छल वतन की, सो सुंन गले ले स्वांत ॥ ३८

जो विशेष ज्ञानी (बड़ी बुद्धिवाले) कहलाते हैं वे भी शून्य-निराकार तककी बात कह कर शान्त हो गए. उन्हें न इस छल-कपटवाली मायाकी पहचान हुई और न ही परमधामकी पहचान हुई. इसलिए वे शान्त होकर शून्यमें ही विलीन हो गए.

ए पुकार साधु सुनके, हट रहे पीछे पाए ।
पार सुध किन ना परी, सब इतहीं रहे उरझाए ॥ ३९

साधुओंने उनकी ऐसी पुकार सुनकर उससे आगे जानेकी अपेक्षा अपने कदम पीछे हटा लिए. इसलिए निराकारके परेकी सुधि किसीको न हुई. वे सब इसी मोहमें ही उलझ गए.

जिनहूं जैसा खोजिया, सो बोले बुध माफक ।
मैं देखे सबद सबन के, जो गए जाहेर मुख बक ॥ ४०

जिन लोगोंने जैसी खोज की उन्होंने अपनी बुद्धिके अनुसार उतना ही कह दिया. जिन्होंने अपनी वाणीमें जैसा कहा है, उन सबके शब्दोंको मैंने उसी रूपमें परखा.

या विध तो हुई नास्त, सो नास्त जानो जिन ।
सार सबद मैं देखके, लिए सो द्रढ कर मन ॥ ४१

इस प्रकार परमात्माके विषयमें 'नहीं है, नहीं है' ऐसा कहा जाने लगा किन्तु ऐसा नहीं समझना कि परमात्मा नहीं है. वस्तुतः इन्हीं धर्मग्रन्थोंके सार तत्त्वको ग्रहण कर मैंने मनसे निश्चय किया कि परमात्मा है.

जिन जानो पाया नहीं, है पावनहार परवान ।
सोए छिपे इन छलथें, वाकी मिले न कासों तान ॥ ४२

ऐसा भी नहीं समझना कि परमतत्त्वको किसीने प्राप्त नहीं किया. उस तत्त्वको यथार्थ रूपसे पानेवाले भी इसी संसारमें हैं. किन्तु वे सब इस छल-छद्मरूप मायासे छिपकर रहते हैं. उनकी सुर-तान किसीसे नहीं मिलती.

सो तो प्रेमी छिप रहे, वाको होए गयो सब तुछ ।
ओ खेले पिया के प्रेममें, और भूल गए सब कुछ ॥ ४३

परमात्माके ऐसे प्रेमी भक्त छल-प्रपञ्चपूर्ण विश्वसे छिपे हुए रहते हैं. उनके लिए सांसारिक सभी वस्तुएँ सर्वथा तुच्छ हैं. वे अपने प्रियतमके प्रेममें मस्त रहकर खेलते है और अपना सर्वस्व भूल जाते हैं.

सुरत न वाकी छल में, वाही तरफ उजास ।
प्रेमैं में मगन भए, और होए गयो सब नास ॥ ४४

ऐसे प्रेमी भक्तकी सुरता संसारमें न रहकर अपने प्रियतमके प्रकाशसे प्रकाशित रहती है. वह तो अपने प्रियतमके प्रेममें ही विभोर रहता है. भौतिक वैभव उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखता.

प्रेमी तो नेहेचे छिपे, उन मुख बोल्यो न जाए ।
सबद कदी जो निकसे, सो ग्यानी क्यों समझाए ॥ ४५

वस्तुतः जो परमात्माके प्रेमी हैं वे तो कहीं एकान्तमें छिपकर ही रहते हैं. उनके मुखसे किसी भी शब्दका उच्चारण नहीं होता अर्थात् वे कुछ कहते ही नहीं. यदि उनके मुखसे कभी कोई शब्द निकल भी जाएँ तो ज्ञानी लोग उन शब्दोंका मर्म कैसे जान सकते हैं ?

सबद जो सीधे प्रेम के, सास्त्र तो स्यानप छल ।
या विध कोई ना समझहीं, बात पडी है बल ॥ ४६

प्रेमके शब्द बहुत सीधे (सरल) होते हैं, किन्तु शास्त्रकारों और ज्ञानी जनोंके शब्दोंमें चतुराई होती है. इस प्रकारसे दोनों एक दूसरेकी बात नहीं समझते हैं. ज्ञानी और प्रेमीके बीच इस प्रकारका अन्तर बना ही रह जाता है.

साधु सास्त्र जो बोलहीं, सो तो सुनता है संसार ।
पर मूल माएने गुझ है, सोई गुझ सबद है पार ॥ ४७

सन्त-महात्मा शास्त्रोंका जिस प्रकार अर्थ निकाला करते हैं, उसीको सारा संसार सुनता है किन्तु शास्त्रोंका मूल अर्थ गूढ़ होता है. वे ही गूढ़ रहस्य परमतत्त्व (पार) का दर्शन करा सकते हैं.

सब कोई देखें सास्त्र को, सास्त्र तो गोरखधंध ।
मूल कडी पाए बिना, तोलों देखीतां ही अंध ॥ ४८

सारी दुनियाँके लोग शास्त्रको देखते-पढ़ते हैं, किन्तु शास्त्र वचन ही उन्हें उलझा देते हैं. जब तक इनकी मूल कड़ी (सृष्टि रचनाके रहस्य) को पाया (समझा) न जाए तब तक शास्त्र पढ़ने पर भी दृष्टि नहीं खुलती.

ऐसा तो कोई ना मिला, जो दोनों पार परकास ।
मगन पिया के प्रेम में, उधर भी उजास ॥ ४९

ऐसा कोई भी व्यक्ति मुझे नहीं मिला जिसका हृदय दोनों ओरसे प्रकाशित हो गया हो अर्थात् जो परब्रह्म परमात्माके प्रेममें भी मस्त रहे और शास्त्रोंके चतुराईपूर्ण वचनोंको भी स्पष्ट कर सके.

जो कोई ऐसा मिले, सो देवें सब सुध ।
सबदें सब समझावहीं, कहे वतन की विध ॥ ५०

यदि कोई ऐसा समर्थ व्यक्ति मिल जाए तो वह सब प्रकारकी सुधि दे सकेगा. इतना ही नहीं वह शास्त्रोंके गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट करते हुए परमधामका भी बोध कराएगा.

कडी बतावे मूल की, सास्त्र निकाले वल ।
ठौर खसम सब केहेवहीं, जो है सदा नेहेचल ॥ ५१

ऐसे व्यक्ति मूल परमधामका सम्बन्ध बताते हुए शास्त्रोंके रहस्योंको स्पष्ट करेंगे और पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान करवाकर उनके अखण्ड अविनाशी परमधामका वर्णन करेंगे.

आप ओलखावे आप में, आप पुरावें साख ।
आतम को परआतमा, नजरों आवे साख्यात ॥ ५२

जब अपनी आत्माकी पहचान होगी और स्वयं आत्मा इसकी साक्षी देगी, तब इस आत्माको शरीरमें रहते हुए भी अपने मूल स्वरूप पर-आत्मा दृष्टिगोचर होने लगेगी.

और सबद भी हैं सही, पिया करसी परदा दूर ।
सब मिल कदमों आवसी, तब हम पिया हजूर ॥ ५३

शास्त्रोंमें ऐसे और भी रहस्य हैं. वस्तुतः सद्गुरु ही हृदय पर पड़े अज्ञानके आवरणको दूर कर उन सब रहस्योंका स्पष्टीकरण कर देंगे. जब सभी ब्रह्मात्माएँ सद्गुरुके चरण शरणमें एकत्र होंगी तब हम सभी आत्माएँ परमधाममें धामधनीके चरणोंमें जागृत होंगी.

आगम की बानी कहे, पिया आवेंगे तेहेकीक ।
तिन आसा मेरी बंधी, पूरन आई परतीत ॥ ५४

शास्त्रोंमें भविष्यवाणी कही गई है कि परमात्मा निश्चय ही आएँगे. इस लिए मुझे पूर्ण विश्वासके साथ पियामिलनकी आशा बँधी रही.

मन चित बुध द्रढ किया, पिया न करें निरास ।
महामत नेहेचे कर कहे, होसी दुलहेसों विलास ॥ ५५

मैंने अपने मन, चित्त, बुद्धिमें यह निश्चय किया कि धामधनी मुझे निराश

नहीं करेंगे. महामति निश्चितरूपसे कहते हैं, इस प्रकार सद्गुरुको दृढ़ निश्चय था कि मुझे धामदुल्हासे अवश्यमेव आनन्द विलास प्राप्त होगा.

प्रकरण २ चौपाई ९२

ब्रह तामस को प्रकरण-राग सिंधूडो कडखा

मैं चाहत न स्वांत इन भांत अजूं आउध अंग चलें, इन नैनों दोनों नेक न आवे नीर ।
दरद देहां जरद गरद रद करे, मैं क्यों धरूं धीर अस्थिर सरीर ॥१

मैं अपनी इन्द्रियरूपी हथियारको साथ लिए अपने प्रियतम धनीसे मिलनेके लिए आतुर हो रहा हूँ. अब मैं शान्ति नहीं चाहता. उनके विरहमें रोते-रोते आँखोंसे अब आँसू बहने भी बन्द हो गए. प्रियतमकी विरह वेदनासे शरीर पीला होकर धूलके समान हो गया. अब मैं इस अस्थिर शरीरके द्वारा धनीसे मिलनेके लिए कैसे धैर्य धारण करूँ ?

कठिन निपट विकट घाटी प्रेम की, त्रबंक बंको सूरों किनों न अगमाए ।
धार तरवार पर सचर सिनगार कर, सामी अंग सांगा रोम रोम भराए ॥२

प्रेमका मार्ग निश्चय ही बड़ा विकट तथा कठिन है. इस मार्गमें कर्म, उपासना और ज्ञानके तीन मोड़ हैं. इसलिए बड़े-बड़े शूरवीरों (तपस्वी, ज्ञानी) द्वारा भी इस मार्ग पर चला नहीं जाता. तलवारकी धारके समान तीक्ष्ण इस मार्ग पर शील, सन्तोष, धैर्य, क्षमा, दयारूपी शृङ्गार (कवच) धारण कर प्रवेश करो. सामनेसे शरीरके रोम-रोमको बींधने वाले (निन्दा, उपालम्भके वचन रूपी) तीक्ष्ण नोंकवाले भाले भी चुभते हैं.

सागर नीर खारे लेहेरां मार मारे फिरें, बेटों बीच बेसुध पछाड खावें ।
खेलें मछ मिले गलें ले उछालें, संधो संध बंधे अंधो यों जो भावें ॥३

यह जीव मोहसागरकी काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि खारी लहरोंकी थपेड़े खाता हुआ जन्म-मृत्युरूपी चक्रमें पड़कर थक जानेके बाद विभिन्न

सम्प्रदायरूपी द्वीपोंमें आश्रय लेता हुआ बेसुध होकर भटकता है. जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछलीको निगल जाती है, उसी प्रकार ये सम्प्रदायवादी लोग भी स्वर्ग वैकुण्ठ आदिका प्रलोभन देकर सामान्य जनको अपनी ओर खींचते हैं. इस प्रकार झूठे प्रलोभनमें बँधे हुए अल्पज्ञ लोग उसी सम्प्रदायको श्रेष्ठ मानते हैं.

दाहो दसे दसों दिस सबे धखें, लाल झाला चलें इंड न झलाए ।
फोड आकास फिरे सिर सिखरों, ए फलंग उलंघ संग खसम मिलाए॥४

दसों दिशाओं (दसों इन्द्रियों) में काम, क्रोध, लोभ, मोहादि अग्निकी ज्वाला धधक रही है. उसकी लाल ज्वाला इस ब्रह्माण्ड (शरीर) में समा नहीं पा रही है. यह ज्वाला आकाशको चीरकर वैकुण्ठ तक पहुँची है. इस संसारसे छलाङ्ग लगाकर वैकुण्ठको भी लाँघकर शून्य निराकारसे पार परमात्मासे मिला जा सकता है.

घाट अवघाट सिलपाट अतिसलवली, तहां हाथ ना टिके पपील पाए ।
वाओ वाए बढे अगिन फैलाए चढे, जलें पर अनलें ना चले उडाए ॥५

प्रेमरूपी मार्ग (घाट) अत्यन्त विषम (अवघट) है. उस पर हाथ भी नहीं टिकता और चींटीके पैर (मन) भी नहीं ठहर सकते. इच्छा तथा तृष्णासे भरे हुए पवनके चलने पर काम, क्रोधादिकी अग्नि और धधकती है. उससे आत्मारूपी पक्षीके प्रेम (इश्क) तथा विश्वास (ईमान) रूपी पंख जल जाते हैं, जिससे वह न तो चल सकता है और न ही उड़ सकता है.

पेहेन पाखर गज घंट बजाए चल, पैठ संकोड सुई नाके समाए ।
डार आकार संभार जिन ओसरे, दौड चढ पहाड सिर झांप खाए ॥६

शील, सन्तोष रूपी कवच पहनकर वेद कतेबके ज्ञानरूपी घण्टे बजाते हुए निर्भय होकर हाथीकी चालसे चलो. नम्रता, गरीबीके द्वारा शरीरको समेटकर सुईके छेदके समान सूक्ष्म प्रेमकी संकड़ी गलीमें प्रवेश करो. धनीके चरणोंमें स्वयंको समर्पित करनेमें पीछे मत हटो. पहाड़के समान ऊँचे वैकुण्ठ, शून्य, निराकारको पार कर परमधाममें छलाङ्ग लगाओ.

बोहोत बंध फंद धंध अजूं कै बीचमें, सो देखे अलेखे मुख भाख न आवे।
निराकार सुंन पार के पार पीउ वतन, इत हुक्म हाकिम बिना कौन आवे । ७

इस संसारमें इन्द्रियोंके बन्धन, कर्मकाण्डके फन्दे तथा अज्ञानकी अनेक उलझनें दिखाई देतीं हैं किन्तु मुखसे उनका वर्णन नहीं हो सकता है. अपने पियाका धाम निराकार, शून्यके पार अक्षर तथा उससे भी परे है. उन परब्रह्म परमात्मा (हाकिम) की आज्ञाके बिना यहाँ पर कौन आ सकता है ?

मन तन बचन लगे तिन उतपन, आस पिया पास बांध्यो विसवास ।
कहे महामति इन भांत तो रंग रति, दै पिया आग्या जाग करूं विलास । ८

'पिया निश्चय ही आएँगे' इस आशाके साथ मेरे तन, मन, वचन और विश्वास बँधे हैं. महामति कहते हैं, मैं इस प्रकार धनीके प्रेममें मग्न होऊँ कि सद्गुरुकी आज्ञासे जागृत होकर प्रियतम धनीके साथ आनन्द विलास करूँ.

प्रकरण ३ चौपाई १००

राग श्री सामेरी

पिया मोहे स्वांत न आवहीं, ना कछू नैनों नीर ।
पिया बिना पल जो जात है, अहेनिस धखे सरीर ॥ १

हे धनी ! आपसे मिले बिना मुझे शान्ति नहीं मिलती. आपके विरहमें रोते-रोते मेरी आँखोंसे आँसू आना भी बन्द हो गए. आपके बिना जो पल बीत रहे हैं वे रात-दिन मेरी देहको जलाते हैं.

सब अंग अगनी जलके, जात उडे ज्यों गरद ।
क्यों इत स्वांत जो आवहीं, जित दुलहे का दरद ॥ २

आपके विरहाग्निमें मेरा सारा शरीर जलकर राख हो गया है और वह धूलकी भाँति उड़ने लगा है. जहाँ अपने प्रियतमकी विरह-वेदना हो, वहाँ पर शान्ति कैसे आ सकती है ?

हाडें हाड पिसात हैं, चकी बीच जिन भांत ।
आराम ना जीवडा होवहीं, तो क्यों कर उपजे स्वांत ॥ ३

आपके विरहरूपी चक्कीमें मेरी हड्डियाँ पिसी जा रहीं हैं. जीवको जब आराम

ही नहीं है तो वहाँ शान्ति कैसे उत्पन्न होगी ?

अब अंग सारन होए के, सारे सकल संधान ।
अपनी इन्द्री आप को, उलट लगी है खान ॥ ४

शरीरके सब अङ्ग भालेकी भाँति अपने संध-संधको बींध रहे हैं. अपनी ही इन्द्रियाँ उलटकर स्वयंको खाने लगीं हैं.

उडी जो नींद अंदर की, परत न क्यों ही चैन ।
प्यारी पीउ के दरस की, कब देखों मुख नैन ॥ ५

अन्दरकी नींद उड़ जानसे किसी भी प्रकार चैन ही नहीं आता. आपकी प्यारी आत्मा आपके दर्शनकी प्यासी है. मुझे कब आपके मुखारविन्दके दर्शन होंगे ?

पिया बिन कछुए न भावहीं, जानूं कब सुनों पिया बैन ।
जोलों पिउ मुझे ना मिले, तोलों तलफत हों दिन रैन ॥ ६

हे धनी ! आपके बिना कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है. न जाने आपके वचन कब सुनाई देंगे ? जब तक मुझे अपने धनी नहीं मिलेंगे तब तक दिन-रात तड़पते रहना पड़ेगा.

घाटी टेढी संकडी, तीखी खांडा धार ।
रोम रोम सांगा सामिया, तामें चढूं कर सिनगार ॥ ७

प्रेमकी घाटी टेड़ी, सँकरी तथा तलवारकी धारके समान तीक्ष्ण है. रोम-रोमको बींधने वाले वचनरूपी भालोंका सामना करना पड़ता है. ऐसे मार्गमें प्रेम, क्षमा, शील, सन्तोषरूपी शृङ्गार धारणकर चलना है.

नीर खारे भवसागर, और लेहेरां मारे मार ।
बेटों बीच पछाडहीं, वार न काहूं पार ॥ ८

इस खारे भवसागरमें जन्म-मरणरूपी लहरोंकी थपेड़ें खा-खाकर जीव विभिन्न सम्प्रदायरूपी द्वीपोंमें भटकता हुआ भी इस (भवसागर) से पार नहीं हो सकता.

तान तीखे आडे उलटे, और लेत भमरियां जल ।
मिने मछ लडाईयां, यामें लेवें सारे निगल ॥ ९

इस भवसागरकी टेड़ी, सीधी, उलटी, तिरछी लहरें तथा सत, रज, तमकी भँवरी जीवको खींचती रहतीं हैं. जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछलीको निगल जाती है, उसी प्रकार इस जगतमें भी सम्प्रदायवादी लोग साधारण जीवको अपनी ओर खींचते हैं.

ए दुनी दिल अंधी दिवानी, और बंधी संधों संध ।
हाथों हाथ न सूझहीं, तिमर तो या सनंध ॥ १०

यह दुनियाँ दिलसे अन्धी भी है और पागल भी है तथा इसके शरीरके संध-संध बँधे हुए हैं. यहाँ अज्ञानरूपी अन्धकार इस प्रकार छाया हुआ है कि एक हाथसे दूसरे हाथ तककी दूरी भी नहीं सूझती.

धखत दाह दसों दिस, झाला इंड ना समाए ।
फोड आकास पर फिरे, किन जाए ना उलंघी ताए ॥ ११

काम, क्रोध, ईर्ष्या द्वेषरूपी अग्नि दसों दिशाओंमें धधक रही है, जिसकी ज्वालाएँ पूरे ब्रह्माण्डमें भी नहीं समा रही हैं. यह तो आकाशको भी चीरकर चारों ओर व्याप्त हो रही है. कोई भी इसको लाँघ नहीं सका.

घाट पाट अति सलवली, तहां हाथ ना टिके पपील पाए ।
पवने अगनी पर जले, किन चढ्यो ना उड्यो जाए ॥ १२

प्रेमरूपी मार्ग अति फिसलनेवाला है. वहाँ सुरता (हाथ) तथा मन (चींटीके पैर) टिक नहीं पाते. इच्छा तृष्णारूपी पवनके प्रवाहमें प्रेम तथा विश्वासरूपी पंखके जल जाने पर आत्मारूपी पक्षी न चल सकता है और न उड़ सकता है.

इत चल तूं हस्ती होए के, पेहेन पाखर गज घंट बजाए ।
पैठ संकोड सुई नाके मिने, जिन कहूं अंग अटकाए ॥ १३

ऐसी विषम परिस्थितिमें शील, सन्तोषरूपी कवच पहनकर हाथीकी भाँति निर्भय होकर ज्ञानरूपी घण्टी बजाते हुए चलो. विनम्र बनकर सुईके छेदके

समान सूक्ष्म प्रेममार्गमें इस प्रकार प्रवेश करो कि कोई तुम्हें रोक न सके.

दीजे न आल आकार को, पीउ मिलना अंग इन ।
दौड चढ पहाड झांप खा, काएर होवे जिन ॥ १४

शरीरमें आलस्य मत आने दो क्योंकि इसी शरीरसे पियासे मिलना है. अध्यात्मके उच्च शिखर पर तीव्रतासे चढ़ जाओ. धर्ममार्ग पर चलते हुए डरपोक (भीरू) नहीं होना चाहिए.

बोहोत फंद बंध धंध कै, कै कोटान लाखों लाख ।
अंदर नजरों आवहीं, पर मुख ना देवें भाख ॥ १५

इस संसारमें कर्मकाण्डके अनेक प्रकारके बन्धन हैं. इन सबका अनुभव अन्दरसे होता है किन्तु मुखसे बाहर प्रकट किया नहीं जा सकता.

आडे चौदे तबक मोह, निराकार निरंजन ।
याके पार पोहोंचना, इन पार पिउ वतन ॥ १६

चौदह लोक, मोहतत्त्व, निराकार, निरंजन ये सब अवरोधक हैं. परमात्माका धाम तो इन सबसे परे है, जहाँ हमें पहुँचना है.

पांउ चले ना पर उडे, बीच तो ऐसे पंथ ।
पर ए सब तोलों देखिए, जोलों ना द्रष्टे कंथ ॥ १७

परमधामके लिए प्रेम मार्ग इस प्रकारका है कि इस पर न पाँवसे चला जाता है और न पंखसे उड़ा जाता है. किन्तु तब तक मायाकी ओर दृष्टि जाती है, जब तक पूर्णब्रह्म परमात्मा दिखाई नहीं देते.

आतम बंधी आस पिया, मन तन लगे बचन ।
कहे महामत कौन आवहीं, इत हुकम खसमके बिन ॥ १८

पिया मिलनकी आशासे आत्मा शरीरके साथ बँधी हुई है, इसलिए मन, तन तथा वचन ये सब इसी आशामें लगे हुए हैं. महामति कहते हैं, पूर्णब्रह्म परमात्माके आदेश बिना इस परमधाममें भला कौन आ सकता है ?

प्रकरण ४ चौपाई ११८

तलफे तारुनी रे, दुलही को दिल दे ।
सनमंध मूल जानके रे, सेज सुरंगी पर ले ॥ १

परमधामकी ब्रह्म आत्माएँ इस खेलमें आकर तड़प रहीं हैं. उन्होंने अपना हृदय प्रियतमको समर्पित कर दिया है. वे अपने मूल सम्बन्धको पहचान कर अपने हृदयकी सुख शय्या पर धामधनीको विराजमान करतीं हैं.

सब तन विरहे खाइया, गल गया लोहू मांस ।
न आवे अंदर बाहेर, या विध सूकत सांस ॥ २

मानों उनका सम्पूर्ण शरीर ही विरहने निगल लिया है, जिससे रक्त मांस सब गल गए हैं. उनके श्वास-प्रश्वास इस प्रकार सूख गए हैं कि वे न अन्दर जाते हैं और न ही बाहर आते हैं.

हाड हुए सब लकडी, सिर श्रीफल व्रह अगिन ।
मांस मीज लोहू रगा, या विध होत हवन ॥ ३

प्रियतम धनीके विरहकी वेदीमें हड्डियाँ समिधा (लकड़ी) बन गईं हैं. सिर नारियल बना है और मांस-मज्जा-रक्त तथा नसें हवन सामग्रीके समान हो गईं हैं. इस प्रकार विरहाग्निमें शरीरके अङ्गोंका हवन हो रहा है.

रोम रोम सूली सुगम, खंड खंड खांडा धार ।
पूछ पिया दुख तिनको, जो तेरी विरहिन नार ॥ ४

उनके लिए शरीरके रोम-रोमको शूली पर चढ़ाना और तलवारकी तीक्ष्ण धारसे शरीरको काट कर टुकड़े-टुकड़े कर देना सहज बन गया है. हे प्रियतम धनी ! इस प्रकार असह्य विरहमें पड़ी हुई आत्माओंके विरहके बारेमें पूछ तो लीजिए.

ए दरद जाने सोई, जिन लगे कलेजे घाओ ।
ना दारू इन दरद का, फेर फेर करे फैलाओ ॥ ५

विरहकी पीड़ा तो वही जान सकता है जिसके हृदयमें प्रियतमके वियोगका घाव लगा हो. इस घावको मिटानेकी कोई औषधि भी नहीं है. इसकी वेदना

तो प्रतिपल बढ़ती ही जाती है.

ए दरद तेरा कठिन, भूषन लगे ज्यों दाग ।
हेम हीरा सेज पसमी, अंग लगावे आग ॥ ६

हे धनी ! आपके वियोगकी पीड़ा अति कठिन है. मानों हीरा जड़ित सुवर्णके आभूषण तथा रेशमी वस्त्रोंकी शय्या यह सब शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें दाह उत्पन्न कर रहे हैं.

विरहिन होवे पीउ की, वाको कोई ना उपाए ।
अंग अपने बैरी हुए, सब तन लियो है खाए ॥ ७

परब्रह्म परमात्माकी विरहिणी आत्माको अपने पिया मिलनके बिना शान्तिका दूसरा कोई उपाय नहीं है. उसको लगता है कि अपने ही गुण, अङ्ग और इन्द्रियाँ भी शत्रु बनकर शरीरको खा रहीं हैं.

ए लछन तेरे दरद के, ताए गृह अंगना न सोहाए ।
रतन जडित जो मंदिर, सो उठ उठ खाने धाए ॥ ८

हे प्रियतम धनी ! आपके विरहसे पीड़ित आत्माओंके ये लक्षण हैं कि उनको घरका आङ्गन भी अच्छा नहीं लगता और रत्न जड़ित मन्दिर (घर) भी उठ-उठकर खानेके लिए दौड़ता है.

ना बैठ सके विरहनी, सोए सके ना रोए ।
राजपृथवी पांव दाब के, निकसी या विध होए ॥ ९

ऐसी विरहिणी न शान्तिसे बैठ सकती है, न सो सकती है और न ही रो सकती है. सम्पूर्ण पृथ्वीका राज भी यदि उसे मिल जाए, तो भी वह उसको ठोकर मार कर आगे निकल जाती है.

विरहा ना देवे बैठने, उठने भी ना दे ।
लोट पोट भी ना कर सके, हूक हूक सांस ले ॥ १०

इस प्रकार तीव्र बना हुआ विरह विरहिणीको न तो चैनसे बैठने देता है और न ही खड़ा होने देता है. इतना ही नहीं विरहिणी विरह-व्याकुल होकर

जमीन पर लोट-पोट भी नहीं कर सकती, मात्र हाय-हाय करती हुई गहरी श्वासें लेती है.

आठों जाम विरहनी, जब सांस लियो हूक हूक ।
पथर काले ढिग हुते, सो भी हुए टूक टूक॥११

वियोगिनी आत्माने जब आठों प्रहर गहरी श्वासें लेकर अन्तरकी ज्वालाको प्रकट किया तो उसके सामने श्याम शिलाके समान कठोर हृदय भी गल पिघलकर टुकड़े-टुकड़े हो गए.

एह विध मोहे तुम दई, अपनी अंगना जान ।
परदा बीच टालने, ताथें विरहा परवान ॥ १२

हे मेरे प्रियतम धनी ! इस प्रकार आपने मुझे अपनी प्यारी अङ्गना जानकर अपना विरह दिया. निश्चय ही हमारे बीच पड़े हुए मायाके आवरणको हटानेके लिए ही आपने अपना विरह दिया है.

प्रकरण ५ चौपाई १३०

राग धन्या मेवाडो

विरहा गत रे जाने सोई, जो मिलके विछुरी होए, मेरे दुलहा ।
ज्यों मीन बिछुरी जलथें, या गत जाने सोए, मेरे दुलहा ।
विरहनी विलखे तलफे तारूनी, तारूनी तलफे कलपे कामिनी (टेक) ॥ १

विरहकी गति तो वे आत्माएँ ही जान सकतीं हैं जो अपने प्रियतम परमात्मासे मिलकर विछुड़ गईं हों. हे मेरे प्रियतम धनी ! जिस प्रकार जलसे विछुड़कर मछली तड़पती है, वही गति विरहिणी आत्माकी है. विरहिणी आत्माएँ इस झूठे संसारमें आकर तड़पती हुई विलाप कर रहीं हैं.

विछुरो तेरो वल्लभा, सो क्यों सहे सोहागिन ।
तुम बिना पिंड ब्रह्मांड, हो गई सब अगिन ॥ २

हे धनी ! सुहागिनी आत्माएँ आपका वियोग कैसे सह सकतीं हैं ? आपके बिना यह पिण्ड और ब्रह्माण्ड दोनों ही उसको आगके समान लग रहे हैं.

विरहा जाने विरहनी, वाके आग ना अंदर समाए ।
सो झाला बाहेर पडी, तिन दियो वैराट लगाए ॥ ३

विरहिणी आत्मा ही विरहकी पीड़ा समझ सकती है. उसके हृदयमें विरहाग्नि समा नहीं पाती. उसकी ज्वाला हृदयसे बाहर निकल कर पूरे ब्रह्माण्डको जला देती है.

विरहा ना छूटे वल्लभा, जो परे विघन अनेक ।
पिंड ना देखूं ब्रह्मांड, देखूं दुलहा अपनो एक ॥ ४

अनेकों विघ्न-बाधाएँ आने पर भी विरहिणीसे धामधनीका विरह नहीं छूट पाता. ऐसी आत्माको न तो अपने शरीरकी सुधि होती है, न ही ब्रह्माण्डकी. वह तो केवल अपने प्रियतम धनीको ही खोजती रहती है.

विरहनी विरहा बीच में, कियो सो अपनों घर ।
चौदे तबक की साहेबी, सो वारूं तेरे विरहा पर ॥ ५

विरहिणी आत्माने तो विरहके बीच ही अपना घर बना लिया है. वह कहती है कि यदि मुझे चौदह लोकोंका साम्राज्य भी मिले, तो भी हे प्रियतम ! मैं आपके इस विरह पर अपने आपको समर्पित कर दूँ.

आंधी आई विरह की, तिन दियो ब्रह्मांड उडाए ।
विरहिन गिरी सो उठ ना सकी, मूल अंकूर रही भराए ॥ ६

विरहिणीके सामने प्रियतम धनीके विरहकी आँधी आई है. उसने समस्त संसारको तिनकेके समान उड़ा दिया है. विरहिणीके मनमें प्रियतमके सम्बन्धका मूल अंकुर भरा हुआ है, इसलिए वह कुछ इस प्रकारसे गिरी कि फिर उठ ही न सकी.

विरहा सागर होए रह्या, बीच मीन विरहनी नार ।
दौडत हूं निसवासर, कहूं बेट ना पांऊं पार ॥ ७

प्रियतमका विरह सागरके समान हो गया है जिसमें विरहिणी आत्मा मछली

बनकर तैर रही है. ऐसे समयमें मैं रातदिन इधर-उधर दौड़ लगाती फिर रही हूँ फिर भी न कोई आश्रयस्थान मिलता है और न ही किनारा मिलता है.

प्रकरण ६ चौपाई १३७

राग सोख मलार

इसक बडा रे सबन में, ना कोई इसक समान ।
एक तेरे इसक बिना, उड गई सब जहान ॥ १

पूरी दुनियाँमें प्रेम सबसे बड़ी वस्तु है. परमात्माके प्रेमसे अधिक मूल्यवान कोई भी वस्तु नहीं है. हे धनी ! एक आपके प्रेमके बिना यह दुनियाँ उड़ (अस्तित्व रहित हो) गई है.

चौदे तबक हिसाब में, हिसाब निरंजन सुन ।
न्यारा इसक हिसाब थें, जिन देख्या पीउ वतन ॥ २

चौदह लोकोंका मूल्याङ्कन होता है. शून्य, निराकार, निरञ्जन तककी भी गणना हो सकती है. किन्तु जिस प्रेमके द्वारा आत्माने पियाका मूल घर परमधाम देख लिया है, वह प्रेम मूल्याङ्कनसे सर्वदा परे है.

लोक अलोक हिसाब में, हिसाब जो हद बेहद ।
न्यारा इसक जो पीउका, जिन किया आद लों रद ॥ ३

लोक (चौदह लोक), अलोक (शून्य, निराकार, निरञ्जनादि) का तथा हदसे बेहद भूमि तकका मूल्याङ्कन हो सकता है किन्तु परब्रह्म परमात्माका प्रेम इन सबसे न्यारा है, जिसने इस दुनियाँको आरम्भसे ही अस्तित्वहीन (रद्द) बना दिया है.

एक अनेक हिसाब में, और निराकार निरगुन ।
न्यारा इसक हिसाब थें, जो कछू ना देखे तुम बिन ॥ ४

इस ब्रह्माण्डमें एक अर्थात् भगवान आदिनारायण (क्षरब्रह्म) एवं अनेक अर्थात् सँसार तथा निराकार निर्गुण आदिका भी मूल्याङ्कन होता है. हे प्रियतम धनी ! आपका प्रेम तो इन सबसे भिन्न है. इसीलिए विरहिणी आत्मा आपके

अतिरिक्त अन्य किसीको देख नहीं पाती है.

और इसक कोई जिन कथो, इसकें ना पोहोंच्या कोए ।
इसक तहां जाए पोहोंचिया, जहां सुंन सबद ना होए ॥ ५

वस्तुतः प्रेमका वर्णन नहीं करना चाहिए क्योंकि कोई भी शब्द उस तक नहीं पहुँच पाते. प्रेम तो वहाँ तक जा पहुँचता है जहाँ शून्य और शब्द दोनों नहीं पहुँच सकते.

नाहीं कथनी इसक की, और कोई कथियो जिन ।
इसक तो आगे चल गया, सबद समाना सुंन ॥ ६

प्रेमका वर्णन नहीं हो सकता और कोई भी इसका वर्णन न करे, क्योंकि ये सारे शब्द तो निराकारमें ही विलीन हो जाते हैं, और प्रेम तो उससे भी आगे बढ़कर परमधाम तक पहुँच जाता है.

सबद जो सूका अंग में, हले नहीं हाथ पाए ।
इसक बेसुध ना करे, रही अंदर विलखाए ॥ ७

प्रेमिकाके शब्द उसके अङ्ग (कण्ठ) पर ही सूख जाते हैं. उसके हाथ-पैर हिलने भी बन्द हो जाते हैं. यह प्रेम विरहिणीको बेसुध भी नहीं होने देता, वह तो दिन-रात अन्दर ही अन्दर व्याकुल बनाता है.

पापन पल ना लेवहीं, दसों दिस नैन फिराऊं ।
देह बिना दौडूं अंदर, पिया कित मिलसी कहां जाऊं ॥ ८

प्रेमीकी आँखोंकी पलकें भी नहीं झपकतीं हैं. वह धनीको निहारनेके लिए दसों दिशाओंमें आँखें दौड़ाती है. प्रेमकी मस्तीमें वह बिना शरीरके भी अन्दर ही अन्दर दौड़ लगाती है कि प्रियतम धनी कहाँ मिलेंगे और मैं उनको ढूँढने भी कहाँ जाऊँ ?

इसक को ए लछन, जो नैनों पलक ना ले ।
दौडें फिरें ना मिल सके, अंदर नजर पिया में दे ॥ ९

प्रेमके ये ही लक्षण हैं कि प्रियतमके दर्शनके लिए आँखें पलक तक नहीं झपकतीं हैं. बाहर दौड़ लगानेसे परमात्माकी प्राप्ति नहीं हो सकती, इसलिए

वह अपनी अन्तर्दृष्टिको प्रियतमके ध्यानमें लगा देती है.

नजरों निमख ना छूटहीं, तो नहीं लागत पल ।
अन्दर तो न्यारा नहीं, पर जाए न दाह बिना मिल ॥ १०

प्रियतमाके लिए परमात्मा उसकी दृष्टिसे एक क्षणके लिए भी दूर नहीं होते, इसलिए उसकी पलकें बन्द नहीं होती. वस्तुतः आत्मासे तो परमात्मा दूर नहीं हैं, किन्तु इसी शरीरसे प्रत्यक्षरूपसे मिले बिना अन्तरकी दाह नहीं मिटती.

जो दुख तुम हीं बिछुरे, मोहे लाग्यो तासों प्यार ।
एता सुख तेरे विरह में, तो कौन सुख होसी विहार ॥ ११

हे प्रियतम धनी ! आपके वियोगमें जो दुःख प्राप्त हुआ अब तो उसीसे मुझे प्रेम हो गया है. आपके वियोगमें भी इतना सुख है, तो आपके साथ विहार करने पर कितना आनन्द होगा ?

प्रकरण ७ चौपाई १४८

राग श्री धन्या काफी

सनमंध मूल को, मैं तो पाव पल छोड्यो न जाए ।
अब छल बल मोहे कहा करे, मोह आद थें दियो उडाए ॥ १

अपना मूल सम्बन्ध परमधामका होनेके कारण अपने प्राणवल्लभ परमात्माको क्षण भरके लिए भी मुझसे छोड़ा नहीं जा सकता. अब यह छलवती माया मेरा क्या बिगाड़ सकती है ? जबकि सद्गुरु धनीने मेरे मनसे सांसारिक मोह-ममताको मूलसे ही उड़ा दिया है.

दरद जो तेरे दुलहा, कर डारयो सब नास ।
पर आस ना छोडे जीव को, करने तुम विलास ॥ २

हे मेरे प्यारे धनी ! आपके विरहकी पीड़ाने मेरा सब कुछ नष्ट कर दिया है, फिर भी आपके साथ प्रत्यक्ष मिलकर अलौकिक आनन्द-विलास प्राप्त करनेकी आशामें जीवने नश्वर शरीरको धारण कर रखा है.

विरहा ना छोडे जीव को, जीव आस भी पिउ मिलन ।
पिया संग इन अंगे करूं, तो मैं सोहागिन ॥ ३

हे मेरे प्रियतम धनी ! आपका विरह मेरे जीवको नहीं छोड़ता है और जीव भी प्रियतमसे मिलनेकी आशामें शरीरसे जुड़ा हुआ है. इसी देहसे प्रिय-मिलनका सुख पानेका गौरव प्राप्त कर सकूँ, तभी मैं सुहागिनी आत्मा कहलाऊँगी.

लागी लडाई आप में, एक विरहा दूजी आस ।
ए भी विरहा पिउ का, आस भी पिउ विलास ॥ ४

प्रियतमका विरह और जीवकी प्रियमिलनकी आशा, इन दोनोंमें परस्पर लड़ाई-सी ठनी हुई है (इधर प्रिय विरहमें प्राण निकलना चाहते हैं और उधर सशरीर पिया मिलनकी आशा लगी हुई है). वैसे तो विरह भी प्रियतमका दिया हुआ है और आशा भी प्रियमिलनकी ही है.

मैं कहावत हों सोहागनी, जो विरहा ना देऊं जीउ ।
तो पीछे वतन जाए के, क्यों देखाऊं मुख पीउ ॥ ५

मैं तो प्रियतम धनीकी सुहागिन कहलाती हूँ. यदि मैं अपने जीवको धनीके विरह पर समर्पित न करूँ तो परमधाममें जाकर श्रीराजजीको कैसे अपना मुख दिखा पाऊँगी ?

जो जीव देते सकुचों, तो क्यों रहे मेरा धरम ।
विरहा आगे कहा जीव, ए केहेत लगत मोहे सरम ॥ ६

धनीके विरहमें यदि अपने जीवको समर्पित करनेमें मुझे संकोच हुआ तो मेरा अनन्य भाव (पतिव्रता धर्म) कैसे रहेगा ? वस्तुतः विरहके समक्ष जीवका कोई अस्तित्व ही नहीं है. फिर भी जीवको समर्पित करनेकी बात कहते हुए मुझे लज्जा होती है.

माया काया जीवसों, भान भून टूक कर ।
विरहा तेरा जिन दिसा, मैं वारूं तिन दिस पर ॥ ७

इस जीवके साथ मायावी शरीर जुड़ा हुआ है, उसको टुकड़े-टुकड़े कर

आपके विरहकी दिशामें समर्पित कर दूँ.

जब आहें सूकी अंग में, सांस भी छोड्यो संग ।
तब तुम परदा टालके, दियो मोहे अपनों अंग ॥ ८

हे धनी ! आपके विरहमें जब मेरी आहें मेरे होंठोंमें ही सूख गईं और श्वास लेना भी कठिन हो गया, तब आपने मायाका पर्दा दूर कर मुझे अपना आवेश प्रदान किया.

मैं तो अपना दे रही, पर तुम ही राख्यो जीउ ।
बल दे आप खडी करी, कारज अपने पीउ ॥ ९

मैंने तो अपने आपको आपके ऊपर (नवतनपुरीमें केवल दो पैसे भर अनाज पर रहकर) समर्पित कर दिया था. किन्तु हे धनी ! आपने अपने जागनी कार्यके लिए ही मुझे आत्म-बल प्रदान कर खड़ा रखा.

जीवरा भी मेरा रख्या, तुम कारज भी कारन ।
आस भी पूरी सोहागनी, और बृध भी राख्यो विरहिन ॥ १०

आपने अपने कार्य (ब्रह्माङ्गनाओंको जगाने) के लिए मेरे प्राणोंको भी बचाए रखा और मुझ सुहागिनीकी प्रत्यक्ष धनी मिलनकी आशा भी पूरी कर दी और मेरा आग्रह भी पूर्ण कर दिया.

तुम आए सब आइयां, दुख गया सब दूर ।
कहे महामत ए सुख क्यों कहूं, जो उदया मूल अंकूर ॥ ११

मेरे हृदयमन्दिरमें आपके पधारने पर मुझे सब कुछ प्राप्त हो गया. अब तो वियोगका दुःख भी दूर चला गया. महामति कहते हैं, मैं इस आनन्दका वर्णन कैसे करूँ जिसके कारण हृदयमें मेरा मूल अंकुर (परमधामका मूल सम्बन्ध) उदय हुआ है.

एह बात मैं तो कहूं, जो केहेने की होए ।
पर ए खसमें रीझ के, दया करी अति मोहे ॥ १

परब्रह्म परमात्माके मिलनकी बात यदि इन सीमित शब्दों द्वारा कहने योग्य होती तो मैं अवश्य कहता परन्तु सद्गुरु प्रसन्न होकर दया पूर्वक यह सब कहलवा रहे हैं.

सुनियो बानी सोहागनी, दीदार दिया पिया जब ।
अंदर परदा उड गया, हुआ उजाला सब ॥ २

हे सुहागिनी ब्रह्मात्माओ ! यह बात ध्यान पूर्वक सुनो. जब मुझे धनीने दर्शन दिए तबसे मेरे हृदयसे अज्ञानका पर्दा हट गया और हृदयमें ज्ञानका प्रकाश छा गया.

पिया जो पार के पार हैं, तिन खुद खोले द्वार ।
पार दरवाजे तब देखे, जब खोल देखाया पार ॥ ३

जो अक्षरसे भी परे अक्षरातीत परमात्मा हैं उन्होंने ही स्वयं आकर परमधामके द्वार खोल दिए. पारके द्वार मुझे तब प्रत्यक्ष हुए जब उन्होंने इस प्रकार खोलकर दिखाए.

कर पकर बैठाए के, आवेस दियो मोहे अंग ।
ता दिन थें पसरी दया, पल पल चढते रंग ॥ ४

मेरे सद्गुरु धनीने मेरा हाथ पकड़ कर मुझे अपने पास बैठाया और अपना आवेश प्रदान किया. उस दिनसे उनकी अनुकम्पा दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी और पल-पल प्रेमका रङ्ग चढ़ता गया.

हुई पेहेचान पीउसों, तब कह्यो महामति नाम ।
अब मैं हुई जाहेर, देख्या वतन श्री धाम ॥ ५

जब मेरी पहचान सद्गुरु धनीसे हुई तब उन्होंने मुझे महामतिकी संज्ञा प्रदान

की. अब मैं अपने धनीकी अङ्गनाके रूपमें प्रकट हो गई और मुझे अखण्ड परमधामका साक्षात्कार भी हो गया.

बात कही सब वतन की, सो निरखे मैं निसान ।
प्रकास पूरन द्रढ हुआ, उड गया उनमान ॥ ६

मेरे सद्गुरुने मुझे परमधामकी सारी बातें बताईं. मैंने वहाँके एक-एक चिह्न (निशान) को देखा. तारतम ज्ञानका पूर्ण प्रकाश हृदयमें उतर आनेसे ब्रह्म विषयक सभी कल्पनाएँ उड़ गईं.

आपा मैं पेहेचानिया, सनमंध हुआ सत ।
ए मेहेर कही न जावहीं, सब सुध परी उतपत ॥ ७

तब मैंने स्वयंको पहचाना और परब्रह्म परमात्माके साथका मेरा सम्बन्ध भी सत्य सिद्ध हुआ. सद्गुरुकी इस कृपाका वर्णन किया नहीं जा सकता. उनकी कृपासे ही मुझे सृष्टिकी उत्पत्तिकी सभी सुधि हुई है.

मुझे जगाई जुगतसों, सुख दियो अंग आप ।
कंठ लगाई कंठसों, या विध कियो मिलाप ॥ ८

मेरे धनीने अपना आवेश देकर मुझे युक्तिपूर्वक जागृत किया और अखण्ड सुख दिया. मुझे गले लगाकर (मेरे हृदयमें आकर) वे मुझमें एकरूप हो गए.

खासी जान खेडी जिमी, जल सींचिया खसम ।
बोया बीज वतन का, सो ऊग्या वाही रसम ॥ ९

मेरे हृदयरूपी धरतीको उर्वरा जानकर उन्होंने उस पर ज्ञानरूपी हल चलाया और उसमें प्रेमका जल सींचकर परमधामका तारतम ज्ञानरूपी बीज बो दिया, जो अपनी गरिमाके अनुरूप उगने लगा.

बीज आतम संग निज बुध के, सो ले उठिया अंकूर ।
या जुबां इन अंकूर को, क्यों कर कहूं सो नूर ॥ १०

वह तारतम ज्ञानरूपी बीज मेरा आत्म-बल और अक्षरब्रह्मकी बुद्धिका संग

पाकर परमधामके मूल सम्बन्धके रूपमें अंकुरित हुआ. अब मैं अपनी इस नश्वर जिह्वासे उस अंकुर (सम्बन्ध) एवं दिव्य प्रकाशका वर्णन कैसे करूँ ?

ना तो ए बात जो गुझ की, सो क्यों होवे जाहेर ।
सोहागिन प्यारी मुझ को, सो कर ना सकूं अंतर ॥ ११

अन्यथा ये सब रहस्यमयी (गुह्य) बातें कैसे प्रकट की जा सकतीं हैं ? किन्तु परब्रह्म परमात्माकी सुहागिनी आत्माएँ मुझे अति प्रिय हैं, इसलिए मैं उनसे किसी भी प्रकारका अन्तर नहीं रख सकता.

नेक कहूं या नूर की, कछुक इसारत अब ।
पीछे तो जाहेर होएसी, तब दुनी देखसी सब ॥ १२

इसलिए अब मैं इस तारतम ज्ञानके प्रकाशका सङ्केत मात्र वर्णन करता हूँ. बादमें तो यह सब ओर फैल जाएगा तब सारी दुनियाँ इस प्रकाशको देखेगी.

ए जो विरहा वीतक मैं कही, पिया मिले जिन सूल ।
अब फेर कहूं प्रकास थें, जासों पाइए माएने मूल ॥ १३

अभी तक मैंने इस प्रकार सद्गुरुके विरहपूर्वक खोजकी बात तथा उन्हें हुए श्रीकृष्णके साक्षात्कारका वृत्तान्त कहा. अब मैं पुनः सद्गुरु द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके प्रकाशसे कहता हूँ, जिससे मूल अर्थ (परमधामका सम्बन्ध) स्पष्ट हो जाएँगे.

ए विरहा लछन मैं कहे, पर नाहीं विरहा ताए ।
या विध विरह उदम की, जो कोई किया चाहे ॥ १४

मैंने इस प्रकार विरहके लक्षण बता दिए. उन्हें विरहिणीके सम्पूर्ण लक्षण मत समझ लेना. प्रिय मिलनकी चाहसे जो विरहमें निमग्न होना चाहते हैं उनके लिए करने योग्य प्रयत्नोंका ही यहाँ निदर्शन हुआ है.

विरहा सुनते पीउ का, आहि ना उड गई जिन ।
ताए वतन सैयां यों कहें, नाहिन ए विरहिन ॥ १५

अपने प्रियतम धनीका वियोग सुनते ही जिस विरहिणीके प्राण न निकल

जाएँ, उसके लिए परमधामकी आत्माएँ यही कहेंगी कि यह तो सच्ची विरहिणी नहीं है.

जो होवे आपे विरहनी, सो क्यों कहे विरहा सुध ।
सुन विरहा जीव ना रहे, तो विरहिन कहां थे बुध ॥ १६

जो स्वयं विरहिणी (विरहसे व्याकुल) होती है, उसमें विरहका वर्णन करनेकी सुधि ही कहाँ रहती है ? अपने प्रियतमके विरहकी बात सुनते ही उसके प्राण निकल जाते हैं, तो फिर उसमें कुछ कहनेकी बुद्धि ही कहाँ रहेगी ?

पतंग कहे पतंग को, कहां रह्या तूं सोए ।
मैं देख्या है दीपक, चल देखाऊं तोए ॥ १७

यदि कोई पतङ्गा दूसरे पतङ्गेसे जाकर यह कहने लगे, अरे ! तू कहाँ सो रहा था. मैं तो दीपक देखकर आया हूँ. चल, तुझे भी उसके दर्शन कराऊँ.

के तो ओ दीपक नहीं, या तूं पतंग नाहे ।
पतंग कहिए तिनको, जो दीपक देख झंपाए ॥ १८

तब दूसरा पतङ्गा कहता है, तुमने जो देखा है या तो वह दीपक नहीं है या फिर तू पतङ्गा नहीं है. पतङ्गा तो उसे कहा जाता है जो दीपकको देखते ही तत्क्षण झपट पड़े और जल मरे.

पतंग और पतंग को, जो सुध दीपक दे ।
तो होवे हांसी तिन पर, कहे नाहीं पतंग ए ॥ १९

जो पतङ्गा दीपक देखकर दूसरे पतङ्गेको उसकी सुधि देने लगे तो उस पर अवश्य हँसी होगी. सब यही कहेंगे कि यह तो पतङ्गा ही नहीं है.

दीपक देख पीछा फिरे, साबित राखे अंग ।
आए देवे सुध और को, सो क्यों कहिए पतंग ॥ २०

जो दीपककी ज्योतिको देखकर भी अपनी देहको यथावत् रखता हुआ लौट आए एवं दूसरोंसे उस दीपककी चर्चा करने लगे तो उसे पतङ्गा कैसे कहा जाए ?

जब मैं हुती विरह में, तब क्यों मुख बोल्यो जाए ।
पर ए बचन तो तब कहे, जब लई पिया उठाए ॥ २१

जब तक मुझे धनीका विरह था तब तक मुखसे कोई भी शब्द कैसे निकल सकते ? किन्तु ये वचन तो मैंने तब कहे, जब मेरे सद्‌गुरु धनीने अपना आवेश देकर मुझे विरहसे उबार लिया.

ज्यों ए विरहा उपज्या, ए नहीं हमारा धरम ।
विरहिन कबहूं ना करे, यों विरहा अनूकरम ॥ २२

यह विरह जिस प्रकार उत्पन्न हुआ है यह हमारे धर्मके अनुकूल नहीं है. विरहिणी आत्माको कभी भी इस प्रकार अनुक्रम पूर्वक (क्रमशः) विरह उत्पन्न नहीं होता.

विरहा नहीं ब्रह्मांड में, बिना सोहागिन नार ।
सोहागिन अंग पीउ की, वतन पार के पार ॥ २३

वास्तवमें सुहागिनी आत्माओंके अतिरिक्त इस संसारमें अन्य किसीको भी विरह नहीं हो सकता क्योंकि सुहागिनी आत्माएँ ही परब्रह्म परमात्माकी अङ्गनाएँ हैं. उनका घर क्षर, अक्षरसे भी परे अक्षरातीत परमधाम है.

अब नेक कहूं अंकूर की, जाए कहिए सोहागिन ।
सो विरहिन ब्रह्मांड में, हुती ना एते दिन ॥ २४

अब मैं थोड़ी-सी बात परमधामका मूल अंकुर धारण करनेवाली आत्माओंके विषयमें कहूँ, जो परब्रह्म परमात्माकी सुहागिनी कहलातीं हैं. ये विरहिणी आत्माएँ इस ब्रह्माण्डमें आज तक नहीं आई थीं.

सोई सोहागिन आइयां, पिया की विरहिन ।
अंतरगत पिया पकडी, ना तो रहे ना तन ॥ २५

परब्रह्म परमात्माकी वही सुहागिनी आत्माएँ उनका विरह लेकर इस जागनीके ब्रह्माण्डमें आई हैं. उनके हृदयमें विराजकर प्रियतम परमात्माने उन्हें पूर्ण सहारा दिया है अन्यथा उनका शरीर ही नहीं रह पाता.

ए सुध पिया मुझे दई, अन्दर कियो प्रकास ।
तो ए जाहेर होत है, गयो तिमर सब नास ॥ २६

सद्गुरु धनीने तारतम ज्ञानके प्रकाशसे मेरे हृदयको आलोकित कर मुझे इस प्रकारकी सुधि दी. इसलिए यह अखण्ड सुख प्रकट हो रहा है और अज्ञानरूपी अन्धकारका नाश हो गया है.

प्यारी पिया सोहागनी, सो जुबां कही न जाए ।
पर हुआ जो मुझे हुकम, सो कैसे कर ढंपाए ॥ २७

सुहागिनी आत्माएँ परब्रह्मको कितनी प्यारी हैं, उसका वर्णन इस जिह्वासे नहीं हो सकता, किन्तु मेरे धनीने मुझे ब्रह्मात्माओंको जागृत करनेका जो आदेश दिया है अब वह कैसे ढका रह सकता है ?

अनेक करहीं बंदगी, अनेक विरहा लेत ।
पर ए सुख तिन सुपने नहीं, जो हमको जगाए के देत ॥ २८

इस जगतमें बहुत-से साधक उपासनाएँ करते हैं और बहुत-से विरह भी करते हैं. परन्तु ब्रह्मानन्दका यह अलौकिक सुख उन्हें स्वप्नमें भी अप्राप्य है, जिसे हमारे सद्गुरु हम ब्रह्मसृष्टियोंको जागृत कर दे रहे हैं.

छलथें मोहे छुडाए के, कछू दियो विरहा संग ।
सो भी विरहा छुडाइया, देकर अपनों अंग ॥ २९

इस छलरूपी संसारके मोहसे छुड़ाकर मेरे सद्गुरु धनीने मुझे विरहका थोड़ा-सा अनुभव करवाया. फिर विरहके पश्चात् अपना आवेश देकर तथा मेरे हृदय मन्दिरमें स्वयं विराजमान होकर इस विरहसे भी मुक्त कर दिया.

अंग बुध आवेस देए के, कहे तूं प्यारी मुझ ।
देने सुख सबन को, हुकम करत हों तुझ ॥ ३०

उन्होंने अपना आवेश (अङ्ग), तथा जागृत बुद्धि (तारतमज्ञान) देकर मुझे यह कहा कि तुम मेरी प्यारी अङ्गना हो. सब ब्रह्मात्माओंको सुख पहुँचानेके लिए मैं तुझे आदेश देता हूँ.

दुख पावत हैं सोहागनी, सो हम सह्यो न जाए ।
हम भी होसी जाहेर, पर तूं सोहागनियां जगाए ॥ ३१

सुहागिनी आत्माएँ दु:ख पा रहीं हैं उनका वह दु:ख मुझसे सहा नहीं जाता. मैं स्वयं भी तुम्हारे अन्तरमें प्रकट हो जाऊँगा, परन्तु तुम ब्रह्मात्माओंको जागृत करना.

सिर ले आप खडी रहो, कहे तूं सब सैयन ।
प्रकास होसी तुझ से, द्रढ कर देखो मन ॥ ३२

मेरे आदेशको शिरोधार्य कर सब ब्रह्मसृष्टियोंको जाग्रत करनेके लिए तुम खड़े हो जाओ. तुमसे ही तारतम ज्ञानका प्रकाश पूरे ब्रह्माण्डमें फैलेगा, इस बातको अपने मनमें दृढ़ता पूर्वक धारण करो.

तोसों ना कछू अन्तर, तूं है सोहागिन नार ।
सत सबद के माएने, तूं खोलसी पार द्वार ॥ ३३

इसलिए मैंने तुमसे कोई अन्तर नहीं रखा है. तुम तो सुहागिनी अङ्गना हो. धर्मग्रन्थोंके सत्य वचनोंका गूढ़ार्थ खोलकर तुम ही सबको अखण्ड परमधामकी पहचान करा सकोगे.

जो कदी जाहेर ना हुई, सो तुझे होसी सुध ।
अब थें आद अनाद लों, जाहेर होसी निज बुध ॥ ३४

जो रहस्यमय ज्ञान आज तक प्रकट नहीं हुआ है, उसकी भी सुधि तुम्हें होगी. अबसे अक्षरब्रह्मकी जागृत बुद्धि और तारतम ज्ञानके द्वारा आदि अनादि (क्षर ब्रह्माण्डसे लेकर अक्षर अक्षरातीत तक) का ज्ञान तुमसे प्रकट होगा.

ए बातें सब सूझसी, काहूं अटके नहीं निरधार ।
हुकम कारन कारज, पार के पारै पार ॥ ३५

इन सभी रहस्योंकी सूझ तुम्हें होगी. निश्चय ही तुम्हें कहीं अटकना (रुकना) नहीं पड़ेगा. परब्रह्म परमात्माके आदेशसे ही संसारकी सृष्टिका कारण (प्रेम सम्वाद) और कार्य (सृष्टि रचना) दोनों बने हैं. बेहदसे परे अक्षर और उससे परे अक्षरातीत परमधामका ज्ञान तुम्हें ही सुलभ हुआ है.

चौदे तबक एक होएसी, सब हुकम के परताप ।
ए सोभा होसी तुझे सोहागनी, जिन जुदी जाने आप ॥ ३६

परब्रह्मकी आज्ञाके प्रतापसे चौदहलोकोंके प्राणी एकरूप हो जाएँगे अर्थात् सबको अखण्ड मुक्ति मिलेगी. हे सुहागिनी (इन्द्रावती) ! इसकी सम्पूर्ण शोभा तुझे मिलेगी. तुम स्वयंको मुझसे भिन्न मत समझना.

जो कोई सबद संसार में, अरथ ना लिए किन कब ।
सो सब खातर सोहागनी, तूं अरथ करसी अब ॥ ३७

संसारमें जितने भी धर्मग्रन्थ हैं उनका गूढ़ार्थ आज तक किसीने ग्रहण नहीं किया. सब ब्रह्मात्माओंके लिए तुम उनका रहस्य स्पष्ट करोगे.

तूं देख दिल विचार के, उड जासी सब असत ।
सारों के सुख कारने, तूं जाहेर हुई महामत ॥ ३८

तुम अपने दिलमें विचार कर देखो, अब तुम्हारे द्वारा दुनियाँका समस्त अज्ञान (असत् भाव) नष्ट हो जाएगा. सबको अलौकिक सुख देनेके लिए ही तुम महामतिके रूपमें प्रकट हुई हो.

पेहेले सुख सोहागनी, पीछे सुख संसार ।
एक रस सब होएसी, घर घर सुख अपार ॥ ३९

सबसे पहले ब्रह्मात्माओंको सुख प्राप्त होगा फिर सारे संसारमें यह वितरित होगा. जब पूरी दुनियाँ एकरस हो जाएगी, तब घर-घरमें अपार सुख होगा.

ए खेल किया जिन खातर, सो तूं कहियो सोहागिन ।
पेहेले खेल देखाए के, पीछे मूल वतन ॥ ४०

यह खेल जिन ब्रह्मात्माओंके लिए बनाया है, उन्हें तुम कहना कि पहले उन्हें मायाके खेल दिखाकर फिर मूल घर परमधाममें जागृत किया जाएगा.

अंतर सैयों से जिन करो, जो सैयां हैं इन घर ।
पीछे चौदे तबक में, जाहेर होसी आखर ॥ ४१

परमधामकी ब्रह्मात्माओंके साथ किसी भी प्रकारका अन्तर मत करना. पश्चात् अन्तिम समयमें तो यह ज्ञान समस्त संसारमें फैल जाएगा.

तें कहे बचन मुखथें, होसी तिनथें प्रकास ।
असत उडसी तूल ज्यों, जासी तिमर सब नास ॥ ४२

तुम्हारे मुखसे निःसृत तारतम ज्ञानके वचनोंके द्वारा संसारमें ज्ञानका प्रकाश फैल जाएगा. जिससे असत्य वस्तु (अज्ञान) रूईके रेशेकी भाँति उड़ जाएगी और अज्ञानरूप अन्धकार भी मिट जाएगा.

तूं लीजे नीके मायने, तेरे मुख के बोल ।
जो साख देवे तुझे आतमा, तो लीजे सिर कौल ॥ ४३

तुम स्वयं भी अपने मुखसे निःसृत वचनोंके गूढ़ आशयको भली-भाँति आत्मसात् करना. जब तुम्हारी आत्मा इन वचनोंकी साक्षी दे, तभी इन वचनोंको शिरोधार्य कर अपनी (परस्पर जगानेकी) प्रतिज्ञाका अनुपालन करना.

खसम खडा है अंतर, जेती सोहागिन ।
तूं पूछ देख दिल अपना, कर कारज द्रढ मन ॥ ४४

जितनी भी ब्रह्मात्माएँ हैं उन सबके हृदयमें धामधनी विराजमान हैं. इसलिए तू अपनी अन्तरात्मासे पूछकर देख और अपने मनको दृढ़कर जागनीका कार्य कर.

आप खसम अजूं गोप हैं, आगे होत प्रकास ।
उदया सूर छिपे नहीं, गयो तमर सब नास ॥ ४५

आत्मा (आप) और परमात्मा (खसम) अभी तक प्रत्यक्ष नहीं हुए हैं. भविष्यमें तारतम ज्ञानके द्वारा उनका प्रत्यक्ष अनुभव हो जाएगा. तारतम ज्ञानरूपी सूर्य उदय हो चुका है, अब यह छिपेगा नहीं इसीसे सारा अन्धकार (अज्ञान) दूर हो जाएगा.

प्रकरण ९ चौपाई २०४

राग श्री

सत असत पटंतरो, जैसे दिन और रात ।
सत सूर सब देखहीं, जब प्रगट भयो प्रभात ॥ १

सत्य और असत्यमें उतना ही अन्तर है जितना दिन और रातमें है. जैसे

प्रभात होने पर सब लोग सूर्यका दर्शन करते हैं, उसी भाँति तारतम ज्ञानके प्रभातमें सबलोग पूर्णब्रह्म परमात्माके दर्शन कर पाएँगे.

जोलों पिउ परदे मिने, विश्व बिगूती तब ।
सो परदा अब खोलिया, एक रस होसी अब ॥ २

अज्ञानके आवरण (परदे) के कारण जब तक परब्रह्म परमात्मा प्रकट नहीं हुए थे तब तक यह दुनियाँ उनके विषयमें उलझी हुई थी. सद्‌गुरुने प्रकट होकर अब वह परदा हटा दिया है जिससे अब सब लोग एकरस होंगे अर्थात् एक ही परमात्माके उपासक बनेंगे.

जोलों जाहेर ना हुते, तब इत उपज्या क्रोध ।
जब प्रगटे तब मिट गया, सब दुनियां को ब्रोध ॥ ३

जब तक पूर्णब्रह्म परमात्माका प्रकाश स्वरूप यह ज्ञान प्रकट नहीं हुआ था तब तक विश्वमें परस्पर वैर-विरोध बढ़ रहा था. जैसे ही यह प्रकट हुआ, तब दुनियाँका सारा वैर-विरोध मिट गया.

ए प्रकास खसम का, सो कैसे कर ढंपाए ।
छल बल वल जो उलटे, सो देवे सब उडाए ॥ ४

परमात्माका यह प्रकाश कैसे छिपा रह सकता है ? उसने तो मायाके उलटे छल, बल, दाँव-पेंच सबके सब उड़ा दिए.

दुनियां टेढी मूल की, सो पेड से निकालूं बल ।
पिया प्रकास जो छिन में, सीधा करूं मंडल ॥ ५

यह दुनियाँ मूलसे ही उलटी चालवाली है. अब मूलसे ही उसकी वक्रता (टेढ़ेपन) को उखाड़ दूँ. धामधनीके ज्ञान (तारतम ज्ञान) के प्रकाशसे क्षणभरमें ही इस जगतको परमात्माकी ओर उन्मुख कर दूँ.

सत जोत ढांप्या ना रहे, उडाए दियो अंधेर ।
नूर पिया पसरे बिना, क्यों मिटे दुनियां फेर ॥ ६

सत्यवस्तु कभी छिपी नहीं रहती. उसने अज्ञानरूपी अन्धकारको उड़ा दिया

है. धामधनीके प्रकाश स्वरूप तारतम ज्ञानके फैले बिना दुनियाँका जन्म-मरणका चक्र कैसे मिट सकता है ?

अब अंधेर कछू ना रह्या, जाहेर हुआ उजास ।
तबक चौदे खसम का, प्रगट भया प्रकास ॥ ७

अब अज्ञानरूपी अन्धकार कुछ भी शेष नहीं रहा क्योंकि तारतम ज्ञानका प्रकाश उदय हो गया है. धनीका यह प्रकाश चौदह लोकोंमें फैल गया है.

जोलों तिमर ना उडे, तोलों सृष्ट ना होवे एक ।
तिमर तीनों लोक का, उडाए दिया उठ देख ॥ ८

जब तक अज्ञानका अन्धकार नहीं मिटेगा तब तक यह सृष्टि एक रस (एक ब्रह्मोपासक) नहीं होगी. अब जागृत होकर देखो, इस तारतम ज्ञानने तीनों लोकोंका अन्धकार उड़ा दिया है.

ए प्रकास है अति बडा, सो राखत हों अजूं गोप ।
जिन कोई ना सेहे सके, ताथें हलके करूं उद्योत ॥ ९

यह तारतमका प्रकाश अति उज्ज्वल है. इसीलिए इसे अभी भी गुप्त रख रहा हूँ. सांसारिक जीव इसे एकाएक सहन (समझ) नहीं कर सकते, इसलिए इसे क्रमशः (धीरे-धीरे) प्रकट करता हूँ.

ए जो सबद खसम के, जिन तुम समझो और ।
आद करके अबलों, किन कह्या ना पिया ठौर ॥ १०

धामधनीके ये वचन हैं इन्हें अन्यथा मत समझना, क्योंकि आदिकालसे लेकर अब तक किसीने भी ब्रह्म धामको प्रकट नहीं किया है.

ए अकथ केहेनी खसम की, काहूं ना कथियल कोए ।
जो किनका कथियल कहूं, तो पिया वतन सुध क्यों होए ॥ ११

परमात्माकी यह अकथ कहानी (गूढ़ बातें) अभी तक किसीने भी नहीं कही है. किसीकी कही हुई बातें ही मैं भी कहूँ तो ब्रह्मधामकी सुधि कैसे होगी ?

केतेक ठोरों सोहागनी, तिन सब ठोरों उजास ।
पर जब इत थें जोत पसरी, तब ओ ले उठसी प्रकास ॥ १२

ब्रह्मात्माएँ जहाँ कहीं भी हैं उन सब स्थानोंमें ज्ञानका प्रकाश है. परन्तु जैसे ही यहाँ (मेरे) से तारतम ज्ञानकी किरणें फैलने लगीं तब वे इस प्रकाशको ग्रहण कर जागृत हो जाएँगी.

कोई दिन राखत हों गुझ, सो भी सैयों के सुख काज ।
जब सैयां सबे मिलीं, तब रहे ना पकरयो अवाज ॥ १३

इस ब्रह्मज्ञानको कुछ दिनों तक गुप्त रखा तो वह भी ब्रह्म आत्माओंके सुखके लिए ही था. जब सब ब्रह्मात्माएँ एकत्रित होंगी तब इसकी गर्जना (आवाज) रोकी नहीं जा सकेगी.

क्यों रहे प्रकास पकरयो, एह जोत अति जोर ।
जब सब उजाला इत आइया, तब गई रैन भयो भोर ॥ १४

यह ज्ञानकी ज्योति अति प्रखर है, इसलिए वह कैसे रोकी जा सकती है ? जब इसका प्रकाश जागनीके ब्रह्माण्डमें फैल गया, तब अज्ञान रूपी अन्धकार मिटकर ब्रह्मज्ञानका प्रभात हो गया.

मैं अबला अरधांग हों, पिउ की प्यारी नार ।
सब जगाऊं सोहागनी, तब मुझे होए करार ॥ १५

मैं प्रियतम धनीकी प्यारी अर्धाङ्गिनी हूँ. जब मैं सभी सुहागिनी आत्माओंको जगा दूँगी, तभी मुझे शान्ति मिलेगी.

सैयों को वतन देखावने, उलसत मेरे अंग ।
करने बात खसम की, मावत नहीं उमंग ॥ १६

सुन्दरसाथको परमधामके दर्शन करानेके लिए मेरा हृदय उत्कण्ठित हो रहा है. परमधामकी चर्चा करनेके लिए मेरा उमङ्ग अङ्गोंमें समा नहीं रहा है.

नए नए रंग सोहागनी, आवत हैं सिरदार ।
खेल जो होसी जागनी, नाहीं इन सुख को पार ॥ १७

सभी शिरोमणि सुहागिनी आत्माएँ नए-नए उमङ्ग लेकर आ रहीं हैं. जब जागनी रास होगा तब उस सुखका कोई पारावार नहीं होगा.

जो पिउ प्यारी आवत, ताको गुझ राखों उजास ।
बाट देखों और सैयन की, सब मिल होसी विलास ॥ १८

धनीकी प्यारी अङ्गनाएँ जो जागृत हो रहीं हैं उनसे भी यह उमङ्ग छिपाए रख रही हूँ. मैं और आत्माओंकी राह देख रही हूँ क्योंकि सबके मिलने पर ही अधिक आनन्द विलास होगा.

ए उजास इन भांत का, जो कबूं निकसी किरन ।
तो पसरसी एक पल में, चारों तरफों सब धरन ॥ १९

तारतम ज्ञानका यह प्रकाश इस प्रकारका है. जब कभी इसकी किरणें फूट निकलेंगीं तब वह पल भरमें धरतीमें चारों ओर फैल जाएँगी.

बात बडी इन खसम की, सो क्यों कर ढापूं अब ।
सुख लेने को या समे, पीछे दुनियां मिलसी सब ॥ २०

धामधनीकी ब्रह्म लीलाकी बातें अति महत्त्वपूर्ण हैं. उन्हें अब कैसे छिपाए रखा जा सकता है ? इसी जागनी लीलामें अखण्ड सुख प्राप्त करना है. बादमें तो पूरी दुनियाँ इस ओर उन्मुख हो जाएगी.

ए प्रकास जो पीउ का, टाले अंदर का फेर ।
याही सबद के सोर से, उड जासी सब अंधेर ॥ २१

पूर्णब्रह्मका यह प्रकाश अन्तरकी सब भ्रान्तियोंको मिटा देगा. इन्हीं शब्दोंकी हुँकारसे अज्ञानरूप सब अन्धकार दूर हो जाएगा.

और बेर अब कछू नहीं, गयो तिमर सब नास ।
होसी सब में आनंद, चौदे तबक प्रकास ॥ २२

अब अधिक विलम्ब नहीं होगा. अब तो अज्ञानरूप अन्धकार दूर हो गया

है. अब चौदह लोकोंमें तारतम ज्ञानका यह प्रकाश फैल जानेसे सभीको अखण्ड आनन्द प्राप्त होगा.

प्रकरण १० चौपाई २२६

सोहागिनियोंके लक्षण

पार वतन जो सोहागनी, ताकी नेक कहूं पेहेचान ।
जो कदी भूली वतन, तो भी नजर तहां निदान ॥ १

अखण्ड परमधामकी सुहागिनी आत्माओंकी थोड़ी-सी पहचान यहाँ बतायी जा रही है. वे कदाच परमधामको भूल भी जाएँ, तो भी उनकी अन्तर्दृष्टि वहीं लगी रहती है.

आसक प्यारी पीउ की, कोई प्रेम कहो विरहिन ।
ताए कोई दरदन कहो, ए लछन सोहागिन ॥ २

परब्रह्म परमात्माके चरणोंमें अनुराग रखने वाली (आशिक) प्यारी आत्माओंको विरहिणी कहें या प्रेमकी प्रतिमूर्ति कहें या उन्हें कोई वियोगिनी (दर्दी) कहें, ये सब सुहागिनीयोंके लक्षण हैं.

रूह खसम की क्यों रहे, आप अपने अंग बिन ।
पर पकरी पिया ने अंतर, ना तो रहे ना तन ॥ ३

परब्रह्म परमात्माकी अङ्गनाएँ (आत्माएँ) अपने अङ्गी (परमात्मा) के बिना कैसे रह पाएँगी ? धामधनीने ही उन्हें अन्तरसे प्रेरणा (सुहाग) देकर खड़ा किया है अन्यथा उनका शरीर टिका नहीं रह सकता.

ऊपर काहूं ना देखावहीं, जो दम ना ले सके खिन ।
सो प्यारी जाने या पिया, या विध अनेक लछन ॥ ४

वे अपनी विरह व्यथाको बाहर प्रकट नहीं करतीं किन्तु अन्दरसे अपने प्रियतम धनीके बिना क्षणमात्रके लिए भी साँस (दम) नहीं ले सकतीं. धनीकी विरह वेदनाको या तो वे स्वयं जानतीं हैं या फिर धामधनी ही जानते हैं. इस प्रकार विरहिणियोंके अनेक लक्षण हैं.

आकीन ना छूटे सोहागनी, जो परे अनेक विघन ।
प्यारी पिउ के कारने, जीव को ना करे जतन ॥ ५

सांसारिक विघ्न-बाधाएँ अनेक आने पर भी सुहागिनियोंका विश्वास अपने धनीके प्रति कम नहीं होता. ऐसी विरहिणी आत्माएँ अपने धनीको पानेके लिए शरीरकी चिन्ता नहीं करतीं हैं.

रेहेवें निरगुण होए के, और आहार भी निरगुन ।
साफ दिल सोहागनी, कबहूं ना दुखावे किन ॥ ६

सुहागिनियोंका रहन-सहन, आहार-विहार सब कुछ निर्गुण (सादगीपूर्ण) होता है. ऐसी निर्मल हृदयवाली सुहागिनियाँ कभी भी किसीके दिलपर चोट नहीं पहुँचातीं हैं.

ओ खोजे अपने आप को, और खोजे अपनों घर ।
और खोजे अपने खसम को, और खोजे दिन आखर ॥ ७

वे स्वयंको पहचाननेके लिए खोज करतीं हैं तथा अपने घर (परमधाम) और अपने धनी (पूर्णब्रह्म परमात्मा) एवं आत्म-जागृतिकी घड़ी (आखरी दिन) की खोजमें रहतीं हैं.

खोज सोहागिन ना थके, जोलों पार के पारै पार ।
नित खोजे चरनी चढे, नए नए करे विचार ॥ ८

जब तक उन्हें क्षर-अक्षरसे परे अक्षरातीतकी प्राप्ति नहीं होती, तब तक वे खोज करनेमें नहीं थकतीं. वे प्रतिदिन खोजती हुई ज्ञानकी सीढियाँ चढ़तीं हैं और नए-नए विचार करतीं हैं.

खोज खोज और खोजहीं, आद के आद अनाद ।
पल पल सबद प्रकास ही, श्रवनों एही स्वाद ॥ ९

खोज करती हुई ये आत्माएँ आदि (संसार) से लेकर अनादि (परमधाम) तककी खोज करती हैं. प्रतिपल अपने धनीके गुणानुवाद सुननेमें ही उन्हें आनन्द (स्वाद) प्राप्त होता है.

सोहागिन तोलों खोज ही, जोलों पाइए पीउ वतन ।
पीउ वतन पाए बिना, विरहा न जाए निसदिन ॥ १०

ये सुहागिनियाँ तब तक खोजती रहतीं हैं जब तक उन्हें धनीधामकी प्राप्ति नहीं होती. परमधामको पाए बिना उनसे रात-दिन विरह नहीं छूटता है.

ओ तो आगे अंदर उजली, छिन छिन होत उजास ।
देह भरोसा ना करे, पिया मिलनकी आस ॥ ११

पहलेसे ही इन आत्माओंका हृदय निर्मल होता है और अपने धनीके स्मरणसे तो वह दिन प्रतिदिन और अधिक प्रकाशित होता है. ऐसी आत्माएँ पिया मिलनकी आशामें अपने शरीरकी चिन्ता (परवाह) नहीं करतीं हैं.

बिचार बिचार बिचारहीं, बेधे सकल संधान ।
रोम रोम ताए भेदहीं, सत सबद के बान ॥ १२

वे विचार करती हुई विचारोंकी गहराई तक पहुँचतीं हैं. अपने पियाके सत्य वचन (शब्द) उनके सन्ध-सन्धको बींधते हुए रोम-रोमको छेद डालते हैं.

पार वतन के सबद, अंगमें जो निकसे फूट ।
गलित गात सब भीगल, पिया सबदें होए टूक टूक ॥ १३

यदि उनके मुखसे परमधाम विषयक शब्दोंका उच्चारण हो जाए, तब उनका शरीर द्रवित हो जाता है. वे अपने धनीके शब्दोंमें अपने आपको समर्पित (टूक-टूक) कर देतीं हैं.

छिन खेले छिनमें हंसे, छिन में गावें गीत ।
छिन रोवें सुध ना रहे, एही सोहागिन की रीत ॥ १४

वे क्षणमें अपने आपको पियाके साथ खेलती हुई अनुभव करतीं हैं तो क्षणमें हँसती हुई अपने धनीके गुणानुवाद गातीं हैं. दूसरे क्षण वे रोती भी हैं, उन्हें किसी भी प्रकारकी सुधि नहीं रहती. वास्तवमें सुहागिनियोंकी रीति ही ऐसी है.

पीउ बातें खेलें हंसें, गीत पिया के गाए ।
रोवें उरझें पीउ की, बातनसों मुरछाए ॥ १५

सुहागिनियाँ अपने पियाकी बातें करती हुई कभी खेलतीं हैं, कभी हँसतीं हैं तो कभी पियाके ही गीत गातीं हैं. प्रियतमके विरहमें कभी रोतीं हैं, विलखतीं हैं तो कभी पियाकी बात कहती हुई मूर्च्छित हो जातीं हैं.

सोहागिन बिरहा ना सहे, जब जाहेर हुए पीउ ।
सोहागिन अंग जो पीउ को, पीउ सोहागिन अंग जीउ ॥ १६

अपने प्रियतम धनीकी पहचान प्राप्त होने पर सुहागिनियाँ उनका वियोग सहन नहीं कर सकतीं. क्योंकि वे प्रियतम धनीकी अङ्गना हैं तथा प्रियतम धनी उनके अङ्ग हैं (इस प्रकार आत्मा और परमात्माका अभेद सम्बन्ध है).

जोलों पीउ सुध ना हुती, तो सोहागिन अंग में पीउ ।
जब पिया जाहेर हुए, तब ले खडी अंग जीउ ॥ १७

जब तक सुहागिनीको अपने धनीकी सुधि नहीं थी तब भी उसके हृदयमें धनीका वास था. जब उसे धनीकी पहचान हुई, तब वह धनीके प्रति समर्पित होनेके लिए तत्पर हुई.

जो होए सैयां सोहागनी, सो निरखो अपने निसान ।
वचन कहे मैं जाहेर, सोहागनियों पेहेचान ॥ १८

जो परमधामकी सुहागिनी आत्माएँ हैं, वे अपने इन लक्षणोंको पहचान लें. मैंने सुहागिनियोंकी पहचानके लक्षण इस प्रकार प्रकट किए हैं.

बोहोत निसानी और हैं, प्रेम सोहागिन गुझ ।
जब सैयां जाहेर हुई, तब होसी सबों सुझ ॥ १९

सुहागिनियोंके प्रेमके और भी ऐसे कई गुह्य लक्षण हैं. जब ब्रह्मात्माएँ ही स्वयं प्रकट हो गईं हैं, तब सभीको इन लक्षणोंकी सुधि होगी.

तुम हो सैयां सोहागनी, ए समझ लीजो दिल बुझ ।
जब सैयां भेली भई, तब होसी बडा गुझ ॥ २०

हे सुन्दरसाथजी ! तुम सुहागिनी आत्माएँ हो, यह बात दिलसे समझ लो. जब सभी ब्रह्मात्माएँ एकत्रित होंगी, तब इन गुह्य बातों पर चर्चा होगी.

ए सबद जो केहेती हों, सो कारन सब सैयन ।
सो सोहागिन ढांपी ना रहे, सुनते एह बचन ॥ २१

मैंने ये वचन सब सुन्दरसाथके लिए कहे हैं. इसलिए इन वचनोंको सुनकर कोई भी सुहागिनी छिपी नहीं रहेगी.

ए सबद सुन सोहागनी, रेहे ना सके एक पल ।
तामें मूल अंकूर को, रेहे ना पकर्‌यो बल ॥ २२

इन वचनोंको सुनकर कोई भी सुहागिनी पलभरके लिए भी अपने धनीसे अलग नहीं रह सकेगी. परमधामके मूल सम्बन्धके कारण उनकी आवेश शक्तिको किसी भी प्रकार पकड़ा नहीं जा सकेगा.

जब खसमकी सुध सुनी, तब रेहे ना सोहागिन ।
ख्वाबी दम भी ना रेहे, तो क्यों रेहे सैयां चेतन ॥ २३

अपने धनीकी सुधि (पहचान) की बात सुनकर सुहागिनियोंसे रहा नहीं जाता. जब दुनियाँके जीव भी प्रियतमकी बात सुनकर नहीं रह सकते, तो ब्रह्मधामकी आत्माएँ अपने धनीके बिना भला कैसे रह सकतीं हैं ?

मैं तुमको चेतन करूं, एही कसोटी तुम ।
या विध सब सैयन का, तसीहा लेवे खसम ॥ २४

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हें सचेत कर रहा हूँ कि यही तुम्हारी कसौटी है. इस प्रकार स्वयं धामधनी सभी ब्रह्मात्माओंकी परीक्षा ले रहे हैं.

जो हुकम सिर लेएके, उठी ना अंग मरोर ।
पिया सैयां सब देखहीं, तुम इसक का जोर ॥ २५

जो आत्मा अपने धनीकी आज्ञा शिरोधार्य कर अङ्गड़ाई लेती हुई नहीं उठती,

उसके प्रेमकी क्षमता स्वयं धामधनी तथा अन्य आत्माएँ देख रहे हैं.

जो सुनके दौडी नहीं, तो हांसी है तिन पर ।
जैसा इसक जिन पें, सो अब होसी जाहेर ॥ २६

जो इन वचनोंको सुनकर भी परमात्माके प्रति उत्सुक नहीं होतीं, उन पर हँसी होगी. जिनके पास जितना प्रेम होगा अब वह सब प्रकट होगा.

जो इसक ले मिलसी, सो लेसी सुख अपार ।
दरद बिना दुख होएसी, सो जानो निरधार ॥ २७

जो प्रेमी बन कर धनीसे मिलेगी, वही अपार सुख प्राप्त करेगी. यह निश्चित समझ लो कि धनीके विरहकी पीड़ा न होने पर अवश्यमेव दुःख होगा.

जो किने गफलत करी, जागी नहीं दिल दे ।
सो इत लोक अलोक को, कछू न लाहा ले ॥ २८

जो कोई आत्मा लापरवाह होकर ध्यानपूर्वक जागी नहीं है, वह यहाँ पर संसार (लोक) तथा परमधाम (अलोक) कहींका भी कोई लाभ नहीं ले सकेगी.

लाहा तो ना लेवहीं, पर सामी हांसी होए ।
अब ए हांसी सोहागनी, जिन कराओ कोए ॥ २९

वह लाभ तो नहीं ले सकी किन्तु उसकी हँसी भी अवश्य होगी. हे सुहागिनी आत्माओ ! अब तुम इस प्रकार अपनी हँसी मत करवाओ.

जिन उपजे सैयन को, इन हांसी का भी दुख ।
ए दुख बुरा सोहागनी, जो याद आवे मिने सुख ॥ ३०

ब्रह्मात्माओंको इस प्रकार हँसीका भी दुःख प्राप्त न हो, इसलिए मैं यह सब कह रहा हूँ. परमधामके अखण्ड सुखोंके बीच इस संसारमें भूल जानेका दुःख यदि याद आ जाए तो यह बहुत बुरा होगा.

ए दुख तो नेहेचे बुरा, मेरी सैयों पें सह्यो न जाए ।
जो कदी हांसी ना करे, पर जिन हिरदे चढ आए ॥ ३१

निश्चय ही यह दुःख बुरा है. यदि यह मेरे सुन्दरसाथके ऊपर आ जाए तो मुझसे यह सहन नहीं होगा. परमधाममें जागृत होने पर श्रीराजजी तुम्हारी हँसी न भी करें, तो भी यह बात तुम्हारे हृदयमें नहीं आनी चाहिए.

जिन जुबां मैं दुख कहूं, सोए करूं सत टूक ।
पर ए दुख जिन तुमें लागहीं, तो मैं करत हों कूक ॥ ३२

जिस जिह्वासे मैं 'तुम्हें दुःख होगा' ऐसा कहता हूँ उसे भी काट कर सौ टुकड़े कर दूँ. किन्तु तुम्हें यह दुःख कदापि स्पर्श न करे इसलिए मैं बार-बार पुकार करता हूँ.

जो दुख मेरी सैयों को, तब सुख कैसा मोहे ।
हम तुम एक वतन के, अपनी रूह नहीं दोए ॥ ३३

यदि मेरे सुन्दरसाथको दुःख होगा तो मुझें कैसे चैन हो सकता है ? क्योंकि हम और तुम एक ही घर-परमधामके हैं. अपनी आत्मा अलग-अलग नहीं है.

भी कहूं मेरी सैयन को, जो हैं मूल अंकूर ।
सो निज वतनी सोहागनी, पिया अंग निज नूर ॥ १

जिनका परमधामसे मूल सम्बन्ध है, उन आत्माओंको मैं फिर कह रही हूँ. वे परमधामकी सुहागिनी आत्माएँ पूर्णब्रह्मकी अङ्गस्वरूपा हैं तथा उनकी ही किरणें हैं.

पार पुरुष पिया एक हैं, दूसरा नाहीं कोए ।
और नार सब माया, यामें भी विध दोए ॥ २

पूर्णब्रह्म परमात्मा स्वयं एक हैं. वस्तुतः उनके अतिरिक्त कोई है ही नहीं. बाकी तो सब माया है. इस मायामें भी दो प्रकारके जीव हैं.

जो रूह असलू ईस्वरी, दूजी रूह सब जहान ।
पर रूह न्यारी सोहागनी, सो आगे कहूंगी पेहेचान ॥ ३

इस संसारमें उच्च कोटिके जीव ईश्वरी सृष्टि मानी जाती है. अन्य दूसरे जीव सब स्वप्नके कहलाते हैं. ब्रह्मात्माएँ इन दोनोंसे भिन्न हैं. उन सबकी पहचान आगे बताएँगे.

सैयां सुख निज वतनी, ईस्वरी को सुख और ।
दुनी भी सुख होसी सदा, आगे कहूंगी तीनों ठौर ॥ ४

परमधामका असली सुख ब्रह्मात्माओंका है. ईश्वरी सृष्टिका सुख उससे भिन्न है. स्वप्नके जीवोंको भी अखण्ड सुख प्राप्त होंगे. इन तीनोंका विवरण आगे देंगे.

ए लछन सैयां अंकूरी, जो होसी इन घर ।
ए बचन वतनी सुनके, आवत हैं ततपर ॥ ५

जो परमधामकी आत्माएँ हैं उनके ये लक्षण हैं कि परमधामकी बात सुनते ही वे धामके मार्ग पर तत्काल आ जातीं हैं.

अटक रह्या साथ आधा, जिनों खेल देखन का प्यार ।
ए किया मूल इन खातर, जो हैं तामसियां नार ॥ ६

व्रज और रासकी लीलाएँ देखनेके बाद भी आधी (तामसी) सखियोंके मनमें सांसारिक खेल देखनेकी इच्छा बनी रही. इसलिए उनकी सुरता संसारमें अटकी रही. वस्तुतः जागनी ब्रह्माण्डकी संरचना मूल रूपमें इन्हीं तामसी सखियोंके लिए ही हुई है.

भूल गइयां खेल में, जो सैयां है समरथ ।
प्रकास पिऊ का मुझ पें, केहे समझाऊ अरथ ॥ ७

परमधामकी समर्थ आत्माएँ भी इस खेलमें आकर स्वयंको भूल गईं. मेरे पास धामधनीका प्रकाश है, उसके द्वारा मैं ऐसी सभी आत्माओंको परमधामका ज्ञान समझाऊँगा.

सबन को भेली करूं, द्रढ कर देऊं मन ।
खेल देखाऊं खोल के, जिन विध ए उतपन ॥ ८

मैं सब ब्रह्मसृष्टियोंको एकत्र कर उनके मनको दृढ़ बना दूँ और जिस प्रकार यह खेल उत्पन्न हुआ है, उसके रहस्यको स्पष्ट कर दूँ.

ए खेल है जोरावर, बडो सो रचियो छल ।
ए तब जाहेर होएसी, जब काढ देखाऊं बल ॥ ९

यह छलरूपी मायावी खेल बड़ा ही शक्तिशाली है. मैं जब इसके रहस्यको खोलकर बताऊँगा, तब इसका रूप स्पष्ट हो जाएगा.

तुम नाहीं इन छल के, छल को जोर अमल ।
सांची को झूठी लगी, ऐसो छल को बल ॥ १०

हे ब्रह्मात्माओ ! तुम इस छल मायाकी सृष्टि नहीं हो. मायाका नशा तो बड़ा ही प्रबल है. वस्तुतः सत्य आत्मा पर मिथ्या मायाका प्रभाव पड़ गया है, यही तो इस मायाकी शक्ति है.

तुम आइयां छल देखने, भिल गैयां मांहें छल ।
छल को छल न लागहीं, ओ लेहेरी ओ जल ॥ ११

तुम इस छल प्रपञ्चयुक्त जगतको मात्र देखनेके लिए आईं हो, किन्तु इस खेलके पात्र बनकर इसीमें घुलमिल गईं हो. खेलके जीवोंको तो यह माया छलरूप नहीं लगती, क्योंकि वे तो मोहजलकी ही लहरें हैं.

ए झूठी तुमको लग रही, तुम रहे झूठी लाग ।
ए झूठी अब उड जाएसी, दे जासी झूठा दाग ॥ १२

यह झूठी माया तुम सत्य आत्माओंको प्रभावित कर रही है और तुम भी इसीमें निमग्न हो गई हो. अब तारतम ज्ञानके प्रभावसे यह झूठा खेल तो उड़ जाएगा किन्तु परमधामकी आत्माओंको विस्मृतिका झूठा कलङ्क लगा रहेगा.

हांसी होसी अति बडी, जिन देओ मोहे दोस ।
कमी केहे मैं ना करूं, पर तुमें छल हुआ सिरपोस ॥ १३

तब श्रीराजजीके समक्ष तुम्हारी बड़ी हँसी होगी. उस समय मुझे दोष मत देना. मैंने तुम्हें समझानेमें कोई कमी नहीं रखी है किन्तु यह माया तुम्हारे सिरसे लेकर पाँव तकका झूठा आवरण (बुर्का) बन गई है.

मांग लिया खसम पें, ए छल तुम देखन ।
जो कदी भूलियां छल में, तो फेर न आवे ए दिन ॥ १४

तुमने धामधनीसे यह दुःख (छल) रूपी खेल देखनेके लिए माँगा था. यदि तुम इस छलमें आकर धामधनीको ही भूल जाओगी तो फिर उन्हें पहचाननेका ऐसा महत्त्वपूर्ण दिन कभी नहीं आएगा.

तुम मुख नीचा होएसी, आगूं सैयां सबन ।
ए हांसी सत ठौर की, कोई सैयां कराओ जिन ॥ १५

यदि तुम उन सारी बातोंको भूल जाओगी तो श्रीराजजी और अन्य ब्रह्मात्माओंके समक्ष तुम्हारा मुख नीचे रहेगा. हे आत्माओ ! सत्य परमधाममें इस प्रकार अपनी हँसी मत कराना.

दुख ले चलसी इत थें, नहीं आवन दूजी बेर ।
तिन क्यों मुख ऊंचा होएसी, जो पीउसों बैठी मुख फेर ॥ १६

यदि इस जगतसे चलते समय विस्मृतिका दुःख साथ ले जाओगी तो उससे मुक्त होनेके लिए पुनः यहाँ आया नहीं जाएगा. यहाँ पर जो आत्माएँ प्रियतमसे विमुख रहीं हैं, परमधाममें उनका सिर कैसे ऊँचा होगा ?

तुमें सुध पीउ ना आपकी, ना सुध अपनों घर ।
नाहीं सुध इन छल की, सो कर देऊं सब जाहेर ॥ १७

तुम्हें न अपने धनीकी सुधि है, न अपनी पहचान है. न अपने मूल घर परमधामकी सुधि है और न ही इस छलकी सुधि है. इसलिए अब मैं तुम्हें यह सब स्पष्ट कर दूँ.

मैं देखाऊं तिन विध, ज्यों होए पेहेचान छल ।
जब तुम छल पेहेचानियां, तब चले न याको बल ॥ १८

मैं तुम्हें इस प्रकार स्पष्ट कर दूँ कि जिससे तुम्हें छलरूपी मायाकी पहचान हो जाए. जब तुम मायाको पहचान लोगी तब तुम्हारे ऊपर मायाका कोई प्रभाव (जोर) नहीं पड़ेगा.

अब देखो या छल को, जो देखन आइयां एह ।
प्रकास करूं इन भांत का, ज्यों रेहेवे नहीं संदेह ॥ १९

तुम इस मायावी जगतको देखने आई हो, इसे भली-भाँति देख लो. मैं तुम्हारे हृदयको ऐसे प्रकाशित करूँ कि जिससे तुम्हारे मनमें किसी प्रकारका सन्देह ही न रहे.

अंधेर सब उडाए के, सब छल करूं जाहेर ।
खोलूं कमाड कल कुलफ, अन्तर मांहें बाहेर ॥ २०

अज्ञानरूपी अन्धकारको मिटाकर इस मायाके रहस्यको स्पष्ट कर दूँ. तुम्हारे भीतर और बाहरके आवरणोंको दूर करते हुए तुम्हारी बुद्धिके द्वार पर लगे हुए तालेको खोल दूँ.

खेल के मोहोरोंका प्रकरण

अब निरखो नीके कर, ए जो देखन आइयां तुम ।
मांग्या खेल हिरस का, सो देखलावें खसम ॥ १

हे ब्रह्मात्माओ, इस मायाजन्य (दुःखपूर्ण) विश्वको देखनेके लिए तुम यहाँ आई हो, उसे भलिभाँति देख लो. तुमने चाहकर खेल देखनेकी माँग की थी. उसे प्रियतम धनी तुम्हें परमधाममें बैठाकर दिखा रहे हैं.

भोम भली भरथखंड की, जहां आई निध नेहेचल ।
और सारी जिमी खारी, खारे जल मोहजल ॥ २

समस्त जगतमें भारत भूमि श्रेष्ठ है, जहाँ परमधामकी अविनाशी निधि प्रकट

हुई है. अन्य सारा जगत खारा (प्रेम विहीन-शुष्क) है. यह सारा भवसागर (मोहजल) ही खारा कहलाता है.

इत बोए वृख होत हैं, ताको फल पावे सब कोए ।
बीज जैसा फल तैसा, किया जो अपना सोए ॥ ३

यहाँ पर जैसा कर्मका बीज बोया जाता है उसीका फल सब कोई प्राप्त करते हैं. यहाँकी विशेषता यह है कि जो जैसा बीज बोता है, उसे वैसा ही फल मिलता है.

इनमें जो ठौर अवल, जाको नाम नौतन ।
जहां आए उदे हुई, नेहेचल बात वतन ॥ ४

इस भारत भूमिमें भी जो सर्वोत्तम स्थान है उसे नवतनपुरी कहा गया है, जहाँ अखण्ड परमधामकी निधि (अविनाशी ज्ञान) तारतमके रूपमें प्रकट हुई है.

एह खेल तुम मांगिया, सो किया तुम खातर ।
ए विध सब देखाए के, पीछे कहूं वतन आखर ॥ ५

हे ब्रह्मप्रियाओ ! तुमने स्वयं ही यह खेल माँगा था. इसलिए तुम्हारे लिए ही धामधनीने इसकी रचना की है. इस प्रकार ये सब बातें तुम्हें समझाकर फिर अन्तमें परमधामकी बातें कहूँगा.

मोहोरे सब जुदे जुदे, जुदी जुदी मुख बान ।
खेले मन के भावते, सब आप अपनी तान ॥ ६

इस जगतके खेलमें जीव खेलके पात्रके रूपमें विभिन्न सम्प्रदायोंमें भटक रहे हैं. सबकी बातें अलग-अलग हैं एवं सब अपनी अपनी तानमें मस्त हैं.

स्वांग काछे जुदे जुदे, जुदे जुदे रूप रंग ।
चले आप चित चाहते, और रहे भेले संग ॥ ७

इस संसारमें कई लोग अनेक वेश बना कर पृथक्-पृथक् रङ्गोंमें रङ्गे हुए

घूम रहे हैं. इस प्रकार सब एक साथ एक समूहमें रहते हुए भी अपनी-अपनी इच्छानुसार चलते हैं.

अनेक सेहेर बाजार चौटे, चौक चौवटे अनेक ।
अनेक कसबी कसब करते, हाट पीठ बसेक ॥ ८

जिस प्रकार इस जगतमें अनेक शहर हैं, बाजार हैं, दुकानें हैं, चौराहोंमें अनेक चौक बने हुए हैं, अनेक कारीगर कारीगरी करते हैं, नगरोंमें दैनिक एवं साप्ताहिक तथा वार्षिक लगने वाले हाट और पीठ भी विशेष दिखाई देते हैं. ठीक उसी प्रकार यहाँ पर अनेक मत-मतान्तरके लोगोंने धर्मको व्यवसाय बना रखा है.

भेष सारे बनाए के, करे होहोकार ।
कोई मिने आहार खाए, कोई खाए अहंकार ॥ ९

इस प्रकार नाना प्रकारके वेश बनाकर लोग अपने-अपने ढङ्गसे शोर मचा रहे हैं. कोई आहारका सेवन करते हैं तो कोई अहङ्कारी होकर अहङ्कारका ही आहार कर रहे हैं.

विध विध के भेष काछे, सारे जान प्रवीन ।
वरन चारों खेले चित दे, नाहिंन कोई मतहीन ॥ १०

विभिन्न प्रकारके वेश-भूषा धारण किए हुए ये लोग स्वयंको प्रवीण समझते हैं. इस खेलमें चारों वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के लोग मदमस्त होकर खेल रहे हैं. इनमेंसे कोई भी स्वयंको बुद्धिहीन नहीं समझता.

पढे चारों विद्या चौदे, हुए वरन विस्तार ।
आप चंगी सब दुनियां, खेलत हैं नर नार ॥ ११

चारों वर्णोंके लोग चौदह विद्याको पढ़कर अपने-अपने वर्ण विस्तारमें लगे हुए हैं. इस प्रकार पूरी दुनियाँमें समस्त नर-नारी स्वयंको श्रेष्ठ मानकर अपनी-अपनी मस्तीमें खेल रहे हैं.

[चौदह विद्याएँ- चारवेद, (ऋक्, यजुः, साम, अथर्व) छः वेदाङ्ग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष), मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र और

पुराण (अथवा नृत्य, सङ्गीत, पढ़ना, सीना, घर सजाना, भाषाओंका सीखना, शस्त्र बनाना, औषधि बनाना, चित्रकारी, कढ़ाई, बुनाई, खेतीकरना, पुष्प सजाना और शृङ्गार सजाना आदि.)]

वरन सारे पसरे, लोभें लिए करें उपाए ।
बिना अगनी पर जले, अंग काम क्रोध न माए ॥ १२

इस प्रकार चारों वर्णोंका विस्तार हो गया. ये सब लोभके वशीभूत होकर अपनी जीविकाके लिए कई प्रयत्न करते हैं. ये सब लोग बिना अग्निके ही (इच्छा तृष्णा द्वारा) जल रहे हैं. उनके शरीरमें काम, क्रोध, लोभ जैसे दुर्गुण नहीं समाते.

नाहीं जासों पेहेचान कबहूं, तासों करे सनमंध ।
सगे सहोदरे मिलके, ले देवें मन के बंध ॥ १३

जिनके साथ कभी कोई पहचान तक नहीं होती, उनके साथ सम्बन्ध बना लेते हैं. सभी सगे सम्बन्धी और भाई-बन्धु मिलकर इन्हें विवाहके सांसारिक बन्धनमें बाँध देते हैं.

सनमंध करते आप में, उछरंग अंग न माए ।
केसर कसूंबे पेहेन के, सेहेर में फेरे खाए ॥ १४

आपसमें विवाहका सम्बन्ध जोड़ते हुए इनके अङ्गोंमें आनन्द नहीं समाता. ये लोग विवाहके उमङ्गमें केसरी, लाल एवं अन्य विशेष रङ्गके वस्त्र आदि पहनकर नगरमें घूमते हैं.

सिनगार करके तुरी चढे, कोई करे छाया छत्र ।
कोई आगे नाटारंभ करे, कोई बजावे बाजंत्र ॥ १५

कोई दुल्हेका साज शृङ्गार कर घोड़े पर सवार होता है और अन्य लोग उसे छत्र ओढ़ाते हैं. कुछ लोग उसके आगे बाजे-गाजे बजाते हैं और नाचते हुए चलते हैं.

कोई बांध सीढी आवे सामी, करे पोक पुकार ।
विरह वेदना अंग न माए, पीटे मांहें बाजार ॥ १६

(एक ओर विवाहका आनन्द है तो दूसरी ओर) कोई मृतककी अरथी उठाकर रोते हुए सामनेसे आ रहे हैं. गतात्माके विरहका दु:ख सहन न होनेसे वे छाती पीट-पीटकर बाजारोंमें रो रहे हैं.

गाडे जाले हाथ अपने, रुदन करे जलधार ।
सनमंधी सब मिलके, टलवले नर नार ॥ १७

कोई लोग पार्थिव देहको अपने हाथोंसे जलाते हैं, तो कोई लोग जमीनमें गाड़ देते हैं फिर जलधाराके समान आँसू बहाते हुए उनके सम्बन्धी-नरनारी मिलकर विलखते हैं.

जनम होवे काहूं के, काहूं के होवे मरन ।
कोई हिरदे हंसे हरषे, कोई सोक रुदन ॥ १८

इस प्रकार किसीके यहाँ बच्चेका जन्म होता है, तो किसी दूसरेके यहाँ किसीकी मृत्यु हो जाती है. जन्म होनेवाले घरमें लोग हँसते गाते खुशियाँ मनाते हैं, तो उधर मृत्युवाले घरमें शोक मग्न होकर रोते विलखते हैं.

धन खरचे खाए गफलतें, आपे बुजरक होए ।
कीरत अपनी कराए के, खेल या विध होए ॥ १९

अज्ञानमें पड़े हुए श्रीमन्तजन झूठी (तुच्छ) वस्तुओंके पीछे धनका अपव्यय कर स्वयंको बड़ा समझते हैं. अपनी कीर्ति (महिमा) चारों ओर फैलाकर बादमें वे स्वयं मिट जाते हैं. इस प्रकार दुनियाँका खेल चलता है.

कोई किरपी कोई दाता, कोई मंगन केहेलाए ।
किसी के अवगुन बोले, किसी के गुन गाए ॥ २०

इस संसारमें कोई कृपण (लोभी) हैं तो कोई दानी हैं तथा कोई भिखारी

कहलाते हैं. भिखारी जन भीख न देनेवालेका अवगुण गाते हैं और दाताका गुणगान करते हैं.

कोई मिने बेहेवारिए, कोई राने राज ।
कोई मिने रांक रलझले, रोते फिरे अकाज ॥ २१

ऐसेमें कितने ही लोग व्यापारी बने हैं और कोई राज्यके स्वामी बने हुए हैं. कई बेचारे गरीब दुःखी होकर रोते हुए व्यर्थ भटकते हैं.

कोई पौढे पलंग हेम के, कोई ऊपर ढोले वाए ।
बात करते जी जी करे, ए खेल यों सोभाए ॥ २२

राजा महाराजा तथा धनी वर्ग सोनेकी शय्यापर सोते हैं और उनके दास उनकी सेवामें पङ्खे डुलाते हैं. कितने लोग उनको 'जी हाँ' कहकर रिझाते हैं. यह सारा खेल इस प्रकार शोभायमान है.

कोई बैठे सुखपाल में, कोई दौडे उचाए ।
जलेब आगे जोर चले, ए खेल यों खेलाए ॥ २३

कोई सुखपाल (पालकी) पर विराजते हैं, तो कोई कहार बनकर उनकी पालकीको ढोते हुए दौड़ते हैं, उनके आगे जुलूस चलता है. इस प्रकार यह खेल कई प्रकारसे खेला जा रहा है.

कोई बैठे तखतरवा, आगे तुरी गज पाएदल ।
अति बडे बाजंत्र बाजे, जाने राज नेहेचल ॥ २४

राजा महाराजा हाथीके हौदे पर सवार होते हैं. उनके आगे उनकी सेना हाथी घोड़े पर सवार होकर तथा पैदल चलती है. उनके सामने बड़े-बड़े नगाड़े बजाए जाते हैं. उन्हें ऐसा लगता है कि उनका यह राज्य सदैव अखण्ड रहेगा.

साम सामी करे सेन्या, भारथ होवें लोह अंग ।
लज्या बांधे होवें टुकडे, कहावें सूर अभंग ॥ २५

युद्धके समय वे आमने-सामने अपनी-अपनी सेना खड़ी करते हैं और शत्रुसे

भिड़कर अङ्ग-प्रत्यङ्गको रक्त रञ्जित करते हैं. हार जाने पर लज्जित होनेके भयसे शूरवीर कहलवानेके लिए कट कर मर जाते हैं.

कोई मिने होए कायर, छोड लज्या भाग जाए ।
कोई मारे कोई पकडे, कोई गए आप बचाए ॥ २६

युद्धमें कोई कायर बनकर लज्जा छोड़कर भाग जाता है. कोई किसीको मार देते हैं तो किसीको पकड़कर कैद कर लेते हैं, कितने ही लोग अपनी जान बचाते हुए भाग जाते हैं.

कोई जीते कोई हारे, काहूं हरष काहूं सोक ।
जो तरफ सारी जीत आवे, ताए कहे पृथवीपत लोक ॥ २७

कोई विजयी बनकर हर्षित होता है तो कोई हारकर शोक मनाते हैं. जो युद्धमें सर्वत्र विजय प्राप्त कर लेता है तो उसको लोग चक्रवर्ती सम्राट (पृथ्वीपति) कहते हैं.

कोई करे ले कैद में, बांधत उलटे बंध ।
मारते अरवाह काढे, ए खेल या सनंध ॥ २८

युद्धमें कितने ही योद्धाओंको कैद कर उन्हें बाँधकर उलटा लटका दिया जाता है. कितनोंको तो मार-मारकर उनके प्राण ही निकाल लेते हैं. यह मायावी खेल इसी प्रकार चलता रहता है.

जीते हरषे पौरसे, सूरातन अंग न माए ।
हारे सारे सोक पावे, सो करे मुख त्राहे त्राहे ॥ २९

युद्धमें विजयी बना हुआ व्यक्ति अपनी वीरता (पौरुष) का गर्व करता है. उसका शौर्य अङ्गोंमें नहीं समाता. वहीं पर हारने वाले शोकमें डूबे हुए त्राहि-त्राहि पुकारते हैं.

कै फिरत हैं रोगिए, कै लूले टूटे अपंग ।
कै मिने आंधले, यों होत खेलमें रंग ॥ ३०

यहाँ न जाने कितने लोग रोगसे पीड़ित हैं तो कितने लूले-लङ्गड़े अपङ्ग

हैं. कितने अन्धतासे दुःखी हैं. इस प्रकार इस खेलके विभिन्न रङ्ग रूप दिखाई देते हैं.

कै उदर कारने, फिरत होत फजीत ।
कै पवाडे करे कोटल, ए होत खेल या रीत ॥ ३१

कई भिखारी अपनी उदर पूर्तिके लिए द्वार-द्वार भटककर अपमानित होते हैं. असंख्य आडम्बरोंसे भरे हुए इस जगतका नाटक इसी रीतिसे खेला जा रहा है.

प्रकरण १३ चौपाई ३१०

खेलमें खेल

अब देखाऊं इन विध, जासों समझ सब होए ।
भेले हैं सत असत, सो जुदे कर देऊं दोए ॥ १

अब इस प्रकार इस खेलका रहस्य बताते हैं. जिसमें सभी बातें समझमें आ जाएँ. इस संसारमें सत्य (ब्रह्म) और असत्य (माया) मिले हुए दिखाई देते हैं. उन दोनोंको अलग-अलग कर बता देता हूँ.

इन खेलमें जो खेल है, सो केहेत न आवे पार ।
इन भेषोंमें भेष सोभहीं, सो कहूं नेक विचार ॥ २

संसारके इस मिथ्या नाटकमें इतने प्रकारके खेल हैं कि उनका वर्णन नहीं हो सकता. यहाँ पर वेशधारियोंमें भी अनेक वेश-भूषाएँ दिखाई देतीं हैं. उनके सन्दर्भमें थोड़ा-सा विवरण देता हूँ.

कै देहुरे अपासरे, कै मुनारे मसीत ।
तलाव कुआ कुंड बावरी, मांहें विसामां कै रीत ॥ ३

इस संसारमें असंख्य देवालय, उपाश्रय, मीनारवाली मस्जिदें हैं. अनेक लोगोंने परोपकारके लिए तालाव, कुआँ, कुण्ड, बावड़ी तथा विश्रामस्थल (धर्मशाला) बनवाए हैं.

कै भेष जो साध कहावहीं, कै पंडित पुरान ।
कै भेष जो जालिम, कै मूरख अजान ॥ ४

किसी विशेष प्रकारके वेश धारण करने वाले साधु कहलाते हैं और कई

लोग शास्त्र-पुराण पढ़कर पण्डित कहलाते हैं. कई अत्याचारी (जालिम) लोग विभिन्न वेश धारण कर साधुजनों पर अत्याचार करते हैं और कई लोग अज्ञानी (मूर्ख) भी दिखाई देते हैं.

कै अंन नीर सबीले, कै करे दया दान ।
कै तरपन तीरथ, कै करे नित अस्नान ॥ ५

कई दानी लोग दयापूर्वक सदाव्रतमें अन्न दान देते हैं तथा प्याऊ बनवाकर ठण्डा जल पिलाते हैं. कोई तीर्थोंमें जाकर तर्पण (पितरोंको तृप्त) करते हैं तो कोई नित्य स्नानको महत्त्व देते हैं.

कै कहावें दरसनी, धरें जुदे जुदे भेख ।
सुध आप ना पार की, हिरदे अंधेरी विसेख ॥ ६

कई लोग भिन्न-भिन्न दर्शन-शास्त्रोंको पढ़कर दर्शनाचार्य (दर्शनी) कहलाते हैं तथा अपनी विद्वत्ताका प्रदर्शनके लिए भिन्न-भिन्न वेश धारण करते हैं. उन्हें इससे आत्मा और परब्रह्मकी पहचान तो नहीं हो पाती उलटे उनका हृदय अज्ञानरूपी अन्धकारसे भरा रहता है.

कै लूचें कै मूडें, कै बढावें केस ।
कै काले कै उजले, कै धरे भगुए भेष ॥ ७

कितने ही लोग अपने बालोंको नुचवा लेते हैं. कई मुण्डन करते हैं तो कई केश बढ़ा लेते हैं. ये लोग भिन्न-भिन्न प्रकारके काले, श्वेत या भगवें वस्त्र धारण करते हैं.

कै नेक छेदें कै न छेदें, कै बोहोत फारें कान ।
कै माला तिलक धोती, कै धरें बैठे ध्यान ॥ ८

कितने साधु कानोंको जरा-सा छिदवा लेते हैं तो कितने नहीं छिदवाते. कितने (कानफट्टे साधु) अपने कान बहुत फड़वा लेते हैं. कोई गलेमें बड़ी-बड़ी मालाएँ धारण कर तिलक और धोती पहनते हैं, कई एक ही आसन पर बैठकर ध्यान-चिन्तन करते हैं.

कै जिंदे मलंग मुल्ला, बांग दे मन धीर ।
कै जावे पाक होए, कै मीर पीर फकीर ॥ ९

कई लोग स्वयंको शुद्ध आत्मा मानने वाले जिन्दे हैं तो कई स्वयंको निश्चिन्त साधु होनेका दावा करते हैं, कई मौलवी (मुल्ले) मनको स्थिर कर बाँग पुकारते हैं. कई मीर (धर्माचार्य) पीर (गुरु) फकीर (त्यागी साधु) बनकर स्वयंको पवित्र मानते हैं.

कै लंगरी बोदले, कै आलम पढे इलम ।
कै औलिए वेकैद सोफी, पर छोडे नहीं जुलम ॥ १०

इनमें कई लङ्गरी (एक ही पात्र पर खानेवाले) तथा बोदले साधु हैं. कई इल्म (ज्ञान) पढ़कर आलिम (ज्ञानी) कहलाते हैं. कई सूफी (अध्यात्मवादी), परमहंस (औलिया) तथा बेकैद (मुक्त) कहलाते हैं किन्तु उनसे भी अत्याचार नहीं छूटता.

कै सती सीलवंती, कै आरजा अरधांग ।
जती बरती पोसांगरी, ए अति सोभावे स्वांग ॥ ११

कई महिलाएँ सती-साध्वी कहलातीं हैं तो कोई आर्या तथा भक्तिमति अर्धाङ्गिनी कहलातीं हैं. पुरुषोंमें कई यति (संन्यासी), कई व्रती (व्रतका पालन करने वाले) तथा अनेक प्रकारके पोशाक धारण करने वाले मायावी नशेमें मस्त पोशाङ्गरी कहलाते हैं. इस प्रकार ये सब विभिन्न स्वांग (ढोंग) में सुशोभित होते हैं.

कै जुगतें जोगी जंगम, कै जुगतें संन्यास ।
कै जुगतें देह दमे, पर छूटे नहीं जमफांस ॥ १२

इनमेंसे कोई योगी बनकर योग साधना करते हैं तो कोई संन्यासी बनते हैं. कोई युक्तिपूर्वक इन्द्रियोंका दमन करते हैं, किन्तु यह सब करने पर भी ब्रह्मज्ञानके अभावमें यमकी फाँसीसे मुक्त नहीं हो पाते.

कै सिवी कै वैस्नवी, कै साखी समरथ ।
लिए जो सारे गुमाने, सब खेले छल अनरथ ॥ १३

इस संसारमें कई लोग शैवी हैं तो कई वैष्णव कहलाते हैं. कई कविताएँ (साखियाँ) बनानेमें समर्थ हैं. इस प्रकार सब निरर्थक अभिमान लेकर इस अनर्थ पूर्ण संसारमें खेलते हैं.

कै श्रीपात ब्रह्मचारी, कै वेदिए वेदान्त ।
कै गए पुस्तक पढते, परमहंस सिद्धान्त ॥ १४

इनमेंसे कितने ही शक्ति उपासक श्रीपाद तथा कई ब्रह्मचारी कहलाते हैं. कई वेदज्ञ विद्वान वेदान्ती कहलाते हैं. कई लोग धर्मशास्त्रको कण्ठस्थ करने वाले सिद्धान्त ज्ञानी (सैद्धान्तिक) हैं, तो कई परमहंस कहलाते हैं.

कै अवतार तीथंकर, कै देव दानव बडे बल ।
बुजरक नाम धराईया, पर छोडे न काहूं छल ॥ १५

यहाँ पर कई अवतार तथा तीर्थङ्कर हो गए हैं तो कितने ही शक्तिशाली देवता एवं क्रूर दानव भी हुए हैं. कई लोग ज्ञानी भी कहलाए. किन्तु कोई भी इस छलवती मायासे मुक्त न हो सका.

कै होदी बोदी पाधरी, कै चंडिका चामंड ।
बिना हिसाबें खेलहीं, जाहेर छल पाखंड ॥ १६

इनमेंसे कई यहूदी (अथवा हाथीके हौदेमें घूमने वाले होदी साधु) हैं तो कई बौद्ध (बोधि) हैं तथा कई पाधरी एवं कई चण्डिका और चामुण्डा देवियोंके भक्त हैं. इस प्रकार अनेक आडम्बर रचकर किए जा रहे पाखण्ड पूर्ण खेल यहाँ दिखाई दे रहे हैं.

कै डिम्भ करामात, कै जंत्र मंत्र मसान ।
कै जडी मूली ओषदी, कै गुटका धात रसान ॥ १७

कई डिम्बक साधु चमत्कारोंमें लीन हैं. कई श्मशानभूमिमें रहकर तन्त्र-मन्त्रकी साधना करते हैं. कई जड़ी-बूटियोंका प्रयोग कर औषधियाँ बनाने वाले गुटिका, धातु और रसायन बनाते हैं.

कै जुगतें सिध साधक, कै व्रत धारी मुन ।
कै मठवाले पिंड पाले, कै फिरे होए नगन ॥ १८

कई युक्तिपूर्वक सिद्धियोंको प्राप्त करनेके इच्छुक साधक हैं, तो कई व्रत धारण करनेवाले मौनी साधु भी हैं. कई बड़े-बड़े मठ बनाकर अपने शरीरका पालन करते हैं तो कई नागा बाबा बन कर घूमते फिरते हैं.

कै षट चक्र नाडी पवन, कै अजपा अनहद ।
कै त्रवेनी त्रकुटी, जोती सोहं राते सबद ॥ १९

कई योगाभ्यासी शरीरके छः चक्रों (षट्चक्रों) और बहत्तर नाडियोंको साधकर कुण्डलिनी जगानेका प्रयास करते हैं. कई प्राणायाम करते हैं, कोई अजपा जप करते हैं और अनहद नाद सुननेका प्रयत्न करते हैं. कई ईड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना आदि नाड़ियोंकी साधना कर ज्योति स्वरूपके दर्शन करनेका पुरुषार्थ करते हैं और कई सोऽहं शब्दका जपकर उसीमें मग्न रहते हैं.

कै संत जो महंत, कै देखीते डिगम्बर ।
पर छल ना छोडे काहूं को, कै कापड़ी कलंदर ॥ २०

कई सन्त हैं और कई महन्त हैं तथा कई दिगम्बर (वस्त्र विहीन) दिखाई देते हैं. कई भिक्षुक (कापड़ी) तथा बन्दर, भालु नचाने वाले मुसलमान फकीर (कलन्दर) हैं. किन्तु माया इन किसीको भी नहीं छोड़ती.

कै आचारी अपरसी, कै करे किरंतन ।
यों खेलें जुदे जुदे, सब परे बस मन ॥ २१

कई लोग आचार-विचारका पालन करते हुए अस्पृश्यताको अधिक महत्त्व देते हैं, तो कई भक्तजन कीर्तनमें लीन रहते हैं. इस प्रकार सब लोग मनके वशीभूत होकर अलग-अलग खेल करते हैं.

कै किरंतन करें बैठें, कै जाग जगन ।
कै कथें ब्रह्म ग्यान, कै तपें पंच अगन ॥ २२

कई भक्तजन कीर्तन करते हैं, कई याग-यज्ञ करते हैं. कई ज्ञानी बनकर ब्रह्मज्ञानकी बड़ी-बड़ी डींगें मारते हैं और कई लोग पञ्चाग्नि तप (चारों ओरसे जलती चार अग्नियाँ और पाँचवाँ सूर्यका ताप) करते हैं.

कै इन्द्री करे निग्रह, मन ल्याए कष्ट मोह ।
कै उरध ठाडेसरी, कै बैठे खुद होए ॥ २३

कई हठयोगी इन्द्रियोंका निग्रह करते हैं. कई लोग कष्ट सहते हुए अपना हाथ ऊपर उठाकर वर्षोंतक सीधे खड़े रहते हैं. ऐसे साधक (कई बार) स्वयं ही ब्रह्म होनेका दावा भी करते हैं.

कै फिरे देस देसांतर, कै करे काओस ।
कै कपाली अघोरी, कै लेवें ठंड पाओस ॥ २४

कई लक्ष्य बिना ही देश-विदेशमें धूमते हैं. कई एक कानसे सल्ली डालकर दूसरे कानसे निकालनेकी कठिन साधना (काओस) करते हैं. कोई कपालिक-खोपड़ी लेकर चलनेवाले तथा कोई अघोरी श्मशानमें नरमुण्डोंको लेकर साधना करनेवाले होते हैं. इस प्रकार अनेक साधु शीत कालमें भी बर्फ पर पड़े रहकर हठयोगकी साधना करते हैं.

कै पवन दूध आहारी, कै ले बैठत हैं नेम ।
कै कैद ना करे कछुए, ए सब छल के चेन ॥ २५

इनमेंसे कई लोग मात्र वायुका सेवन करते हैं, कई केवल दूध ही पीते हैं. कितने नियम (व्रत) धारी अपना संकल्प लिए बैठते हैं, तो कितने धर्मकर्मका बन्धन ही नहीं मानते. इस प्रकार ये सब मायामें ही मस्त हैं.

कै फल फूल पत्र भखी, कै आहार अलप ।
कै करे काल की साधना, जिया चाहें कलप ॥ २६

कई लोग मात्र फल, फूल और पत्ते ही खाते हैं, तो कई लोग अल्प आहार

करते हैं. कई ऐसे भी हैं जो कालकी साधना करके कई कल्पों तक जीवित रहना चाहते हैं.

कै धारा गुफा झांपा, कै जो गाले तन ।
कै सूके बिना खाए, कै करे पिंड पतन ॥ २७

कई लोग झरनेके नीचे तथा गुफा या कन्दरामें बैठकर तप करते हैं, कोई भैरव झाँप भी खाते हैं. कई शरीरको बर्फमें गलाते हैं. कोई अधिक दिनों तकके उपवासके कारण शरीरको सुखा कर देहपात (प्राणत्याग) करते हैं.

यों वैराग जो साधना, करे जुदे जुदे उपचार ।
यों चले सब पंथ पैंडे, यों खेले सब संसार ॥ २८

वैराग्यकी साधना के लिए ये लोग भिन्न-भिन्न उपाय (उपचार) करते हैं. इस प्रकार सारे पन्थ, पैड़े इस संसारमें अलग-अलग प्रकारके खेल खेल रहे हैं.

खेले सब देखा देखी, ज्यों चले चींटी हार ।
यों जो अंधे गफलती, बांधे जाए कतार ॥ २९

ये सब लोग एक दूसरेकी देखादेखी करते हुए खेल रहे हैं. जिस प्रकार चींटियाँ एक दूसरेके पीछे कतारमें चलतीं हैं, उसी प्रकार अज्ञानी लोग भी बिना देखे अन्धानुकरण करते हुए एक दूसरेके पीछे कतार बनाए चले जा रहे हैं.

कोई ना चीन्हें आप को, ना चीन्हें अपनो घर ।
जिमी पैंडा ना सूझे काहूं, जात चले इन पर ॥ ३०

किसीको भी न स्वयंकी पहचान है और न ही अपने घर परमधामकी सुधि है. यह संसार क्या है, तथा इससे परे जानेका मार्ग कौन-सा है ? यह किसीको नहीं सूझता, किन्तु सब अपने-अपने ढङ्गसे चले जा रहे हैं.

बाजीगर न्यारा रह्या, ए खेलत कबूतर ।
तो कबूतर जो खेल के, सो क्यों पावे बाजीगर ॥ ३१

ऐसे संसारको बनाने वाले बाजीगर (अक्षरब्रह्म) इन सबसे न्यारे हैं और ये

लोग बाजीगरके कबूतरकी भाँति खेल रहे हैं. इसलिए खेलके कबूतरके समान ये सारे सांसारिक प्राणी जगतनियन्ता अक्षरब्रह्मको कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?

अब देखो ले माएने, खेल बिना हिसाब ।
आप अकलें देखिए, ए रच्यो खसमें ख्वाब ॥ ३२

हे सुन्दरसाथजी ! अब जगतके असंख्य खेलके रहस्यको समझो. तुम अपनी बुद्धिसे देखो कि परमात्माने इस झूठे (स्वप्न) संसारको कैसे रचा है ?

धरे नाम खसम के, जुदे जुदे आप अनेक ।
अनेक रंगे संगे ढंगे, विध विध खेलें विवेक ॥ ३३

इस प्रकार अपनी समझ और आस्थाके अनुसार कई लोगोंने परमात्माके अलग-अलग नाम रख लिए हैं. अपनी-अपनी विवेक बुद्धिके आधार पर अपनी उपासनामें भी अनेक प्रकारके रङ्ग-ढङ्ग रचे हैं.

खसम एक सबन का, नाहिंन दूसरा कोए ।
एह विचार तो करे, जो आप सांचे होए ॥ ३४

परमात्मा सबके एक ही हैं. उनके अतिरिक्त कोई दूसरा है ही नहीं. इस रहस्य पर वे ही विचार कर सकते हैं, जो स्वयं सत्य (परमधामकी) आत्मा हैं.

खेल खेलें अनेक रबदें, मिनों मिने करे क्रोध ।
जैसे मछ गलागल, छोडे ना कोई ब्रोध ॥ ३५

इस प्रकार इस दुनियाँमें लोग परस्पर विवाद करते हुए (आपसमें) झगड़ते हैं. जैसे बड़ी मछली छोटी मछलीको निगल जाती है, उसी प्रकार दुनियाँके लोग परस्पर विरोध नहीं छोड़ते.

प्रकरण १४ चौपाई ३४५

कोई कहे दान बडा, कोई केहेवे ग्यान ।
कोई कहे विग्यान बडा, यों लडे सब उनमान ॥ १

इस खेलमें बहुत-से लोग दानको बड़ा मानते हैं तो बहुत-से ज्ञानको. कितने लोग विज्ञान (अध्यात्मज्ञान) को बड़ा मानते हैं. इस प्रकार अनुमानित धारणाओंसे परस्पर झगड़ते हैं.

कोई केहेवे करम बडा, कोई केहेवे काल ।
कोई कहे साधन बडा, यों लडे सब पंपाल ॥ २

कोई (मीमांसक) कर्मको महान समझता है, तो कोई (वैशेषिक) कालको बड़ा बताता है. कोई अष्टाङ्गयोग आदि साधनाको प्रधानता देता है. इस प्रकार सब लोग झूठी मान्यताओंमें पड़ कर लड़ते झगड़ते हैं.

कोई कहे बडा तीरथ, कोई कहे बडा तप ।
कोई कहे सील बडा, कोई केहेवे सत ॥ ३

कोई तीर्थको अधिक मान्यता देता है, तो किसीके लिए तप महान है. कोई शील, स्वभावको तो कोई सत्यको उत्तम मानते हैं.

कोई कहे विचार बडा, कोई कहे बडा व्रत ।
कोई कहे मत बडी, या विध कै जुगत ॥ ४

कोई शुद्ध विचारको सबसे अधिक श्रेष्ठ धर्म मानते हैं. किसीके लिए व्रतकी बड़ी गरिमा है. किसीके मतसे बुद्धि बड़ी है. इस प्रकार यहाँ कई युक्तियाँ (रीतियाँ) चल रहीं हैं.

कोई कहे बडी करनी, कोई कहे मुगत ।
कोई कहे भाव बडा, कोई कहे भगत ॥ ५

कोई आचरण (करनी) को बड़ा कहते हैं, तो कोई मुक्तिको अन्तिम लक्ष्य मानते हैं. कोई भावको श्रेष्ठ मानते हैं, तो कोई भक्तिको सर्वश्रेष्ठ मानते हैं.

कोई कहे किरंतन बडा, कोई कहे सरवन ।
कोई कहे बडी वंदनी, कोई कहे अरचन ॥ ६

कोई नाम संकीर्तनको तो कोई शास्त्र श्रवणको बड़ा मानता है. किसीके मतसे वन्दना (प्रार्थना) सर्वश्रेष्ठ है, तो किसीके लिए पूजा (अर्चना) श्रेष्ठ है.

कोई कहे ध्यान बडा, कोई कहे धारन ।
कोई कहे सेवा बडी, कोई कहे अरपन ॥ ७

किसीके मतमें अपने इष्टका ध्यान करना श्रेष्ठ है. कोई धारणा (अपनी वृत्तिको परमात्माकी ओर लगाना) को अधिक मान्यता देता है. कोई जनता-जनार्दनकी सेवाको उत्तम मानते हैं, तो कोई परमात्माके ऊपर सर्वस्व समर्पणको श्रेयस्कर मानते हैं.

कोई कहे संगत बडी, कोई कहे बडा दास ।
कोई कहे विवेक बडा, कोई कहे विस्वास ॥ ८

कितने लोग सत्संगको बड़ा मानते हैं, तो कोई दासभक्तिको अधिक प्रिय मानते हैं. कोई विवेकको श्रेष्ठ कहते हैं, तो कोई विश्वासको उत्तम मानते हैं.

कोई केहेवे स्वांत बडी, कोई कहे तामस ।
कोई केहेवे पन बडा, यों खेलें परे परबस ॥ ९

कितने लोग शान्तिको सबसे बड़ा कहते हैं, कोई तामस-अहङ्कारको महान मानते हैं. कोई प्रण (सङ्कल्प) को श्रेष्ठ कहते हैं. इस प्रकार सभी अपने-अपने मनके अधीन चले जा रहे हैं.

कोई कहे सदासिव बडा, कोई कहे आद नारायण ।
कोई कहे आदें आद माता, यों लरे तानों तान ॥ १०

कोई सदाशिवको बड़ा मानता है, तो कोई आदि नारायण भगवानको श्रेष्ठ मानता है. कई लोग आदि शक्ति (महामाया-सुमङ्गलाशक्ति) को सबसे बड़ा मानते हैं. इस प्रकार इष्टके विषयमें भी खींचातानी करते हुए झगड़ते हैं.

कोई कहे आतम बडी, कोई कहे पर आतम ।
कोई कहे अहंकार बडा, जो आद का उतपन ॥ ११

कोई आत्माको बड़ी मानता है तो कोई पर आत्माको. किसीके मतसे अहङ्कार ही सबसे बड़ा है, क्योंकि सृष्टि रचनासे पूर्व आदिकालमें वही उत्पन्न हुआ था.

कोई कहे सकल व्यापी, देखीतां सब ब्रह्म ।
कोई कहे ए ना लह्या, यों लरें भूले भरम ॥ १२

कोई तो ब्रह्मको सर्वव्यापक मानता है और कहता है कि जो कुछ भी दिखाई देता है वह सब ब्रह्म ही है. कोई कहते हैं कि ब्रह्म तो कहीं मिला ही नहीं. इस प्रकार सभी भ्रममें पड़कर झगड़ते हैं.

कोई कहे सुंन बडी, कोई कहे निरंजन ।
कोई कहे निरगुन बडा, यों लडे वेद वचन ॥ १३

कई साधक शून्यको ही बड़ी सत्ता मानते हैं. कई लोग ब्रह्मको निर्गुण तथा निरञ्जन कह देते हैं. इस प्रकार वेद-शास्त्रोंके विविध वचनोंको लेकर साधकलोग परस्पर उलझ रहे हैं.

कोई कहे आकार बडा, कोई कहे निराकार ।
कोई केहेवे तेज बडा, यों लडे लिए बिकार ॥ १४

कोई ब्रह्मको साकार मानता है, तो कोई निराकार मान लेता है. कोई तेज (ज्योतिस्वरूप) को बड़ा मानकर चलता है. इस प्रकार लोग मनोविकारोंमें पड़े हुए परस्पर लड़ते रहते हैं.

कोई कहे पारब्रह्म बडा, कोई कहे परषोतम ।
यों वेद के वाद अंधकारे, करें लडाई धरम ॥ १५

कई विवेकी जन पारब्रह्मको बड़ा कहते हैं, तो कोई पुरुषोत्तम नामसे उसीको

सबसे उत्तम मानता है. वेद-शास्त्रके नाना अर्थमय शब्दोंके भ्रम (अज्ञानान्धकार) में पड़े हुए लोग धर्मके नाम पर परस्पर लड़ रहे हैं.

जाहेर झूठा खेलहीं, हिरदे अति अंधेर ।
कहे हम सांचे और झूठे, यों फिरे उलटे फेर ॥ १६

ये लोग प्रत्यक्षरूपसे इस झूठे खेलमें खेल रहे हैं. उनके हृदयमें अज्ञानरूपी अन्धकार भरा हुआ है. इसलिए स्वयंको सत्य एवं दूसरेको असत्य सिद्ध करनेके प्रयासमें ऐसे ही उलटे चक्रमें भटक रहे हैं.

पंथ सारों की एह मजल, अनेक विध वैराट ।
ए जो विगत खेल की, सब रच्यो छल को ठाट ॥ १७

इन सभी पन्थों, सम्प्रदायोंकी अन्तिम भूमिका यही विविधतापूर्ण विराट (चौदह लोक) है. इस प्रकार मायावी जगतकी विचित्र गतिविधियाँ हैं. यह सम्पूर्ण नाटक ही छल-कपट पूर्ण मायाका वैभव है.

कोई हेम गले अगनी जले, कोई भैरव करवत ले ।
खसम को पावे नहीं, जो तिल तिल काटे देह ॥ १८

साधना पथ पर चलने वालोंमें कोई बर्फमें गल रहा है, तो कोई पञ्च अग्निमें तपता है. कोई भैरव झाँप खाता है, तो कोई करवत (आरे) पर कटकर मर जाता है. इस प्रकार शरीरके टुकड़े-टुकड़े कर देने पर भी परब्रह्म परमात्माको पाया नहीं जा सकता.

भेष जुदे जुदे खेलहीं, जाने खेल अखंड ।
ए देत देखाई सब फना, मूल बिना ब्रह्मांड ॥ १९

सबके सब अलग-अलग वेश धारण किए हुए इस झूठे खेलको अखण्ड मानकर खेल रहे हैं. यह ब्रह्माण्ड मूल-आधार बिनाका (स्वप्नवत्) होनेसे इसमें जो कुछ भी दिखाई दे रहा है, सब नाश हो जाने वाला है.

खसम एक सबन का, नाहिंन दूसरा कोए ।
ए विचार तो करे, जो आप सांचे होए ॥ २०

परमात्मा सबके एक ही हैं, उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है. इस रहस्य पर वे ही विचार कर सकते हैं, जो स्वयं सत्य अविनाशी आत्मा हैं.

खेलें सब बेसुध में, कोई बोल काढे विसाल ।
उतपन सारी मोह की, सो होए जाए पंपाल ॥ २१

इस प्रकार ये सब लोग बेसुध होकर इस खेलमें खेल रहे हैं तथाकथित ज्ञानी जन भी शास्त्र पढ़कर बड़े-बड़े वचन बोलकर मात्र विद्वत्ता ही दिखाते हैं. यह सारी सृष्टि ही मोहतत्त्वसे उत्पन्न हुई (असत्य) है. इसलिए एक दिन इसका अवश्य नाश हो जाएगा.

बिना दिवालें लिखिए, अनेक चित्रामन ।
सो क्यों पावे खुदको, जाको मूल मोह सुंन ॥ २२

यहाँ पर दीवार (भित्ती) के बिना ही अनेक चित्र बनाए जा रहे हैं, जिनकी उत्पत्ति ही शून्य, निराकार या मोहतत्त्वसे हुई है, वे सब परब्रह्मके अंशरूप आत्माको कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?

अनेक किव इत उपजे, वैराट सचराचर ।
ए छल मोहोरे छल को, खेलत हैं सत कर ॥ २३

इस सचराचर विराट ब्रह्माण्डमें अनेक कवि उत्पन्न हुए हैं जिन्होंने अनेक महाकाव्यों (ग्रन्थों) की रचना की है. किन्तु वे सभी छलमय जगतके नाटकके पात्र होनेसे इस जगतको ही सच्चा मानकर खेल रहे हैं.

प्रकरण १५ चौपाई ३६८

वैराटका कोहेडा

वैराट का फेर उलटा, मूल है आकास ।
डारें पसरी पाताल में, यों कहे वेद प्रकास ॥ १

इस विराट ब्रह्माण्डका चक्र ही उलटा है क्योंकि इस संसाररूप वृक्षका मूल

(उत्पत्ति) आकाशमें है तथा इसकी शाखाओंका विस्तार नीचे पातालकी ओर है. वेदोंने इस प्रकार स्पष्ट किया है.

फल डारें अगोचर, आडी अंतराए पाताल ।
वैराट वेद दोऊ कोहेडा, गूंथी सो छल की जाल ॥ २

इस संसार वृक्षके फल तथा शाखाएँ अगोचर (इन्द्रियातीत) हैं. यहाँ पर पातालसे लेकर वैकुण्ठ तक अज्ञानका पर्दा टँगा हुआ है. इसके कारण वैराट और वेद दोनों ही अज्ञानियोंके लिए पहेलीके समान उलझनें पैदा करते हैं. इस प्रकार मायावी जालके समान संसारकी रचना हुई है.

विध दोऊ देखिए, एक नाभ दूजा मुख ।
गूंथी जालें दोऊ जुगतें, मान लिए दुख सुख ॥ ३

वेद और वैराट दोनोंकी उत्पत्ति इस प्रकार है, शेषशायी नारायणके नाभि कमलसे ब्रह्माजीने प्रकट होकर इस वैराटमें सृष्टि की और उन्होंने ही अपने चतुर्मुखसे चारों वेदोंका गायन किया. इस प्रकार दोनोंने संसारके जीवोंको अपनी जालमें युक्तिपूर्वक गूँथ लिया है. इसीमें निमग्न होकर विश्वके समस्त प्राणी दु:ख-सुखको अपना भाग्य मान रहे हैं.

कोहेडे दोऊ दो भांत के, एक वैराट दूजा वेद ।
जीव जालों जाली बांधे, कोई जानें ना याको भेद ॥ ४

इन दोनों (वेद और वैराट) से उत्पन्न समस्याएँ (पहेलीके समान उलझनें) भी दो प्रकारकी हैं. एक ओर विस्तृत वैराटका पारिवारिक सम्बन्ध है, तो दूसरी ओर वेदका अथाह कर्मकाण्ड. जीव इनके नियमोंकी जालीमें इस प्रकार फँसा (बँधा) रहता है कि उससे निकल नहीं पाता. आज तक मायाके इस रहस्यको कोई नहीं जान पाया.

देखलावने तुम को, कोहेडे किए एह ।
बताए देऊं आंकडी, छल बल की है जेह ॥ ५

हे ब्रह्मात्माओ ! तुम्हें दिखानेके लिए ही पहेलीकी भाँति इस संसारकी रचना

की गई है. अब इस छल-बलयुक्त मायाके रहस्य (आँकड़ी) को मैं स्पष्ट करता हूँ.

आंकडी एक इन भांत की, बांधी जोरसों ले ।
आतम झूठी देखहीं, सांची देखे देह ॥ ६

इस मायावी रचनाका रहस्य ही इस प्रकारका है कि इसने सब जीवोंको फँसानेके लिए कर्मकाण्डके बन्धन जोरसे बाँध दिए हैं, इसलिए यहाँके प्राणी आत्माको झूठी और शरीरको सत्य मान बैठे हैं.

करे सगाई देह सों, नहीं आतमसों पेहेचान ।
सनमंध पालें इनसों, ए लई सबों मान ॥ ७

इसलिए लोग शरीरसे सम्बन्ध बाँधते हैं. उन्हें आत्माकी पहचान नहीं होती है. इस प्रकार लोग क्षणभङ्गुर शरीरके झूठे सम्बन्धोंके निर्वहनमें ही अपना सब कुछ मान लेते हैं.

नहवाए चरचे अरगजे, प्रीते जिमावे पाक ।
सनेह करके सेवहीं, पर नजर बांधी खाक ॥ ८

इस क्षणभङ्गुर शरीरको ही नहलाकर इस पर चन्दनका सुगन्धित लेप करते हैं, फिर बड़े प्यारसे इसे अच्छा भोजन करवाते हैं. बड़े स्नेहसे इसकी सेवा करते हैं. वस्तुतः इन सबकी दृष्टि तो नश्वर माटीकी काया (खाक) से ही बँधी है.

जीव गया जब अंग थें, तब अंग हाथों जालें ।
सेवा जो करते सनेह सों, सो सनमंध ऐसा पालें ॥ ९

जब शरीरसे जीव निकल जाता है तब अपने ही हाथोंसे उस पार्थिव शरीरको आगसे जला देते हैं. जिस शरीरकी सेवा-शुश्रूषा इतने प्यारसे करते थे, उसीके साथ ऐसा सम्बन्ध (व्यवहार) निभाते हैं.

हाथ पांउ मुख नेत्र नासिका, सब सोई अंग के अंग ।
तिन छूत लगाई घर को, प्यार था जिन संग ॥ १०

शरीरसे प्राण निकलनेके बाद भी हाथ, पाँव, मुख, आँख, नाक, कान ये

सारे अङ्ग तो यथावत् ही रहते हैं. किन्तु जिसके साथ इतना प्यार था, उसी शरीरने प्राण निकलते ही उस घरको अपवित्र बना दिया.

अंग सारे प्यारे लगते, खिन एक रह्यो न जाए ।
चेतन चले पीछे सो अंग, उठ उठ खाने धाए ॥ ११

जिस शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्ग इतने प्यारे लगते थे कि जिसका क्षणभरका वियोग भी सहन नहीं होता था, किन्तु चेतन आत्माके चले जाने पर वह (मृत) शरीर मानों उठकर खाने लगता हो, ऐसा हो जाता है.

सनमंधी जब चल गया, अंग बैर उपज्या ताए ।
सो तबहीं जलाए के, लियो सो घर बटाए ॥ १२

जब शरीरका सम्बन्धी (जीव) निकल गया तब उसी शरीरसे शत्रुता उत्पन्न हो गई. इसीलिए लोग उसी क्षण उस (शरीर) को जलाकर धन-सम्पत्ति, घर आदिका बँटवारा कर लेते हैं.

छोड सगाई आतम की, करे सगाई आकार ।
वैराट कोहेडा या विध, उलटा सो कै परकार ॥ १३

लोग आत्माके सम्बन्धको छोड़ कर मात्र शरीरसे ही सम्बन्ध जोड़ते हैं. इस प्रकार यह विश्व अनेक प्रकारकी विपरीत उलझनोंसे भरा हुआ है.

कै विध यों उलटा, वैराट नेत्रों अंध ।
चेतन बिना कहे छूत लागे, फेर तासों करे सनमंध ॥ १४

इस प्रकार यह संसार अनेक प्रकारसे उलटा है. समस्त ब्रह्माण्डके लोग आँखोंके होते हुए भी अन्धों जैसा व्यवहार करते हैं. चेतनाके बिना जिस शरीरको अशुद्ध समझकर त्याग देते हैं, फिर वैसे ही नश्वर शरीरोंके साथ सम्बन्ध जोड़ लेते हैं.

एक भेष जो विप्र का, दूजा भेष चंडाल ।
जाके छुए छूत लागे, ताके संग कौन हवाल ॥ १५

इसी प्रकारके नश्वर शरीरोंमें भी एक शरीर ब्राह्मणका है, तो दूसरा चण्डालका

है. जिस चण्डालको छूने मात्रसे कोई अपवित्र हो जाए, तो उसके साथ रहने पर फिर क्या गति होगी ?

चंडाल हिरदे निरमल, खेले संग भगवान ।
देखलावे नहीं काहूं को, गोप राखे नाम ॥ १६
अंतराए नहीं खिन की, सनेह सांचे रंग ।
एहेनिस द्रष्ट आतम की, नहीं देहसों संग ॥ १७

यदि वह चण्डाल निर्मल हृदयका हो और रात-दिन प्रभुके प्रेममें मस्त रहता हो एवं किसीको दिखाए बिना ही भजन (भक्ति) करता हुआ अपने हृदयमें गुप्तरूपसे प्रभुका नाम लेता हो, क्षण भरके लिए भी वह अपने इष्टसे दूर नहीं होता हो अपितु सदैव उसकी आत्म-दृष्टि बनी रहती हो और वह शरीरके सम्बन्धोंको भी महत्त्व नहीं देता हो.

विप्र भेष बाहेर द्रष्टि, षट करम पाले वेद ।
स्याम खिन सुपने नहीं, जाने नहीं ब्रह्म भेद ॥ १८
उदर कुटुम्ब कारने, उतमाई देखावे अंग ।
व्याकरन वाद विवाद के, अरथ करे कै रंग ॥ १९

इधर ब्राह्मणका वेश बनाया हुआ व्यक्ति बाह्य दृष्टि रखकर वेदानुसार शास्त्रोंका अध्ययन- अध्यापन, यजन-याजन (यज्ञ करना, कराना), ग्रहण-प्रतिग्रहण (दान लेना, देना) आदि षट्कर्मोंमें ही मग्न रहता है और परब्रह्म परमात्मा श्यामसुन्दरकी याद तो उसे स्वप्नमें भी न आती हो, तो वह ब्रह्मके वास्तविक रहस्यको नहीं जानता है. वह कुटुम्ब परिवार पोषण और अपनी उदर पूर्तिके लिए ही कर्मकाण्ड और शारीरिक स्वच्छताका ढोंग रचता है. व्याकरणके वाद-विवादमें पड़कर एक-एक शब्दके अनेक अर्थ निकालता है.

अब कहो काके छुए, अंग लागे छोत ।
अधम तम विप्र अंगे, चंडाल अंग उदोत ॥ २०

अब कहो, किसके स्पर्शसे छूत लगती है ? वस्तुतः ब्राह्मणका शरीर स्वच्छ होते हुए भी उसकी प्रकृति नीच है, इसलिए वह अधम है जबकि चण्डालका हृदय निर्मल होनेसे वह श्रेष्ठ है.

पेहेचान सबोंको देह की, आतम की नहीं द्रष्ट ।
वैराट का फेर उलटा, इन विध सारी सृष्ट ॥ २१

सबको नश्वर देहकी पहचान है. आत्म-दृष्टि किसीमें नहीं है. इस प्रकार वैराट (संसार) का यह सम्पूर्ण चक्र ही उलटा है तथा सारी सृष्टिकी ऐसी ही उलटी रीति है.

एक देखो ए अचंभा, चाल चले संसार ।
जाहेर है ए उलटा, जो देखिए कर बिचार ॥ २२

देखो, सारी दुनियाँ कैसी आश्चर्यजनक चाल चल रही है ? यदि अन्तरमें विचार कर देखा जाए, तो पता चलेगा कि वस्तुतः यहाँकी रीति ही उलटी है.

सांचे को झूठा कहें, और झूठे को कहें सांच ।
सो भी देखाऊं जाहेर, सब रहे झूठे रांच ॥ २३

यहाँ पर सत्य (आत्मा एवं परमात्मा) को असत्य और झूठे (स्वप्नवत् पिण्ड-ब्रह्माण्ड) को सत्य मानते हैं. यह भी मैं प्रत्यक्ष दिखाता हूँ कि इस असत्यमें लोग कैसे मग्न (एकरस) हो रहे हैं.

आकार को निराकार कहे, निराकार को आकार ।
आप फिरे सब देखें फिरते, असत यों निरधार ॥ २४

यहाँ पर लोग यथार्थ आकार (चिन्मय स्वरूप ब्रह्म) को निराकार कहते हैं और नश्वर पिण्ड-ब्रह्माण्डको साकार समझते हैं. कालके चक्रमें घूमने

वालोंको सब कुछ घूमता हुआ ही दिखाई देता है. निश्चय ही यह सब सृष्टि असत्य है.

मूल बिना वैराट खडा, यों कहे सब संसार ।
तो ख्वाब के जो दम आपे, ताए क्यों कहिए आकार ॥ २५

संसारके सब लोग ऐसा कहते हैं कि मूल आधारके बिना ही यह ब्रह्माण्ड खड़ा है. फिर स्वप्नके समान अस्तित्वहीन संसारको कैसे साकार कहा जाए ?

आकार न कहिए तिनको, काल को जो ग्रास ।
काल सो निराकार है, आकार सदा अविनास ॥ २६

कालके प्रवाहमें जिसकी मृत्यु हो जाती है, उसे आकारवान् नहीं कहा जा सकता क्योंकि काल (नश्वर) स्वयं निराकार होता है जबकि आकार सदा अविनाशी होता है.

जिन राचो मृगजल द्रष्टे, जाको नाम परपंच ।
ए छल मायाएं किया, ऐसे रचे उलटे संच ॥ २७

इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! ऐसे मृगजलके समान संसारमें मत फँसो, जिसका नाम ही प्रपञ्च (इन्द्रजाल) है. इस छलरूपिणी मायाने ही ऐसे उलटे सीधे खेल (ढाँचे) बनाए हैं.

प्रकरण १६ चौपाई ३९५

वेदका कोहेडा

अब कहूं कोहेडा वेद का, जाकी मीही गूंथी जाल ।
याकी भी नेक केहेके, देऊं सो आंकडी टाल ॥ १

वेदोंमें पहेलीके समान उलझाने वाली बहुत-सी बातें हैं, जिसमें कर्म, उपासना एवं ज्ञानरूपी बारीक जाली गूँथी गई है. इस विषयमें संक्षेपमें वर्णन कर उनका रहस्य खोल रहे हैं.

वैराट आकार ख्वाब का, ब्रह्मा सो तिनकी बुध ।
मन नारद फिरे दसों दिस, वेदें बांध किए बेसुध ॥ २

इस वैराटका आकार ही स्वप्नवत् है, इसमें ब्रह्माजी बुद्धिरूपमें विराजमान

हैं. (उनके द्वारा प्रसारित वेदोंके ज्ञानके द्वारा विश्वका सञ्चालन होता है.) मनरूपी नारद चञ्चल होकर सर्वत्र घूमता रहता है. इस प्रकार वैदिक कर्मकाण्डरूपी बन्धनोंमें पड़ कर सबलोग परमात्माके प्रति बेसुध बने हुए हैं.

लगाए सब रबदें, व्याकरन वाद अंधकार ।
या बुधें बेसुध हुए, विवेक खाली विचार ॥ ३

व्याकरणवाद (तर्क-वितर्क) ने सबको परस्पर वाद-विवादमें फँसाकर अन्धकारमें डाल दिया है (जबकि परमात्माकी भक्तिमें तर्कका कोई स्थान नहीं है). इस तर्क-वितर्ककी बुद्धिने सबको बेसुध बना दिया है, परिणाम स्वरूप विवेक और विचार उनसे दूर हट गए हैं.

बंध बांधे या विध, हर वस्त के बारे नाम ।
सो बानी ले बडी कीनी, ए सब छल के काम ॥ ४

इस प्रकारके नियम (बन्धन) बनाए गए हैं जिसके कारण सामान्य जन अर्थज्ञानके अभावमें बन्धनमें फँस जाते हैं. व्याकरणके शब्दज्ञानमें तो एक अक्षरकी बारह मात्रोओंमें खींचातानी होती है. इसीलिए पण्डितोंने इसे श्रेष्ठ माना है. वस्तुतः सामान्य लोगोंको छलनेका ही यह कार्य है.

लुगे लुगे के जुदे माएने, द्वादस के परकार ।
उलटाए मूल माएने, बांधे अटकलें अपार ॥ ५

अलग-अलग मात्राओंका अलग-अलग अर्थ करके एक ही शब्दके बारह प्रकारके अर्थ किए जाते हैं. इस प्रकार मूल अर्थको उलटा कर अनेक प्रकारके अनुमानोंमें ही सबको फँसा दिया गया है.

अरथ को डालने उलटा, अनेक तरफों ताने ।
मूंढों को समझावने, रेहेस बीच में आने ॥ ६

सत्य अर्थको विपरीत करनेके लिए पण्डित लोग शब्दको अनेक अर्थोंके लिए खींचते हैं. अज्ञानी लोगोंको समझानेके लिए कहते हैं कि उनके अर्थमें रहस्य छिपा हुआ है.

ऐसी कै आंकडियों मिने, बोलें बारे तरफ ।
रेहेस रंचक धरें बीचमें, समझाए ना किन हरफ ॥ ७

शास्त्रोंमें ऐसे अनेक रहस्य हैं जिनके अर्थ बारहों तरफ खींचे जा सकते हैं. ऐसे प्रसङ्गोंका अर्थ करने वाले अल्पज्ञ पण्डित (अपनी चातुर्यपूर्ण बुद्धि द्वारा) बीच-बीचमें रोचक वार्ताओंका समावेश कर लेते हैं किन्तु किसीको एक शब्द भी समझमें नहीं आता.

बारे तरफों बोलत, एक अक्षर एक मात्र ।
ऐसे बांध बतीस स्लोकमें, बडा छल किया है सास्त्र ॥ ८

ऐसे लोग एक-एक अक्षरमें एक-एक मात्रा लगाकर एक शब्दके बारह प्रकारके अर्थ करने लगते हैं. अनुष्टुप छन्दके एक श्लोकमें ऐसे बत्तीस अक्षरोंका समावेश हुआ है. इस प्रकार शास्त्रोंके श्लोकोंकी अलग-अलग व्याख्या कर अल्पज्ञोंने बड़ा छल किया है.

बारे मात्रा एक अक्षर, अक्षर स्लोक बतीस ।
छल एते आडे अरथ के, और खोज करें जगदीस ॥ ९

एक एक अक्षरमें बारह मात्राएँ होती हैं और अनुष्टुप छन्दवाले एक श्लोकमें बत्तीस अक्षर होते हैं. इस प्रकार अर्थ समझानेके लिए छल-कपटरूपी कई अवरोध हैं. ऐसे छल-कपटके माध्यम द्वारा पण्डित जन प्रभुकी खोज करते हैं.

अरथ आडे कै छल किए, तिन अरथों में कै छल ।
अक्षरा अरथ भी ना होवहीं, किया भावा अरथ अटकल ॥ १०

इस प्रकार एक अर्थके लिए भी कई प्रकारके छल-कपट होते हैं, तो अनेक अर्थोंमें कितने ऐसे छल-कपट होंगे ? जब शब्दार्थ भी बन नहीं पाता, तो भावार्थको तो अटकल द्वारा ही दर्शाया जाएगा.

जाको नामै संस्क्रत, सो तो संसेही की क्रत ।
सो अरथ द्रढ क्यों होवहीं, जो एती तरफ फिरत ॥ ११

जिसे देवभाषा संस्कृत कहा गया वही (अल्पज्ञोंके कारण) संशय और भ्रम

उत्पन्न करनेवाली भाषा हो गई है. जब एक शब्दका अर्थ ही इतना अधिक बदलने लगे, तब विचारोंमें दृढ़ता कैसे आ सकती है ?

सो पढे पंडित जुध करे, एक काने को टुकडे होए ।
आपसमें जो लड मरे, एक मात्रा ना छोडे कोए ॥ १२

ऐसे शब्दज्ञानधारी पण्डित धर्मयुद्ध अर्थात् शास्त्रार्थ करते समय शब्द और मात्राओंका विश्लेषण करते हुए परस्पर झगड़ने लगते हैं, किन्तु एक मात्राको छोड़ नहीं सकते.

ए बाद बानी सिर लेवहीं, सुध बुध जावे सान ।
त्रास स्वांत न होवे सुपने, ऐसा व्याकरन ग्यान ॥ १३

ऐसे वादविवादके वचनोंको सिरपर लेकर पण्डित लोग अपनी सुध-बुध और शान्ति खो बैठते हैं. ऐसे लोगोंको स्वप्नमें भी शान्ति नहीं मिलती. व्याकरणका बाह्यज्ञान (शब्दज्ञान) इस प्रकारका होता है.

ए बानी ले बडी कीनी, दियो सो छल को मान ।
सो खेंचाखेंच ना छूटहीं, लिए क्रोध गुमान ॥ १४

ऐसे शास्त्र वचनोंका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया जिसके कारण वाद-विवादको पोषण मिला. यही कारण है कि पण्डितोंकी परस्पर खींचातानी नहीं छूटती, क्योंकि वे अहङ्कार तथा क्रोधसे ग्रस्त हैं.

ए छल पंडित पढहीं, ताए मान देवें मूढ ।
बडे होए खोले माएने, एह चली छल रूढ ॥ १५

इस प्रकारका छलयुक्त ज्ञान सीखे हुए पण्डितोंको मूर्ख लोग अधिक सम्मान देते हैं. ऐसे पण्डित स्वयंको ज्ञानवान् मानकर शास्त्रोंका अर्थ समझाने लगते हैं. इस प्रकार छल-कपटपूर्ण रूढ़ीवादी परम्पराएँ चलने लगीं.

सीधी इन भाषा मिने, माएने पाइए जित ।
जो सबद सब समझहीं, सो पकडे नहीं पंडित ॥ १६

सीधी-सादी इस हिन्दी (हिन्दुस्तानी) भाषासे भी सभी अर्थ स्पष्ट हो सकते

हैं. किन्तु इस भाषाके शब्द सब कोई समझते हैं, इसलिए पण्डितजन इसे नहीं अपनाते.

एक अरथ ना करे सीधा, ए जाहेर हिंदुस्तान ।
अरथ को डालने उलटा, जाए पढे छल वान ॥ १७

यह हिन्दी (हिन्दुस्तानी) भाषा सबके लिए सुगम होने पर भी पण्डित जन इसके द्वारा सीधा अर्थ प्रकट नहीं करते. शास्त्रोंके अर्थोंको अपने अनुकूल बनाने (उलटाने) के लिए छलपूर्ण हृदयसे वे देवभाषा पढ़ते हैं.

ए खेल जाको सोई जाने, दूजा खेल सब छल ।
ए छलके जीव ना छूटे छल थें, जो देखो करते बल ॥ १८

इस मायावी संसारके खेलको वही आत्माएँ जान सकतीं हैं, जिनके लिए यह खेल बनाया गया है. अन्य संसारी जीवोंके लिए तो यह खेल छलमात्र है. इस छलयुक्त संसारके जीव कभी भी छलसे छूट नहीं सकते यद्यपि वे परमात्माकी प्राप्तिके लिए प्रयास तो करते हैं.

एक उरझन वैराटकी, दूजी वेद की उरझन ।
एक नेक कही मैं तुमको, पर ए छल है अतिघन ॥ १९

एक ओर वैराटकी उलझनें हैं तो दूसरी ओर वेदके कर्मकाण्डकी उलझन है. इनके विषयमें मैंने तुम्हें थोड़ा ही कहा है किन्तु मायाने ऐसे अनेक छल बनाए हैं.

मुख उदर के कोहेडे, रचे मिने सुपन ।
ए सुध काहूं ना परी, मिने झीले मोह के जन ॥ २०

शेषशायी नारायणके नाभिकमलसे उत्पन्न होकर ब्रह्माजीने चौदह लोकोमें स्वप्नवत् सृष्टिकी रचना की और अपने श्रीमुखसे वैदिक ज्ञानको अभिव्यक्त

किया. किन्तु यह सृष्टि स्वप्नके समान होनेके कारण किसीको भी पारकी सुधि नहीं हुई, क्योंकि मायाके जीव माया और मोहमें ही मग्न रहते हैं.

वैराट वेदों देख के, बूझ करी सेवा एह ।
देव जैसी पातरी, ए चलत दुनियां जेह ॥ २१

वेदोंने वैराट (संसार) के जीवोंको देखकर कर्मकाण्डका ज्ञान देनेकी यह महत्त्वपूर्ण सेवा की है, क्योंकि जैसे देवता क्षर ब्रह्माण्डके हैं वैसे ही उनके पूजक जीव भी क्षर ब्रह्माण्डके हैं. इस प्रकार संसारमें पूजा पद्धति चल रही है.

ए जो बोले साधु सास्त्र, जिनकी जैसी मत ।
ए मोहोरे उपजे मोहके, तिनको ए सब सत ॥ २२

इन शास्त्रोंको विद्वानोंने अपनी बुद्धिकी क्षमताके अनुसार ग्रहण कर ब्रह्मका निरूपण किया है. ये सब सम्प्रदाय (मत-मतान्तर) मोहसे उत्पन्न हुए हैं, इसलिए उनके लिए यह मोह (स्वप्नवत् संसार) ही सत्य प्रतीत होता है.

तबक चौदे देखे वेदों, निराकार लों बचन ।
उनमान आगे केहेके, फेर पडे मांहें सुंन ॥ २३

वेदों (वैदिक ऋषियों) ने चौदह लोकोंमें ब्रह्मको ढूँढते हुए निराकार पर्यन्तकी बात की. फिर भी ब्रह्मका पूर्ण अनुभव न होनेके कारण उन्होंने अनुमानसे कहा कि वह ब्रह्म तो इससे भी आगे है. इस प्रकार उनकी बुद्धि पुनः शून्य निराकारमें ही समाहित हो गई.

ए देखो तुम जाहेर, पांचों उपजे तत्त्व ।
ए मोह मिने मन खेलहीं, सब मन की उतपत ॥ २४

हे सुन्दरसाथजी ! इस बातको स्पष्ट समझो कि ये पाँचों तत्त्व मोहसे उत्पन्न हुए हैं. हमारा मन भी इसी मोहमें खेल रहा है. यह सारी सृष्टि अक्षरब्रह्मके मनसे उत्पन्न हुई है.

ए सारों में व्यापक, थावर और जंगम ।
सबन थें एक है न्यारा, याको जाने सृष्टिब्रह्म ॥ २५

यही मन स्थावर (पेड़ पौधे) और जङ्गम (पशुपक्षी) आदि समस्त सृष्टिमें व्याप्त है और इन सबसे अलग एक रूपमें अक्षर ब्रह्मके पास भी रहता है. ब्रह्मसृष्टि ही इस रहस्यको जान सकती हैं.

दसों दिस भवसागर, देखत एह सुपन ।
आवरन गृद मोह का, निराकार कहावे सुंन ॥ २६

भवसागरकी दसों दिशाओंमें सर्वत्र यही स्वप्न दिखाई देता है. मोहतत्त्वके आवरणने चौदह लोकोंको चारों ओरसे घेर लिया है जिसे शून्य निराकार कहते हैं.

ए इंड सारा कोहेडा, खेल चौदे भवन ।
सुर असुर कै अनेक भांते, हुआ छल उतपन ॥ २७

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं इसके चौदह लोकोंके खेल पहेलियोंके समान उलझनों से भरे हुए अन्धकार पूर्ण हैं. इसमें देव-दानव आदि विभिन्न प्रकारकी सृष्टि छलरूपी मायासे ही उत्पन्न हुई है.

वनसपति पसु पंखी, आदमी जीव जंत ।
मछ कछ सब सागर, रच्यो एह परपंच ॥ २८

इस संसारके वनस्पति, पशु-पक्षी एवं मनुष्य तथा अनेक प्रकारके जीव जन्तु, मगरमच्छ तथा कच्छप आदि अर्थात् यह सम्पूर्ण भवसागर ही मायावी प्रपञ्चकी ही रचना है.

जीवों मिने जुदी जिनसों, कहियत चारों खान ।
थावर जंगम सब मिलके, लाख चौरासी निरमान ॥ २९

यहाँ पर जीवोंमें भी अलग-अलग प्रकार है, जिनकी उत्पत्ति चार प्रकार (जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज) से हुई है. इस प्रकार स्थावर और जङ्गम सबको मिलाकर चौरासी लाख योनिकी रचना हुई.

[२० लाख स्थावर, ९ लाख जलचर, ११ लाख कीट, १० लाख पक्षी, ३० लाख चतुष्पाद, ४ लाख मनुष्य, इस प्रकार चौरासी लाख योनि गिनाई गई है.]

कोई वैकुंठ कोई जमपुरी, कोई सरग पाताल ।
सब खेलें ख्वाबी पुतले, आडी मोह सागर पाल ॥ ३०

यहाँ पर शुभकर्म करने वाले जीव वैकुण्ठ जाते हैं और अशुभ कर्म करने वाले यमपुरी जाते हैं. कुछ स्वर्गगामी हैं, तो कुछ पातालगामी हैं. सर्वत्र पाँच तत्त्वोंसे बने हुए शरीर (पुतले) पाँच तत्त्वोंसे निर्मित संसारमें रमण कर रहे हैं. इन सबके मुक्तिमार्गमें यह मोहसागर अवरोधक बना हुआ है.

जो बनजारे खेल के, तिन सिर जम को डंड ।
कोइक दिन सरग मिने, पीछे नरक के कुंड ॥ ३१

इस खेलको सम्पादन करने वाले जीवोंके सिर पर यमराजका भय बना रहता है. यद्यपि थोड़े समयके लिए शुभ कर्मोंका सुख भोगनेके लिए उन्हें स्वर्गमें रहनेका अवसर मिलता है परन्तु अन्ततः उन्हें नरक कुण्डका दुःख भोगना ही पड़ता है.

लाठी तेरे लोक पर, संजमपुरी सिरदार ।
जो जाने नहीं जगदीस को, तिन सिर जम की मार ॥ ३२

सतलोकको छोड़कर शेष तेरह लोकों पर यमपुरीके सिरदार यमराज (धर्मराज) का शासन है. जो वैकुण्ठाधिपति जगदीशको नहीं जानता है, उसे यमराजका भयानक दण्ड भोगना पड़ता है.

ए छल बनज छोड के, करे वैकुंठ वेपार ।
ए सत लोक इन का, कोई गले निराकार ॥ ३३

जो लोग इस खेलमें अशुभ कर्मोंका व्यापार छोड़कर (नवधा भक्तिद्वारा) वैकुण्ठका व्यापार करते हैं, ऐसे जीवोंका मोक्षस्थान सत लोक ही है तथा कुछ जीव वैकुण्ठके पार निराकार तक पहुँच जाते हैं.

तबक चौदे इंड में, जिमी जोजन कोट पचास ।
पहाड कुली अष्ट जोजन, लाख चौसठ बास ॥ ३४

इस ब्रह्माण्डके चौदह लोकोंमेंसे पृथ्वीका व्यास पचास करोड़ योजन का है. इस पृथ्वीको मर्यादित रखनेके लिए आठों दिशाओंमें आठ बड़े-बड़े पर्वत हैं और चौसठ लाख योजनमें ही वस्ती बसी हुई है.

पांच तत्व छठी आतमा, सास्त्र सबों ए मत ।
यों निरमान बांध के, ले सुपन किया सत ॥ ३५

यह शरीर पाँच तत्त्वका बना हुआ है तथा इसमें छठी विशुद्ध आत्मा है. प्रत्येक शास्त्रका यही मत है. इस प्रकार संसारकी रचनामें बँधकर आत्मा इस स्वप्नवत् झूठे संसारको सत्य मान लेती है.

देखे सातों सागर, और देखे सातों लोक ।
पाताल सातों देखिया, जागे पीछे सब फोक ॥ ३६

मैंने सातों सागर, ऊपरके सातों लोक तथा नीचेके सातों पाताल देख लिए हैं परन्तु आत्म-जागृति हो जानेके बाद यह सब झूठा प्रतीत होता है.

अवतारोंका प्रकरण

ए ऐसा था छल अंधेर, काहूं हाथ ना सूझे हाथ ।
बंध परे द्रष्ट देखते, तामें आया सारा साथ ॥ १

इस संसारमें अज्ञानरूपी अन्धकार इस प्रकार व्याप्त था कि एक हाथसे दूसरे हाथ तककी दूरी भी नहीं सूझती थी. इस पर दृष्टिमात्र डालने पर भी (जन्म लेते ही) मनुष्य बन्धनमें फँस जाता है. ऐसे अन्धकारमय संसारमें ब्रह्मात्माएँ आईं.

तो पिया मिने आए के, सब छुडाई सोहागिन ।
बोए के नूर प्रकासिया, बीज ल्याए मूल वतन ॥ २

इसलिए प्रियतम सद्गुरुने इस संसारमें आकर मायामें फँसी हुई ब्रह्मात्माओंको मायावी बन्धनोंसे मुक्त किया. वे अखण्ड घर परमधामसे

तारतम ज्ञानका बीज ले आए और इसे ब्रह्मात्माओंके हृदयमें आरोपित कर उनके हृदयको आलोकित किया.

ए खेल किया तुम खातर, तुम देखन आइयां जेह ।
खेल देख के चलसी, घर बातां करसी एह ॥ ३

हे ब्रह्मात्माओ ! यह मायावी संसारका खेल तुम्हारे लिए ही रचा गया है, जिसे देखनेके लिए तुम यहाँ आईं हो. इस खेलको देखकर हम सब पुनः परमधाम चलेंगे और वहाँ जाकर यहाँकी सारी बातें करेंगे.

तुम खेल देखन कारने, किया मनोरथ एह ।
ए माप्या तुम वास्ते, कोई राखूं नहीं सन्देह ॥ ४

तुमने इस जगत्के खेलको देखनेके लिए प्रबल इच्छा प्रकट की थी. इसलिए मैंने इस जगतका निरूपण किया कि तुम्हारे मनमें कोई सन्देह न रहे.

ए खेल सांचा तो देख्या, जो अखंड करूं फेर ।
पार वतन देखाए के, उडाऊं सब अन्धेर ॥ ५

'हम ब्रह्मात्माओंने इस खेलको भली-भाँति देखा' यह तभी माना जाएगा जब हम इसे अखण्ड कर दें. इसलिए अब मैं परमधामका मार्ग प्रशस्त कर संसारके अज्ञानरूपी अन्धकारको दूर कर देता हूँ.

ए दसों दिसा लोक चौद के, विचार देखे वचन ।
मोह सागर मथके, काढे सो पांच रतन ॥ ६

इन चौदह लोकों, दसों दिशाओंके सभी शास्त्र वचनोंका भली-भाँति अवलोकन कर मैंने पूरे भवसागरका मन्थन किया और इसमेंसे पाँच रत्न निकाले अर्थात् उत्तम ज्ञानकी धाराको प्रवाहित करनेवाले पाँच रत्नों (पञ्च वासनाओं) को परखा.

पेहेले कहे मैं साथ को, इन पांचोंके नाम ।
सुकदेव और सनकादिक, कबीर सिव भगवान ॥ ७

मैंने सुन्दरसाथको पहलेसे ही इन पाँच रत्नों (पञ्च वासनाओं) के नाम कह दिए हैं. इनमें एक हैं शुकदेव मुनि, दूसरे हैं ब्रह्माजीके मानस पुत्र सनकादि,

तीसरे कबीरजी, चौथे महादेवजी और पाँचवें विष्णु भगवान हैं.

नारायण विष्णु एक अंग, लखमी याथें उतपन ।
एह समावे याही में, ए नहीं वासना अन ॥ ८

भगवान नारायण और विष्णु दोनों एक ही रूप हैं और लक्ष्मीजीकी उत्पत्ति इन्हींसे हुई है तथा ये स्वरूप अन्तमें नारायणजीमें ही समाहित होते हैं, इसलिए इन्हें भिन्न न समझें.

और एक कागद काढिया, सुकदेवजी का सार ।
हदियों का कोहेडा, बेहदी समाचार ॥ ९

इस मोह सागरके मन्थनसे पुनः एक साररूपमें शुकदेवजी द्वारा लाया गया पत्र (श्रीमद्भागवत) निकाला. यह भागवत ग्रन्थ संसारी (अज्ञानी) प्राणियोंके लिए एक उलझन रूप पहेली है, किन्तु ब्रह्ममुनियों (बेहदी) का यह समाचार है.

अवतार चौबीस विस्नु के, वैकुंठ थें आवे जाए ।
ए विध जाहेर त्यों करूं, ज्यों सनंध सब समझाए ॥ १०

विष्णु भगवानके चौबीसों अवतार वैकुण्ठ धामसे आते हैं तथा अपना कार्य पूर्ण होने पर वहीं लौट जाते हैं. इन अवतारोंका विवरण इसलिए प्रकट कर रहा हूँ कि सबको वास्तविकता समझमें आ जाए.

अवतार एकैस इनमें, तिन आडा हुआ कलपांत ।
और कहावे तीन बडे, भी कहूं तिनकी भांत ॥ ११

इन चौबीस अवतारोंमें इक्कीस अवतार ऐसे हुए हैं जो कल्पान्त भेदके अन्तर्गत प्रलयमें आ जाते हैं. परन्तु शेष तीन अवतार बड़े कहे गए हैं (जो अखण्ड धामकी लीलाके साथ सम्बन्धित हैं). उन तीनोंका अलग-अलग रहस्य स्पष्ट कर रहा हूँ.

अवतार एक श्रीकृस्न का, मूल मथुरा प्रगट्या जेह ।
दीदार देवकी वसुदेव को, दिया चत्रभुज एह ॥ १२

इन तीनोंमें एक अवतार श्रीकृष्णका है, जो मूलतः मथुरामें प्रकट हुए हैं.

वहाँ उन्होंने चतुर्भुज स्वरूप धारण कर वसुदेव और देवकीको दर्शन दिया.

वचन कहे वसुदेव को, फिरे वैकुंठ अपनी ठौर ।
पीछे प्रगटे दोए भुजा, सो सरूप सनंध और ॥ १३

वे चतुर्भुजस्वरूप वसुदेवको (पूर्णब्रह्मका प्राकट्य एवं उनको गोकुल ले जाने सम्बन्धी उपदेश) वचन कह कर वैकुण्ठ लौट गए. पश्चात् दो भुजा स्वरूप श्री कृष्णका आविर्भाव हुआ, उनका स्वरूप और उनकी लीला उनसे भिन्न है.

वसुदेव गोकल ले चले, ताए न कहिए अवतार ।
सो तो नहीं इन हद का, अखंड लीला है पार ॥ १४

वसुदेव जिन श्रीकृष्ण (दो भुजास्वरूप) को गोकुल ले गए वे भगवान विष्णुके अवतार नहीं है. वे इस क्षरब्रह्माण्डके नहीं हैं अपितु अखण्ड लीला–परमधामके स्वरूप हैं.

ए कही सब तुम समझावने, भांनने मनकी भ्रांत ।
बेहद विस्तार है अति बडा, या ठौर आडा कलपांत ॥ १५

हे ब्रह्मात्माओ ! इस रहस्यको समझकर अपने मनकी भ्रान्तिको मिटानेके लिए तुम्हें यह समझाया जा रहा है. श्री कृष्णजीकी बेहद लीलाका विस्तार बहुत बड़ा है. इस भूमिकाको समझनेमें कल्पान्त भेद अवरोधक बन जाता है.

भी कहूं तुमें समझाए के, तुम भांनो धोखा मन ।
अवतार सो अक्रूर संगे, जाए लई मथुरा जिन ॥ १६

मैं तुम्हें और भी रहस्य स्पष्ट कह देता हूँ, जिससे तुम अपना मनका सन्देह मिटा सको. अक्रूरके साथ मथुरामें जाकर (कंसादिका वध कर) मथुराको अधीन करनेवाले श्री कृष्णको अवतार कहा है.

इनमें भी है आंकडी, बिना तारतम समझी ना जाए ।
सो तुम दिल दे समझियो, नीके देऊं बताए ॥ १७

इन लीलाओंमें भी एक गुत्थी (आँकडी) है. तारतम ज्ञानके बिना यह रहस्य

समझमें नहीं आता है. इसलिए हे ब्रह्म आत्माओ ! तुम दिल लगाकर मेरी बात सुनो. इन सभी गुत्थियोंको खोलकर मैं तुम्हें समझाता हूँ.

सात चार दिन भेष लीला, खेले गोवालों संग ।
सात दिन गोकल मिने, दिन चार मथुरा जंग ॥ १८

अखण्ड रासलीलाके बाद गोपियों तथा ग्वालोंके साथ की गई ग्यारह दिनकी लीलाको वेश (भेष) लीला कहा गया है. उसमें सात दिन गोकुलमें लीला की तथा चार दिन मथुरामें युद्ध किया. (यह अक्षर ब्रह्म स्वरूप गोलोकीनाथकी लीला मानी गई है.)

धनुष भान गज मल मारे, तब हुए दिन चार ।
पछाड कंस वसुदेव छोडे, या दिन थें अवतार ॥ १९

उन्होंने मथुरा पहुँचकर धनुष भङ्ग किया. कुबलयापीड़ हाथीको मारा तथा चाणूर एवं मुष्टिक आदि पहलवानोंका संहार किया. कंसको मारकर वसुदेव तथा देवकीको बन्धन मुक्त किया, इतनेमें चार दिन व्यतीत हो गए. अब यहाँसे विष्णु भगवानके अवतार कहलाए.

अब आई बात हदकी, हिसाब चौदे भवन ।
सब बात इत याही की, कहे अटकलें और वचन ॥ २०

अब यहाँसे क्षर ब्रह्माण्ड (हद) का प्रसङ्ग है. क्षर ब्रह्माण्डके चौदह लोकोंका तो मूल्याङ्कन किया गया है. अब होनेवाली सभी लीलाएँ इसी ब्रह्माण्डकी हैं. लोग (तारतम ज्ञानके अभावमें) अटकलों द्वारा इन लीलाओंकी बात करते हैं.

जुध किया जरासिंधसों, रथ आउध आए छिन मांहिं ।
तब कृस्न विस्नुमय भए, वैकुंठ में विस्नु तब नांहिं ॥ २१

मथुरामें श्री कृष्णजीने जरासन्धके साथ युद्ध किया, उस समय वैकुण्ठसे रथ तथा अस्त्र-शस्त्र क्षणमात्रमें आए. तब श्री कृष्ण विष्णुमय बन गए (उस समय वैकुण्ठसे विष्णु भगवानकी सोलह कलाएँ यहाँ चलीं आईं). उस समय वैकुण्ठमें विष्णु भगवान नहीं रहे.

वैकुंठ थें जोत फिर आई, सिसपाल किया हवन ।
मुख समानी श्रीकृस्न के, यों कहे वेद बचन ॥ २२

जब श्री कृष्णजीने सुदर्शन चक्र द्वारा शिशुपालके मस्तकको काट डाला तब उसकी आत्मा वैकुण्ठमें जाकर पुनः लौट आई और श्री कृष्णके मुखमें समाहित हो गई. इसकी साक्षी शास्त्रोंमें दी गई है. (इसीसे सिद्ध होता है कि उस समय विष्णु भगवान वैकुण्ठमें नहीं थे, अपितु सम्पूर्ण कलाओंके साथ मृत्युलोकमें आए थे.)

किया राज मथुरा द्वारका, वरस एक सौ और बार ।
प्रभास सब संघार के, जाए खोले वैकुंठ द्वार ॥ २३

इस प्रकार श्री कृष्णजीने मथुरा तथा द्वारकामें एक सौ बारह वर्ष तक राज्य किया और प्रभास पाटणमें यादवोंका संहार कर वैकुण्ठ प्रस्थान किया.

गोप हुता दिन एते, बडी बुध का अवतार ।
नेक अब याकी कहूं, ए होसी बडो विस्तार ॥ २४

इतने दिनों तक (रासलीलाके बाद अभी तक) अक्षर ब्रह्मकी महान बुद्धिका अवतार गुप्त था. अब इस (बुद्धजीके) अवतारका अति संक्षेपमें वर्णन करता हूँ. भविष्यमें इसका विस्तारपूर्वक वर्णन होगा.

कोइक काल बुध रास की, लई ध्यानमें सकल ।
अब आए बसी मेरे उदर, वृध भई पल पल ॥ २५

कुछ समय (पाँच हजार वर्ष) तक अक्षरब्रह्मकी बुद्धि रास लीलाको ग्रहण कर ध्यानावस्थामें बैठी रही. अब उसी बुद्धिने आकर हमारे हृदयस्थलमें वास किया तथा वह (तारतमका बल प्राप्त कर) प्रतिक्षण बढ़ने लगी.

अंग मेरे संग पाई, मैं दिया तारतम बल ।
सो बल ले वैराट पसरी, ब्रह्मांड कियो निरमल ॥ २६

इस अक्षरकी बुद्धिने हमारा संग प्राप्त किया, तब मैंने उसे तारतमकी शक्ति प्रदान की. इसी शक्तिको लेकर वह पूरे ब्रह्माण्डमें विस्तृत हुई और ब्रह्माण्डके जीवोंको निर्मल बना दिया.

दैत कालिंगा मार के, सब सीधा होसी ततकाल ।
लीला हमारी देखाए के, टालसी जम की जाल ॥ २७

विकराल कलियुगरूपी राक्षस (दज्जाल) को यह मार देगी जिससे दुनियाँकी आसुरीवृत्ति तत्काल सीधी हो जाएगी. उन्हें हमारे अखण्ड परमधाम (अक्षरातीत) की लीला दिखाकर यमराजके जाल (जन्म-मरणरूपी जाल) से मुक्त करेगी.

दैत ऐसा जोरावर, देखो व्याप रह्या वैराट ।
काम क्रोध अहंकार ले, सब चले उलटी बाट ॥ २८

यह कलियुगरूपी राक्षस बड़ा शक्तिशाली है. देखो, यह (आसुरी वृत्तिके रूपमें) समग्र संसारके लोगोंमें व्याप्त है. इसलिए सब लोग काम, क्रोध, अहङ्कार लेकर उलटे मार्ग पर चल रहे हैं.

याको संघारसी एक सबदसों, बेर ना होसी लगार ।
लोक चौदे पसरसी, इन बुध सबदको मार ॥ २९

बुद्धजी एक ही शब्दमें इस कलियुगका संहार करेंगे. उन्हें इसका नाश करनेमें क्षण मात्रका समय भी नहीं लगेगा. चौदह लोकमें बुद्धजीके शब्दों (अखण्ड वाणी) का प्रवाह फैल जाएगा.

वैराट सारा लोक चौदे, चले आप अपनी मत ।
मन माने खेलें सब कोई, ग्रास लिए असत ॥ ३०

चौदह लोक सहित यह सम्पूर्ण संसार अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार चल रहा है. यहाँ पर सब कोई असत्य वस्तु ग्रहण कर खेल रहे हैं.

मैं मारूं तो जो होए कछुए, ना खमें हरफ की डोट ।
मेरी बुध के एक लवे से, ऐसे मरे कोटान कोट ॥ ३१

यदि कलियुगरूपी दज्जालका कोई अस्तित्व होता तो मैं इसे मार देता. यह मेरी जागृत बुद्धि (तारतम ज्ञान) के एक शब्दको भी सहन नहीं कर सकता, क्योंकि मेरी बुद्धिके एक अंश मात्रसे ऐसे करोड़ों दज्जाल नाश हो सकते हैं.

उठी है बानी अनेक आगम, याको गोप है उजास ।
वैराट सनमुख होएसी, बुध नूर के प्रकास ॥ ३२

बुद्धावतारके विषयमें पहले अनेक भविष्यवाणियाँ हुई हैं और यह भी कहा गया है कि अभी तक उसका प्रकाश गुप्त रहा है. अब बुद्धजीके तारतम ज्ञानके प्रकाशमें सम्पूर्ण विश्वके प्राणियोंके सामने इन भविष्यवाणियोंका अर्थ प्रकट होगा.

चलसी सब एक चालें, दूजा मुख ना बोले वाक ।
बोले तो जो कछू होए बाकी, फोड उडायो तूल आक ॥ ३३

अब विश्वके सभी प्राणी एक ही मतानुसार एक ही मार्ग पर चलेंगे. अक्षर-अक्षरातीतके अतिरिक्त अन्य किसी वाणीका उच्चारण नहीं करेंगे. क्योंकि तभी कोई अन्य बात कर सकता है जब बुद्धजीके ज्ञान द्वारा कुछ कहना शेष रह गया हो. बुद्धजीके ज्ञानने आँककी रूईके रेशाकी भाँति अज्ञानताको जड़से उखाड़कर फैंक दिया है अर्थात् चौदह लोकको मिथ्या सिद्ध कर दिया है.

अब एह वचन कहूं केते, देसी दुनियां को उधार ।
मेरे संग आए बडी निध पाई, सो निराकार के पार ॥ ३४

अब मैं इन वचनोंके विषयमें कहाँ तक कहूँ ? ये वचन तो दुनियाँका उद्धार कर देंगे. अक्षरब्रह्मकी बुद्धिने मेरे साथ आकर निराकारके पार परमधामकी इस अखण्ड सम्पत्ति (तारतम ज्ञान) को प्राप्त किया है.

पार बुध पाए पीछे, याको होसी बडो मान ।
अक्षर नेक ना छोडे न्यारी, ए उदयो नेहेचल भान ॥ ३५

अखण्ड परमधामका तारतम ज्ञान प्राप्त करनेके बाद अक्षरकी बुद्धिको प्रतिष्ठा (सम्मान) प्राप्त होगी. अब अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी सूर्यका उदय हो गया है, इसलिए अक्षरब्रह्म इसे क्षण मात्रके लिए भी नहीं छोड़ेंगे.

अवतार जो नेहेकलंक को, सो अस्व अधूरो रह्यो ।
पुरुष देख्यो नहीं नैनों, तुरी को कलंकी तो कह्यो ॥ ३६

चौबीस अवतारोंमेंसे जो तीन अवतार बड़े कहे गए हैं, उनमें

निष्कलङ्कावतारका सङ्केत बिना सवारीका घोड़ा बताया है. उसके तीन पैर पृथ्वी पर हैं और एक पैर ऊँचा उठा हुआ है तथा घोड़े पर कोई सवार न होनेके कारण उसे अधूरा कहा गया है. उस घोड़े पर आरोहण करने वाले पुरुषको शुकदेव मुनि अपनी आँखोंसे न देख सके. इसलिए घोड़ेको कलङ्कित कहा गया (आरोही मिलने पर घोड़ा चारों पैर पृथ्वी पर रखेगा तभी निष्कलङ्क कहलाएगा).

अवतार या बुध के पीछे, अब दूसरा क्यों कर होए ।
विकार काढे विस्व के, सब किए अवतार से सोए ॥ ३७

इस बुद्ध अवतारके बाद अब दूसरा अवतार किस प्रकार होगा ? क्योंकि अक्षरातीतके अखण्ड ज्ञानद्वारा सांसारिक प्राणियोंके विकारोंको दूर करके उन्हें भी अवतारी पुरुषोंकी भाँति ही बना दिया.

अवतार से उतम हुए, तहां अवतारका क्या काम ।
जहां जमे हुआ सब का, दूजा नेक न राख्या नाम ॥ ३८

(अखण्ड परमधाम तथा अक्षरातीतके तारतम ज्ञानके प्रसार एवं प्रकाशके कारण) संसारके मनुष्य भी (कथनी तथा रहन-सहनमें) अवतारोंसे भी उत्तम हो गए हैं. ऐसी स्थितिमें अब अवतारोंका प्रयोजन ही क्या रहा ? इस एक ही अवतारमें सभी अवतारोंकी शक्ति तथा ज्ञानराशि समाविष्ट हो गई है, इसलिए अन्य किसी अवतारका नाम नहीं रखा गया.

जहां पैए पाए पार के, हुआ नेहेचल नूर प्रकास ।
तित अगिए अवतार में, इत क्या रह्या उजास ॥ ३९

इस निष्कलङ्क बुद्धावतारने तारतम ज्ञानके द्वारा सबको मुक्तिका मार्ग दिखा दिया है तथा उसके द्वारा सर्वत्र अखण्ड तारतम ज्ञानका प्रकाश फैल गया है. अब पहलेके अवतारोंमें क्या रह गया ? (सब निस्तेज हो गए).

समझियो तुम या विध, अवतार ना होवे अन ।
पुरुष तो पेहेले ना कह्यो, विचार देखो वचन ॥ ४०

हे सुन्दरसाथजी ! इस प्रकार समझ लेना कि अब कोई दूसरा अवतार नहीं

होगा, क्योंकि घोड़े पर सवार होनेवाले पुरुषके विषयमें पहले भी कुछ कहा नहीं गया. इन वचनोंको विचारपूर्वक देखो.

प्रकरण १८ चौपाई ४७१

गोकल लीला

जिन किनको धोखा रहे, जुदे कहे अवतार ।
तो ए किनकी बुधें विस्नु को, जगाए पोहोंचाए पार ॥ १

किसीको भी इन अवतारोंको समझनेमें शंङ्का न रहे, इसलिए मैंने अलग-अलग अवतारोंका पृथक्-पृथक् वर्णन किया है, अन्यथा इन अवतारोंमें-से किसकी बुद्धिने विष्णु भगवानकी आत्माको जागृत करके पार तक पहुचाया है ?

सुकें अवतार सब कहे, पर बुध में रह्या उरझाए ।
ए भी सीधा ना केहे सक्या, तो क्यों इन कही जाए ॥ २

श्री शुकदेव मुनिने अन्य सब अवतारोंका वर्णन किया किन्तु बुद्धावतारके सम्बन्धमें वे भी उलझ गए. जब वे स्वयं भी स्पष्ट न कर सके, तो अन्य लोग इस सन्दर्भमें कैसे कुछ कह सकते हैं ?

ए तो अक्षरातीत की, लीला हमारी जेह ।
पेहेलें संसा सबका भांन के, पीछे भी नेक कहूं विध एह ॥ ३

यह बुद्ध अवतारकी लीला तो अक्षरातीत पूर्णब्रह्मकी तथा हमारी लीला है. अब सर्व प्रथम सबकी शङ्काओंको मिटा कर फिर इस लीलाका थोड़ा-सा वर्णन करूँगा.

वैराट की विध कही तुमको, जिन कछू राखों संदेह ।
अखंड गोकल और प्रतिबिंब, ए भी समझाऊं दोए ॥ ४

हे सुन्दरसाथजी ! मैंने तुम्हें वैराटका सम्पूर्ण विवरण कहा ताकि किसीके मनमें किसी भी प्रकारका सन्देह न रह जाए. अब अखण्ड गोकुल तथा प्रतिबिम्ब गोकुल लीलाका वर्णन कर समझा रहा हूँ.

ए खेल देख्या तो सांचा, जो अखंड करूं इन बेर ।
पार वतन देखाए के, सब उडाऊ अंधेर ॥ ५

हम ब्रह्मात्माओंने इस नश्वर जगतको देखा, यह बात तभी सार्थक मानी जाएगी जब मैं इस बार इसे अखण्ड कर दूँ. तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामका मार्ग बताकर सबके अन्धकारको उड़ा दूँ.

अंतराए नहीं एक खिन की, अखंड हम पें उजास ।
रास लीला श्रीकृस्न गोपी, खेलें सदा अविनास ॥ ६

हमारे पास धामधनी प्रदत्त तारतम ज्ञानका अखण्ड प्रकाश है, इसलिए एक क्षणके लिए भी उनके साथ हमें वियोगका अनुभव नहीं हो रहा है. इसी ज्ञानके द्वारा यह स्पष्ट होता है कि श्रीकृष्णजी तथा गोपिकाओंके द्वारा रचाई गई रास लीला सदा अखण्ड अविनाशी है.

प्रतिबिंब लीला या दिन थें, फेर के गोकल आए ।
चले मथुरा द्वारका, वैकुंठ बैठे जाए ॥ ७

(अखण्ड रास लीला पूर्णकर अक्षरातीतके आवेश एवं ब्रह्मात्माओंकी सुरताके परमधाम लौटने पर इस तीसरे ब्रह्माण्डकी रचना कर) अक्षरब्रह्म श्री कृष्णजीके रूपमें गोकुलमें आए, तबसे प्रतिबिम्ब लीला आरम्भ हुई. फिर श्री कृष्णजी मथुरा चले गए, वहाँ चार दिन तक उनमें अक्षरब्रह्मका आवेश रहा. अब आगे द्वारिका आदिकी लीला कर भगवान विष्णुके अवतार स्वरूप श्री कृष्णजी पुनः वैकुण्ठ लौट जाते हैं.

तारतम नूर प्रगट्या, तिन तेजें फोरयो आकास ।
लागी सिखर पाताल लों, अब रेहे ना पकरयो प्रकास ॥ ८

अब तारतम ज्ञानका प्रकाश उदय हुआ. उसका तेज आकाशको फोड़कर पातालसे लेकर वैकुण्ठ तक फैल गया. अब यह प्रकाश पकड़ा नहीं जा सकता.

किरना सबमें कुलांभियां, गयो वैराट को अग्यान ।
द्रढाए चित चौदे लोकको, उडाए दियो उनमान ॥ ९

इस अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी सूर्यकी किरणें सर्वत्र व्याप्त हो गईं हैं.

परिणामतः संसारका अज्ञानरूप अन्धकार दूर हो गया है. चौदह लोकोंके प्राणियोंके हृदयोंमें उपरोक्त तथ्य अङ्कित हो गया तथा इसने दुनियाँके जीवके ब्रह्म विषयक अनुमानको भी उड़ा दिया.

अब जोत पकरी ना रहे, बीच में बिना ठौर ।
पसरके देखाइया, व्रज अखंड जो और ॥ १०

अब तारतम ज्ञानकी ज्योति अखण्ड स्थानके बिना बीचमें नहीं रुकेगी, अर्थात् इसने सर्वत्र फैल कर अखण्ड व्रजलीलाको प्रकाशित किया, जो इस संसारके व्रजसे भिन्न है.

बताए देऊं विध सारी, व्रज बस्यो जिन पर ।
अग्यारे वरस लीला करी, रास खेल के आए घर ॥ ११

व्रजमण्डल जिस प्रकार बसा हुआ है, अब मैं वह सम्पूर्ण वृत्तान्त समझा रहा हूँ. वहाँ श्री कृष्णजीने हम ब्रह्मात्माओंके साथ ग्यारह वर्षों तक लीला की तथा उसके बाद अखण्ड रासलीला कर हम सब मूलघर परमधाममें पल भरके लिए आईं.

गोकल जमुना त्रट भला, पुरा व्यालीस बास ।
पुरा पासे एक लगता, ए लीला अखंड विलास ॥ १२

यमुनाजीके रमणीय तट पर बयालीस मुहल्लोंमें गोकुल गाँव बसा हुआ है. ये मोहल्ले एक दूसरेसे जुड़े हुए हैं. यहीं अखण्ड लीला विलास हुआ है.

बास बस्ती बसे घाटी, तीन खूंने गाम ।
कांठे पुरा टीबा ऊपर, उपनंद का ए ठाम ॥ १३

व्रजमण्डलकी बस्ती अति सघन है. यह त्रिकोणाकार ग्राम है. एक किनारे पर छोटेसे पहाड़ पर एक ग्राम बसा है. इसे उपनन्दका स्थान कहा जाता है.

तरफ दूजी पुरे सारे, बीच बाट धेन का सेर ।
इत खेले नंद नंदन, संग गोवालों के घेर ॥ १४

अन्य सभी मुहल्ले दूसरी ओर हैं. बीचमें गायोंके आवागमनका मार्ग है. यहाँ

पर नन्द-नन्दन श्री कृष्णजी सबके घरोंमें ग्वाल-बालों सहित प्रेम विनोदकी लीलाएँ करते हैं.

पुरा पटेल सादूल का, बसे तरफ दूजी ए ।
तरफ तीसरी वृषभानजी, बसे नाके तीनों ले ॥ १५

यहीं पर दूसरी ओर सादूल नामके मुखिया (पटेल) का मुहल्ला बसा हुआ है. तीसरी ओर वृषभानजी रहते हैं, इस प्रकार तीनों मुहल्ले तीन कोनोंको घेर कर बसे हुए हैं.

नंदजी के पुरे सामी, दिस पूरव जमुना त्रट ।
छूटक छाया वनसपति, वृध आडी डालों बट ॥ १६

नन्दजीके मुहल्लेके सामने पूर्व दिशामें यमुनाजीका तट है. जहाँ थोड़े-थोड़े अन्तर पर लगाए गए वृक्ष पृथक्-पृथक् छाया दे रहे हैं तथा बरगदके पेड़की टेड़ी-मेढ़ी फैली हुई शाखाएँ अत्यन्त शोभायमान लग रहीं हैं.

सकल वन छाया भली, सोभित जमुना किनार ।
अनेक रंगे बेलियां, फल सुगन्ध सीतल सार ॥ १७

सम्पूर्ण वनमें वृक्षोंकी छाया सघन है जिससे यमुनाजीका तट भी अत्यन्त शोभायमान रहता है. रङ्ग-बिरङ्गी लताओं तथा फल-फूलोंसे शीतल मन्द एवं सुगन्धयुक्त हवा आ रही है.

तीन पुर तीन मामों के, बसें ठाट बस्ती मिल ।
आप सूरे तीनों ही, पुरे नंदके पाखल ॥ १८

नन्दजीके मुहल्लेके साथ-साथ श्री कृष्णजीके तीन मामाओंके तीन मुहल्ले (गाँव) हैं. वे सबके साथ मिलकर बड़े ठाट-बाटसे रहते हैं एवं तीनों स्वयं भी बड़े शूरवीर हैं.

गांगा चांपा और जेता, ए मामा तीनों के नाम ।
दखिन दिस और पछिम दिस, बसे फिरते गाम ॥ १९

गाङ्गा, चाँपा तथा जेता ये तीन श्री कृष्णजीके मामाओंके नाम हैं. यह गाँव दक्षिण तथा पश्चिम दिशाकी ओर फैला हुआ है.

नंदजी के आठ मंदिर, मांडवे एक मंडान ।
पीछे बाडे गौओं के, तामें आथ सरवे जान ॥ २०

श्री नन्दबाबाके आठ घर हैं. बीचमें एक ही चौक है. पीछे के भागमें गोशाला है. उसमें गोधन (और तत्सम्बन्धी सामग्री) सर्वरूपसे परिपूर्ण है.

रेत झलके आंगने, दूध चरी चूल्हा आगल ।
आइजी इन ठौर बैठें, और बैठें सखियां मिल ॥ २१

बीचके चौकमें रेत चमक रही है. आगेके भागमें चार मुखवाला चूल्हा (चरि-चूल्हा) दूध गरम करनेके लिए बनाया गया है. माता यशोदा यहाँ बैठतीं हैं और उन्हें घेरकर सब सखियाँ बैठतीं हैं.

मंदिर मोदी तेजपाल को, इत चरी चूल्हा पास ।
कोइक दिन आए रहे, याको मथुरा में बास ॥ २२

इस चरिचूल्हेके पास तेजपाल नामक एक व्यापारीका घर है. वह कभी-कभी व्यापार कार्य हेतु यहाँ आकर रहता है. वैसे तो उसका रहना मथुरामें होता है.

सरूप दस इत आरोगे, पाक साक अनेक ।
भागवंती बाई भली भांते, रसोई करे विवेक ॥ २३

श्री नन्दबाबाके घरमें दस स्वरूप (परिवार-जन) हैं, जो एक साथ पकवान, शाक आदि विभिन्न प्रकारकी भोजन सामग्री आरोगते हैं. भागवन्तीबाई भली-भाँति रसोई बनाती है.

लाडलो नंद जसोमती, रोहिनी बलभद्र बाल ।
पालक पुत्र कल्यानजी, वाको पुत्र गोपाल ॥ २४

उपर्युक्त दस परिवार जन इस प्रकार हैं- लाडले श्री कृष्णजी, नन्दबाबा, माता यशोदा, रोहिणी माता एवं उनके पुत्र बलराम तथा गोद लिए हुए पुत्र कल्याणजी एवं उनका पुत्र गोपाल.

बेहेनें दोऊ जीवा रूपा, भेलियां रहें मोहोलान ।
और बाई भागवंती, नारी घर कल्यान ॥ २५

जीवा तथा रूपा दोनों बहनें तथा कल्याणजीकी धर्मपत्नी भागवन्तीबाई ये

सब नन्दभवनमें एक साथ रहते हैं.

पुरो जो वृषभान को, भेलो भाई लखमन ।
नंदजी के उत्तर दिसे, बसत बास पूरन ॥ २६

वृषभानजीके मुहल्लेमें उनके भाई लक्ष्मण भी उनके साथ रहते हैं. यह मुहल्ला नन्दजीके मुहल्लेके उत्तर दिशामें स्थित है. इस प्रकार यह मुहल्ला भी वस्ती तथा सम्पूर्ण सामग्रियोंसे भरा हुआ है.

सरूप साते भली भांते, आरोगे अंन पाक ।
कल्यान बाई रसोई करे, विध विध के बहु साक ॥ २७

वृषभानजीके परिवारमें सात परिवारजन अनेक प्रकारके पकवान तथा सब्जियाँ एक साथ ग्रहण करते हैं. कल्याणबाई विभिन्न प्रकारके शाक व्यञ्जनोंकी रसोई बनाती है.

राधाबाई पिता वृषभानजी, प्रभावती बाई मात ।
सुदामा कल्यानजी, याथें छोटो कृस्नजी भ्रात ॥ २८

उपर्युक्त परिवारके सात सदस्य इस प्रकार हैं- श्री राधिकाजी, इनके पिता वृषभानजी एवं माता प्रभावतीबाई, राधाजीके अग्रज कल्याणजी एवं अग्रज श्रीदामा तथा छोटा भाई कृष्ण.

कल्यान बाई नारी सुदामा, अंग धरत अति बडाई ।
करत हांसी कै भांतें, याकी स्यामसों सगाई ॥ २९

बड़े भाई श्रीदामाकी धर्मपत्नी कल्याणबाई है. वह अपनी ननद राधाको बड़े आदरसे गोदमें लेकर विनोद पूर्वक हँसी मजाक करती है, क्योंकि श्री राधाजीकी सगाई श्री कृष्णके साथ हुई है.

मंदिर छे मांडवे आगे, चरी चढे दूध माट ।
स्यामा गोद प्रभावती, ले बैठत है खाट ॥ ३०

श्री वृषभानजीके छः घर हैं तथा अग्रभागमें आँगन है. यहाँ दूधके वर्तन चूल्हे पर रखकर दूध गरम किया जाता है. यहीं माता प्रभावतीजी राधाजीको गोदमें लेकर खाट (माची) पर बैठती है.

मांगा किया राधाबाई का, पर व्याहे नहीं प्राणनाथ ।
मूल सनमंधे एके अंगें, विलसत वल्लभ साथ ॥ ३१

श्री राधाजीका श्री कृष्णजीके साथ वाक्दान (सगाई) हुआ है किन्तु प्राणनाथ श्री कृष्णजीके साथ विधिपूर्वक विवाह नहीं हुआ है. श्री राधाजी तथा श्री कृष्णका मूल सम्बन्ध परमधाममें अङ्ग-अङ्गी होनेके कारण श्री राधाजी अपने प्राणवल्लभ श्री कृष्णजीके साथ लीला विलास करती हैं.

घुरसे गोरस हेत में, घर घर होत मंथन ।
खेले सब में सांवरो, मिने बाहेर आंगन ॥ ३२

आनन्द उल्लासके साथ प्रत्येक घरमें प्रेमपूर्वक दहीका मन्थन होता है. घरके अन्दर तथा घरके बाहर आँगनमें श्यामसुन्दर श्री कृष्ण, अपने प्रिय मित्र ग्वाल-बालोंके साथ खेला करते हैं.

पुरे सारे बीच चौरे, बैठे गोप बूढे भराए ।
चारों पोहोर गोठ घूघरी, खेलते दिन जाए ॥ ३३

सब मुहल्लोंके बीचमें बैठनेका एक चौक है, जहाँ पर सारे गोपवृद्ध भरे हुए बैठते हैं. यहाँ चारों प्रहर मेवा मिठाई तथा घुँघरीके अल्पाहारका आयोजन होता है. इस प्रकार लीला-विनोदमें दिन बीत जाता है.

और सबे गौचारने, गोप गोवाला जाए वन ।
भोर के वन संझा लों, यों होत व्रज वरतन ॥ ३४

गौओंको चरानेके लिए सब गोप-ग्वाल प्रातःसे लेकर सन्ध्या पर्यन्त वनमें चले जाते हैं. इस प्रकार व्रजका सारा कार्य-व्यवहार चलता रहता है.

तेजपाल मोदी बलोट पूरे, जो कछू चाहिए सोए ।
घृत लेवे बडे बडे ठौरों, और वरतियां होए ॥ ३५

तेजपाल नामका व्यापारी पूरे व्रजमें घूमता है और जिसको जो वस्तु चाहिए उसके लिए आवाज लगाकर पुकारता है. वह अन्य चीजोंके बदले बड़े-बड़े स्थानों (घरों) से घी ले लेता है. इस प्रकार अन्य व्यापारी भी आते रहते हैं.

घोलिए इत घोल करने, आवत व्रजमें जे ।
फेर जाए रहे मथुरा, वस्त भाव ले दे ॥ ३६

छोटे-छोटे व्यापारी सिर पर टोकरी रखकर यहाँ व्रज मण्डलमें व्यापार करनेके लिए आते हैं तथा मूल्य लेकर वस्तुओंका आदान-प्रदान करते हैं और मथुरा लौट जाते हैं.

स्याम संग गोवाल ले, खेलत जमुना घाट ।
विनोद में हम आवें जाएं, जल भरने इन बाट ॥ ३७

श्री कृष्णजी गोपबालकोंके साथ यमुना तट पर खेलते हैं. हम सब सखियाँ जब पानी भरनेके लिए इस मार्गसे आती जातीं हैं, तो वे हमारे साथ हास्य-विनोद करते हैं.

विलास व्रज में पियाजीसों, वरतत एह बात ।
वचन अटपटे वेधे सब को, अहेनिस एही तात ॥ ३८

व्रजमण्डलमें प्रियतम श्री कृष्णजीके साथ आनन्द-विलास होता रहता है. श्री कृष्णजीके प्रेम भरे मधुर वचन हम सबके हृदयको आहत कर देते हैं. रात-दिन इसी प्रकारकी लीलाएँ होती रहतीं हैं.

पीउ प्रेमें भीगा खेलहीं, पुरे सारों मांहिं ।
खेले खिन जासों ताए दूजा, सूझे नहीं कछुए कांहिं ॥ ३९

प्रेममें मग्न होकर प्रियतम श्री कृष्णजी पूरे मुहल्लेमें सबके साथ खेलते रहते हैं. जिस किसीके साथ श्री कृष्णजी एक क्षणके लिए भी खेलते हैं, तो उसे फिर और कुछ सूझता ही नहीं है.

हम संग खेलें कै रंगे, जाते जमुना पानी ।
आठों पोहोर अटकी अंगे, एह छब एह बानी ॥ ४०

यमुनाजीका जल भरनेके लिए जाते समय श्री कृष्णजी हमारे साथ अनेक प्रकारसे आनन्दयुक्त रामत करते हैं. श्री कृष्णजीकी छवि तथा उनकी मधुर वाणी पर हमारी चित्तवृत्ति आठों प्रहर लगी रहती है.

घर घर आनंद उछव, उछरंग अंग न माए ।
विलास विनोद पिया संगे, अहेनिस करते जाए ॥ ४१

इस प्रकार घर-घरमें आनन्द-उत्सव होता रहता है तथा हमारे अङ्गोंमें उल्लास समाता नहीं है. प्रियतम श्री कृष्णजीके साथ हास्य-विनोद करते-करते हमारे रात-दिन आनन्दमें व्यतीत होते हैं.

सुन्दर बालक मधुरी बानी, घर ल्यावें गोद चढाए ।
सेज्याएं खिन में प्रेमें पूरा, सुख देवें चित चाहे ॥ ४२

श्री कृष्णजीका बाल स्वरूप अति सुन्दर है. वे मधुर वचन बोलते हैं. हम उन्हें पीठ पर बैठाकर हमारे घरोंमें लाते हैं. क्षणभरमें ही हमारे हृदयरूपी शय्या पर विराजमान होकर हमें पूर्ण प्रेम प्रदान करते हैं. इस प्रकार वे हमें मनोनुकूल सुख देते हैं.

बाछरु ले वन पधारे, आठमें दसमें दिन ।
कबूं गोवरधन फिरते, मांहें खेले बारे वन ॥ ४३

श्री कृष्णजी आठवें या दसवें दिन बछड़ोंको लेकर वनमें जाते हैं, तब कभी-कभी गोवर्धन पर्वत पर घूमते हैं तथा व्रज मण्डलके बारहों वनोंमें लीला करते हैं.

अखंड लीला अहेनिस, हम खेलें पिया के संग ।
पूरे पीउजी मनोरथ, ए सदा नवले रंग ॥ ४४

हम सब सखियाँ रात-दिन श्री कृष्णजीके साथ अखण्ड लीला करतीं हैं. प्रियतम श्री कृष्णजी सदैव नई नई लीलाओं द्वारा हमारे मनोरथ पूर्ण करते हैं.

श्रीराज व्रज आए पीछे, व्रज वधू मथुरा ना गई ।
कुमारका संग खेल करते, दान लीला यों भई ॥ ४५

श्री राजजी (श्री कृष्णजी) जबसे व्रजमें आए, तबसे व्रजवधु (गोपिकाएँ) दूध-दधि बेचनेके लिए मथुरा नहीं गईं. कुमारिकाएँ (अक्षरकी सुरताकी सखियाँ) गोपियोंकी देखादेखी दूध दधि बेचनेका बहाना बनाकर श्री

कृष्णजी के साथ खेल करतीं थीं. (उनका दूध-दधि लूटकर श्री कृष्णजी ग्वालोंको देते थे) इस प्रकार उनके साथ दानलीला होती थी.

खेल खेलें कुमारका, चीले कुल अभ्यास ।
दूध दधी छोटे बासन, करे रंग रस वन विलास ॥ ४६

कुमारिका सखियाँ अपने कुलके परम्परागत अभ्यास अनुसार छोटे-छोटे पात्रों (कुल्हड़ों) में दूध-दधि लेकर अत्यन्त उत्साहके साथ वनमें लीला करतीं हैं.

व्रज वधू मिने खेलने, संग केतिक जाए ।
सांवरो इत दान लेने, करे आडी लकुटी ताए ॥ ४७

व्रजवधुओंके साथ कई कुमारिकाएँ भी खेलने चली जातीं हैं. श्री कृष्णजी यहाँ दानलीला (कर वसूली) के बहाने लाठी लेकर मार्गमें खड़े हो जाते हैं.

दूध दधी माखन ल्यावें, हम पियाजीके काज ।
तित दधी हमारा छीन के, देवें गोवालोंको राज ॥ ४८

हम सब सखियाँ प्रियतम श्री कृष्णजीके लिए ही दूध, दधि तथा मक्खन लातीं हैं. उस समय हमारे दूध-दधि छीनकर स्वयं श्री राजजी ग्वाल-बालोंमें वितरित कर देते हैं.

भाग जाए ग्वाल न्यारे, हम पकड राखें पीउ पास ।
पीछे हम एकांत पिया संग, करें वन में विलास ॥ ४९

दूध और मक्खन लेकर जब ग्वाल-बाल दूर भाग जाते हैं, तब हम सब श्री कृष्णजीके चरणकमलोंसे लिपट जातीं हैं, फिर हम प्रियतमके साथ एकान्त वनमें प्रेमानन्द विलास करतीं हैं.

कुमारका हम संग रेहेती, पीउ खेलते सखियन ।
मूल सनमंध कुमारकाओं का, या दिन थें उतपन ॥ ५०

जब हम सब सखियाँ अपने प्रियतम श्री कृष्णजीके साथ खेलती थीं, उस

समय कुमारिका सखियाँ भी हमारे साथ होती थीं. यहींसे श्री कृष्णजीके साथ कुमारिकाओंका मूल सम्बन्ध उत्पन्न हुआ है.

अखंड लीला अति भली, नित नित नवलें रंग ।
इन जोतें सब जाहेर किया, हम सखियां पिया के संग ॥ ५१

इस प्रकार व्रजमें रात-दिन, नित्य नए-नए रङ्गों (उत्साह) के साथ अखण्ड लीला होती रहती है. इस तारतम ज्ञानकी ज्योतिने इन सब लीलाओंको प्रकट किया है कि हम सब सखियाँ श्री कृष्णजीके साथ ही हैं अर्थात् उनके अभिन्न अङ्ग हैं.

आवे जब उजालियां, हम खेलें लेकर ढोल ।
पिया करें विनोद हांसियां, सो कहे न जाए बोल ॥ ५२

जब शुक्ल पक्ष आता है, तब उज्ज्वल चाँदनी रातमें हम सब सखियाँ ढोलक लेकर पूरे मुहल्लेमें खेलतीं हैं. प्रियतम श्री कृष्णजी हमारे साथ यहाँ आनन्द विनोद किया करते हैं. इस लीलाका वर्णन वाणी द्वारा नहीं हो सकता है.

उलसे गोकल गाम सारा, हेत हरष अपार ।
धन धान वस्तर भूषन, द्रव्य अखूट भंडार ॥ ५३

समस्त गोकुल गाँव उत्साह पूर्ण रहता है. सबके हृदयमें अपार प्रसन्नता एवं प्यार भरा रहता है. सबके घरोंमें अन्न, वस्त्राभूषण, द्रव्य आदि सम्पत्तिके अक्षुण्ण भण्डार भरे हैं.

जनम व्याह नितप्रते, सारे पुरे अनेक होए ।
नेक कारज करें कछुए, तो बुलावें सब कोए ॥ ५४

जन्म तथा विवाहके अनेक उत्सव पूरे गाँवमें कहीं न कहीं नित्यप्रति हुआ करते हैं. यदि कोई अपने घरमें छोटा-सा भी प्रसङ्ग रखते हैं, तब सबको निमन्त्रित करते हैं.

नाटारंभ कै बाजंत्र, धन खरचें अहीर उमंग ।
साथ सब सिनगार कर, हम आवें अति उछरंग ॥ ५५

अनेक प्रकारके वाद्य यन्त्रोंको बजाकर नाटक (नृत्य) आदि होते हैं. सब

अहीर (यादव) उत्साहके साथ धन खर्च करते हैं. ऐसे अवसर पर हम सब सखियाँ शृङ्गार धारण कर अति उत्साहके साथ आतीं हैं.

वलगे विनोदे हमसों, देखते सब जन ।
पर कोई न विचारे उलटा, सब कहे एह निसंन ॥ ५६

प्रियतम श्री कृष्णजी आनन्द विनोदसे विभोर होकर सबके देखते-देखते ही हमारे गले लग जाते हैं. इसे देखकर कोई भी व्रजवासी उलटा विचार नहीं करता है. सब यही कहते हैं कि यह तो बालकोंका निर्दोष खेल है.

बात याकी हम जानें, और जाने हमारी एह ।
ना समझे कोई दूसरा, ए अंदर का सनेह ॥ ५७

प्रियतमकी इन आन्तरिक बातोंको तो हम सखियाँ ही जानतीं हैं तथा हमारे हृदयकी बात भी प्रियतम ही जानते हैं. हम दोनोंके हृदयका स्नेह अन्य लोग नहीं समझते.

ए होत है हम कारने, पिया पूरे मनोरथ मन ।
इन समे की मैं क्या कहूं, साथ सबे धन धन ॥ ५८

व्रज मण्डलकी ये सभी लीलाएँ हम सब सखियों (ब्रह्माङ्गनाओं) के लिए ही हो रहीं हैं. इनके द्वारा श्री कृष्णजी हमारा मनोरथ पूर्ण करते हैं. मैं इस समयका वर्णन कैसे करूँ ? समस्त सखियाँ धन्य हो जातीं हैं.

व्रज सारी करी दिवानी, और पिया तो वचिछिन ।
जहां मिले तहां एही बातें, विनोद हांस रमन ॥ ५९

श्री कृष्णजीने समस्त गोकुल गाँवको अपने प्रेमानन्दसे पागल-सा (दीवाना) बना दिया है, वे बहुत ही चतुर (विचक्षण) हैं. हम सब जहाँ कहीं मिलतीं हैं वहाँ उन्हींकी चर्चा करतीं हैं तथा हास्य-विनोद एवं रमणकी ही बातें होती रहतीं हैं.

नंद जसोदा ग्वाल गोपी, धेन बछ जमुना वन ।
थिर चर सब पसु पंखी, नित नित लीला नौतन ॥ ६०

अखण्ड व्रज मण्डलमें नन्दबाबा, यशोदा माता, ग्वाल-बाल, गोप-गोपियाँ,

गाय-बछड़े,यमुना नदी, वन तथा पशु-पक्षी सहित सभी स्थावर-जङ्गम चिन्मय हैं और वहाँकी लीलाएँ नित्य नूतन होतीं हैं.

अब ए लीला कहूं केती, अलेखे अति सुख ।
वरस अग्यारे खेले प्रेमें, सखियनसों सनमुख ॥ ६१

अब मैं इस लीलाका वर्णन कहाँ तक करूँ ? यहाँके सुख असीम हैं. इस प्रकार श्री कृष्णजीने ग्यारह वर्ष पर्यन्त सखियोंके साथ विभिन्न लीलाएँ कीं.

एक दिन गौ चारने, पीउ पोहोंचे वृन्दावन ।
गोवाला गौ सब ले वले, पीछे जोगामाया उतपन ॥ ६२

एक दिन श्री कृष्णजी गायोंको चरानेके लिए वृन्दावन पहुँचे. सायंकाल ग्वाल-बाल गायोंको लेकर लौट आए. इसके बाद श्री कृष्णजीने योगमाया (रासमण्डल) को उत्पन्न किया.

ए लीला यामें एते दिन, कालमाया को ब्रह्मांड ।
एह कलपांत करके, फेर उपज्यो अखंड ॥ ६३

इतने दिनों तककी ये लीलाएँ कालमायाके ब्रह्माण्डमें हुईं हैं. कालमायाके इस ब्रह्माण्डको कल्पान्त कर फिर योगमायाके अखण्ड ब्रह्माण्डकी रचना की गई.

सदा लीला जो व्रज की, मैं कही जो याकी विध ।
अब कहूं वृन्दावन की, ए तो अति बडी है निध ॥ ६४

व्रज मण्डलमें शाश्वतरूपसे चलनेवाली अखण्ड लीलाका विवरण मैंने इस प्रकार दिया है. अब मैं वृन्दावनकी रासलीलाका संक्षिप्त वर्णन करता हूँ. इसकी शोभा ही अपरिमेय है.

प्रकरण १९ चौपाई ५३५

जोगमायाको प्रकरण

अब जोत पकरी ना रहे, दूजा बेधिया आकास ।
जाए लिया इंड तीसरा, जहां अखंड रजनी रास ॥ १

अब यह तारतमकी ज्योति नियन्त्रणमें नहीं रह सकेगी. वह यहाँसे दूसरे

अखण्ड व्रज मण्डलको भेदकर आगे योगमायाके ब्रह्माण्डमें पहुँची, जहाँ रात्रिके समय अखण्ड रास लीला सम्पन्न हुई.

इन दोऊ थें न्यारा मंडल, जाको कहियत है रास ।
तहां खेल स्याम सखियनका, ए लीला अविनास ॥ २

योगमाया रचित रास मण्डल कालमायाके इन दोनों (अखण्ड व्रज एवं प्रतिबिम्ब व्रज लीलावाले) ब्रह्माण्डोंसे भिन्न है. यहीं श्री कृष्णजी और गोपिकाओंकी अविनाशी लीला होती है.

या ठौर जोगमाया रच्यो, सब सामग्री समेत ।
तहां हद सबद ना पोहोंचहीं, तो भी तुमें कहूं संकेत ॥ ३

परब्रह्म श्री कृष्णजीकी योगमाया शक्ति द्वारा सर्व प्रकारकी सामग्री सहित इस रास मण्डलकी रचना हुई है. इस नश्वर संसारके सीमित शब्द वहाँ तक पहुँचनेमें असमर्थ हैं, तथापि मैं तुम्हारे लिए कुछ सङ्केतमें ही विवरण दे रहा हूँ.

जिनस जुगत कहूं केती, अनेक सुख अखंड ।
जोगमायाएं उपाइया, कोई सुख सरूपी ब्रह्मांड ॥ ४

यहाँके अनेक प्रकारके अखण्ड सुखदायक उपादानों एवं विविध प्रकारकी सामग्रियोंका वर्णन मैं कहाँ तक करूँ ? योगमायाने अपनी शक्तिसे अखण्ड सुख स्वरूपी कोई नया ही ब्रह्माण्ड बनाया है.

ए बानी नीके विचारियो, अंतर मांहें बाहेर ।
तुमें जगाऊं कर जागनी, देखाए देऊं जाहेर ॥ ५

हे ब्रह्मात्माओ ! अपने अन्तःकरण और बाह्यमनसे इस तारतमवाणीको विचारपूर्वक देखो. मैं जागनी रासको प्रत्यक्ष प्रकट (जाहेर) कर तुम्हारी आत्मको जागृत कर दूँ.

क्योंए न आवे सबद में, जोगमाया की विध ।
तो भी देखाऊं कछुक, लीला हमारी निध ॥ ६

योगमाया रचित रास मण्डलका वर्णन वाणी द्वारा किसी भी प्रकार नहीं हो

सकता, वह शब्दातीत है. तथापि हम ब्रह्मात्माओंकी अपनी वास्तविक निधि होनेके कारण इसका थोड़ा-सा वर्णन करता हूँ.

हम देखें वृन्दावन इतथें, तहां भी खेलें पिया साथ ।
करें विनोद नित नए, बनहीं मिने विलास ॥ ७

तारतम ज्ञान द्वारा हम सब यहींसे वृन्दावन देख रहे हैं और प्रियतमके साथ वहाँ भी रासकी नई नई रामतें कर रहे हैं. प्रत्येक दिन नई नई रामतें करते हुए इस वृन्दावनमें आनन्द-विलास करते हैं.

काहूं न पाइए जोगमायाकी, हम बिना पेहेचान ।
वासना पांचों अक्षर की, भले कहावें आप सुजान ॥ ८

योगमायाके ब्रह्माण्डकी पहचान हमारे बिना अन्य कोई नहीं कर सकता, भले ही अक्षर ब्रह्मकी पञ्चवासनाएँ (शुकदेव, सनकादि, कबीर, शिवजी, भगवान विष्णु) सर्व प्रकारसे प्रवीण कहलाती हों.

ए माया हमारियां, याके हमपें विचार ।
और उपजे सब इनथें, ए हमारी आग्या कार ॥ ९

ये दोनों कालमाया एवं योगमाया हमारे लिए हैं, इसलिए उनकी जानकारी हमारे पास ही है. अन्य सभी संसारी जीव इन दोनोंसे ही उत्पन्न हुए हैं, परन्तु ये दोनों हमारी आज्ञाकारिणी हैं.

रासलीला पेहेलें करी, जो मिने वृन्दावन ।
आनंद कारी जोगमाया, अविनासी उतपन ॥ १०

प्रथम अवतरणमें हम सब सखियोंने वृन्दावनमें रास लीला की. वह वृन्दावन आनन्दकारी अविनाशी योगमाया द्वारा उत्पन्न हुआ है.

जोगमाया की जुगत जुई, एक रस एक रंग ।
एक संगे सदा रेहेना, अंगना एकै अंग ॥ ११

योगमायाकी युक्ति ही निराली है कि उसमें एक ही रङ्ग तथा एक ही रस है अर्थात् श्री कृष्णजी एवं सखियाँ सब प्रेमानन्द स्वरूप हैं. सबको सदैव एक ही साथ रहना है तथा सब एक ही धनीजीकी अङ्गनाएँ हैं.

आतम सदीवे एक है, वासना एकै अंग ।
मूल आवेस जोगमाया पर, सुख अखंड के रंग ॥ १२

सबकी आत्मा सदैव एक ही है. उसी प्रकार वासना भी एक ही अङ्ग है. श्री राजजीका मूल आवेश योगमायामें अवतरित हुआ है. अतः हम सब अखण्ड सुखोंके रङ्गमें रङ्गी हुई हैं.

एक अंगे रंगे संगे, तो क्यों हुई अंतराए ।
इन सबद में है आंकडी, बिना तारतम ना समझी जाए ॥ १३

इसमें यह आशङ्का रहती है कि जब हम सबका एक ही अङ्ग एक ही रङ्ग तथा एक ही सङ्ग है, तो रासलीलाके प्रेमानन्दमें श्री कृष्णजी अन्तर्धान क्यों हो गए ? इस प्रसङ्गमें एक रहस्य है, वह तारतम ज्ञानके बिना समझा नहीं जा सकता.

आंकडी अंतरध्यान की, सोए कहूं सनंध ।
कोई न जाने हम बिना, इन तारतम के बंध ॥ १४

अन्तर्धान होनेका गूढ़ रहस्य मैं कह रहा हूँ. इस रहस्यको हम सुन्दरसाथके बिना अन्य कोई कैसे जान सकता है ? क्योंकि तारतम ज्ञानकी मर्यादाका यह गूढ़ रहस्य है.

जगाए आवेस लेयके, तब इत भए अंतरध्यान ।
विलास विरह चित चौकस करने, याद देने घर धाम ॥ १५

उस समय मूल स्वरूप अक्षरातीतने अपना आवेश खींच कर अक्षर ब्रह्मको अपने धाममें जागृत किया. तब इधर श्री कृष्णजी अन्तर्धान हुए. सखियोंके हृदयमें विरह और विलासका दुःख-सुख अङ्कित करनेके लिए तथा अक्षर ब्रह्मको अखण्ड घर परमधामकी लीलाका अनुभव करवानेके लिए वे अन्तर्धान हुए.

जोगमाया की जुगत, और न जाने कोए ।
और कोई तो जाने, जो कोई दूसरा होए ॥ १६

योगमायाकी इस रहस्य (युक्ति) को अन्य कोई जान नहीं सकता.

ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त वहाँ अन्य कोई होता तभी दूसरा कोई इसे जान सकता.

जोगमायाएं जाग्रत होए, जल जिमी वाए अगिन ।
थिर चर सब पसु पंखी, तत्व सबे चेतन ॥ १७

योगमायाके द्वारा प्रत्येक पदार्थमें जागृति (चेतन) पैदा होती है जिसके कारण पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, पशु-पक्षी, स्थिर-चर (स्थावर-जङ्गम) ये सभी चेतन स्वरूप हो गए हैं.

एक जरा तिन जिमी का, ताके तेज आगे सूर कोट ।
सो सूरज द्रष्टें न आवहीं, इन जिमी जरे की ओट ॥ १८

उस भूमिकाके एक कणके तेजके सामने इस जगतके करोड़ों सूर्योंका प्रकाश भी नगण्य है. यहाँ तक कि वहाँके रेतके कणकी ओटमें यह सूर्य दिखाई भी नहीं देगा.

हेम जवेर के बन कहूं, तो ए सब झूठी वस्त ।
सोभा जो अविनास की, कही न जाए मुख हस्त ॥ १९

यदि उस वनकी उपमा इस संसारके सोना, चाँदी तथा जवाहरातसे दूँ तो भी ये सब सांसारिक वस्तुएँ झूठी ही तो हैं. इस अविनाशी वृन्दावनकी शोभाका वर्णन न मुखसे हो सकता है और न ही हाथके द्वारा उसका सङ्केत किया जा सकता है.

वरनन करूं एक पात की, सो भी इन जुबां कही न जाए ।
कोट ससी जो सूर कहूं, तो एक पात तले ढंपाए ॥ २०

योगमाया द्वारा रचित ब्रह्माण्डके वृक्षके एक पत्तेकी शोभाका वर्णन भी इस झूठी जिह्वा द्वारा नहीं हो सकता. क्योंकि इस संसारके करोड़ों सूर्य और चन्द्रमाका यावत् प्रकाश एकत्रित करूँ, तो भी वह सब एक पत्तेकी ओटमें ढँक जाएगा.

सुतेज ससी वन पसु पंखी, तत्व सबे सुतेज ।
सुतेज थिर चर जो कछू, सुतेज रेजारेज ॥ २१

यहाँके चन्द्रमा, वन, पशु-पक्षी ये सब स्वयं प्रकाशमान हैं. पाँचों तत्त्व भी

स्वयं प्रकाशयुक्त हैं. समस्त साधन सामग्री यहाँ तक कि रेतके कण-कण भी योगमायाके प्रभाव द्वारा सुन्दर, तेजोमय तथा स्वयं प्रकाशित हैं.

किरना वन जिमीए की, सांमी किरना ससी प्रकास ।
नूर हम पें खेले नूर में, प्रेमें पियासों रास ॥ २२

वृन्दावनकी भूमि तथा वनकी किरणें चन्द्रमाकी किरणोंका सामना करतीं हैं. इस प्रकार नूरमयी योगमायामें हमने अपने प्रकाशमय शरीरके द्वारा अपने प्रियतमके साथ बड़े प्रेमसे रास लीला की.

वस्तर भूषन इन जिमी के, सो मुख कहे न जाए ।
तो सुख इन सरूप के, क्यों कर इत बोलाए ॥ २३

इस भूमिकाके वस्त्राभूषण एवं शृङ्गारकी शोभाका वर्णन भी वाणी द्वारा नहीं हो सकता, तो श्री कृष्ण-परमात्माके सान्निध्यका सुख (अखण्ड प्रेमानन्द) कैसे बताया जा सकता है ?

इन सुख बातें बोहोत हैं, सो नेक कह्यो प्रकास ।
पर ए भी जोगमाया मिने, जो कहिअत है अविनास ॥ २४

रास लीलाके अलौकिक सुखोंकी बातें बहुत हैं, समझाने मात्रके लिए मैंने उन पर थोड़ा-सा प्रकाश डाला है. किन्तु ये सब सुख योगमायाके हैं तथा सदा अविनाशी कहलाते हैं.

या ठौर लीला करके, हम घर आए सब मिल ।
या इंड कलपांत करके, फेर अखंड किए मिने दिल ॥ २५

ऐसे अखण्ड वृन्दावनमें रास लीला सम्पन्न कर हम सब ब्रह्मात्माएँ मिलकर अपने घर परमधाम आईं (जागृत हुईं). इस योगमायाके ब्रह्माण्डको कल्पान्त कर अक्षरब्रह्मने उसे अपने हृदयमें अखण्ड कर लिया.

हम तो सब धाम आए, अक्षर आपके घर ।
अखंड रजनी रास लीला, खेल होत या पर ॥ २६

हम सब ब्रह्मसृष्टि अपने घर परमधाममें जाग गईं तथा अक्षर ब्रह्म भी अपने

घर अक्षरधाममें जागृत हुए. इस प्रकार यह अखण्ड रास लीला अक्षर ब्रह्मके हृदयमें अखण्ड होकर नित्य निरन्तर खेली जा रही है.

हमहीं खेलें व्रज रास में, हमहीं आए इत ।
घरों बैठे हम देखहीं, एही तमासा तित ॥ २७

हे सुन्दरसाथजी ! व्रज (कालमायाका ब्रह्माण्ड) तथा रास (योगमायाका ब्रह्माण्ड) में हम ब्रह्मात्माएँ ही खेल रहीं हैं तथा इस तीसरे ब्रह्माण्डमें भी हम ही आई हैं. वस्तुतः परमधाममें बैठे-बैठे हम ही इस प्रकृतिके खेलको देख रहीं हैं.

देखे व्रज रास नीके, खेल किया पर पर ।
ले भोग विरहे विलास को, हम आए निज घर ॥ २८

हम सबने व्रज और रासको भली-भाँति देखा और सबने मिलकर अलग-अलग प्रकारकी लीलाएँ भी कीं. विलास तथा विरह द्वारा सुख-दुःख दोनोंका अनुभव कर हम सब हमारे घर परमधाम चले आए.

देखे दोऊ सुख दुख, तो भी कछुख रह्यो संदेह ।
सत सरूपें तो फेर, मंडल रचियो एह ॥ २९

हम सबने सुख-दुःख दोनोंका अनुभव किया तथापि (तामसी सखियोंकी) दुःख देखनेकी इच्छा अधूरी रह गई, इसलिए अक्षरब्रह्म (सत्स्वरूप) ने पुनः इस तीसरे ब्रह्माण्डकी रचना की.

ए खेल किया हम वास्ते, हम देखन आइयां ए ।
दोऊ के मनोरथ पूरने, ए रच्या तमासा ले ॥ ३०

यह खेल (तीसरा ब्रह्माण्ड) हमारे लिए ही रचा गया है और हम ही इसे देखनेके लिए सुरता रूपसे आई हैं. हम ब्रह्मात्माओं तथा अक्षर ब्रह्म दोनोंकी इच्छा पूर्ण करनेके लिए इस मायावी ब्रह्माण्डकी रचना हुई है.

खेल रचे सुपन के, देखाए मिने सुपन ।
ए देखे हम न्यारे रहे, कोई और ना देखे जन ॥ ३१

यह खेल (ब्रह्माण्ड) स्वप्नका रचा हुआ है और हम ब्रह्मसृष्टियोंको स्वप्नमें

ही यह दिखाया गया है. हम इस स्वप्नके खेलको इस स्वप्नसे परे (परमधाम मूल मिलावामें) बैठकर देख रहीं हैं. इसे हमारी भाँति अन्य कोई भी नहीं देख रहा है.

ए खेल सोहागिनियों को, देखाए भली भांत ।
तारतम बुध प्रकास के, पूरी सबों की खांत ॥ ३२

श्री राजजीने ब्रह्मात्माओंको यह खेल भलीभाँति दिखाया तथा तारतम ज्ञानके द्वारा सबके हृदयको प्रकाशित कर सबकी मनोकामनाएँ पूर्ण कीं.

खेल देख्या जो हम, सो थिर होसी निरधार ।
सारों मिने सिरोमन, होसी अखंड ए संसार ॥ ३३

हम ब्रह्मात्माओंने इस संसारके खेलमें जो कुछ देखा, वह निश्चित रूपसे अखण्ड हो जाएगा. इस प्रकार सब ब्रह्माण्डोंमें यह जागनीका ब्रह्माण्ड सर्वश्रेष्ठ हो जाएगा.

भगवानजी आए इत, जागवे को ततपर ।
हम उठसी भेलें सबे, जब जासी हमारे घर ॥ ३४

अक्षर ब्रह्म भी इसी खेलमें आए हैं, वे भी अपने धाम-अक्षरधाममें जागृत होनेके लिए तत्पर हैं. जब हम सुरतारूपमें अपने घर परमधाम लौटेंगी तब अक्षर ब्रह्म सहित हम सब ब्रह्मात्माएँ एक ही साथ अपने-अपने घरमें जागृत होंगे.

प्रकास कह्यो मैं रास को, एह सुन्यो तुम सार ।
अब महामति कहें सो सुनो, दया को विस्तार ॥ ३५

महामति कहते हैं, हे सुन्दरसाथजी ! रास लीलाके प्रकाशका यह संक्षिप्त वर्णन मैंने तुम्हें साररूपमें बताया है. अब अपने प्रियतमकी दयाका विस्तार सुनो.

प्रकरण २० चौपाई ५७०

अब तो मेरे पिया की, दया न समावे इंड ।
ए गुन मुझे क्यों विसरे, मोसों हुए सब अखंड ।
सोहागनियों पिया दया गुन कैसे कहूं ॥ टेक ॥ १

पूरे ब्रह्माण्डमें अब तो मेरे धनीकी दया नहीं समा सकती. धनीजीका यह उपकार कैसे भूलाया जा सकता है ? क्योंकि धनीकी कृपासे मेरे द्वारा यह ब्रह्माण्ड अखण्ड हो गया. हे ब्रह्मात्माओ ! मैं अपने प्रियतमकी दयाके गुणोंकी प्रशंसा कैसे करूँ?

अब गली मैं दया मिने, सागर सरूपी खीर ।
दया सागर भर पूरन, एक बूंद नहीं मिने नीर ॥ २

अब तो मैं धनीके दयारूपी सागरमें समाहित हो गया हूँ. यह दयाका सागर दूधके समान स्वच्छ और निर्मल है तथा पूर्णरूपेण भरा है. इसमें मायारूपी जलकी एक बूँद भी नहीं है.

दया मुकट सिर छत्र चमर, दया सिंघासन पाट ।
दया सबों अंगों पूरन, सब हुओ दया को ठाट ॥ ३

धनीकी दयासे ही मस्तक पर मुकुट, छत्र तथा चँवर आदि लहरा रहे हैं तथा दयासे ही सिंहासन तथा गद्दी प्राप्त हुई है. आपकी ही करुणा मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्गोंमें भरी हुई है. यह ठाट-बाट सब आप ही की दयाका परिणाम है.

अब दया गुन मैं तो कहूं, जो कछू अंतर होए ।
अंगीकार करी अंगना, सो देखे सब कोए ॥ ४

हे धनीजी ! मैं आपकी दयाके गुणोंका तभी वर्णन कर सकता हूँ, जब आपमें और मुझमें कोई अन्तर हो. मुझ अङ्गनाको स्वीकर कर आपने मुझे अपने समान बना दिया है. इसे सब सुन्दरसाथ देख रहे हैं.

पल पल आवे पसरती, न पाइए दयाको पार ।
दूजा तो सब मैं मांपिया, पर होए न दयाको निरवार ॥ ५

आपकी दया अब क्षण-प्रतिक्षण फैल रही है. इसका पार नहीं पाया जा

सकता. अन्य सब गुणों (क्षमा, शील, सन्तोष आदि) को मैंने तौला, किन्तु दयाका निरूपण नहीं हो सकता.

एते दिन हम घर मिने, गोप राखी सत जोत ।
अब बुध खेंचे तरफ अपनी, तो जाहेर सत होत ॥ ६

इतने दिनों तक हमने इस तारतम ज्ञानको अपने घरमें (अपनी ही ब्रह्मात्माओंमें) छिपाए रखा. अब बुद्धजी सबको अपनी ओर खींच रहे हैं. इसीसे समस्त संसारमें ही सत्य (तारतम) ज्ञानका प्रकाश फैल जाएगा.

सबद कोई कोई सत उठे, सो भी गए असतमें भिल ।
सत असत काहूं ना सुध, दोऊ रहे हिल मिल ॥ ७

संसारमें कोई-कोई शब्द सत्य हैं, परन्तु वे भी लक्ष्यहीन होकर असत्य (दुनियाँ) में ही मिल गए हैं. इस विश्वमें सत और असत् दोनों ऐसे घुल-मिल गए हैं कि किसीको भी इनका अलग-अलग स्वरूप दिखाई नहीं देता.

अब दूर करूं असत को, जाहेर करूं सत जोत ।
गोप रही थी एते दिन, सो अब होत उदोत ॥ ८

अब मैं तारतमके बलसे असत्य (अनित्य वस्तु) को दूर कर सत्य (अखण्ड वस्तु) की ज्योति प्रकट कर दूँ. आज तक तारतमकी यह ज्योति गुप्त थी, अब जागनी ब्रह्माण्डमें आकर यह प्रज्वलित (प्रकट) हो गई है.

असत भी करना अखंड, करके सत प्रकास ।
सनंध सब समझाए के, करूं तिमर सब नास ॥ ९

तारतम ज्ञानकी अखण्ड ज्योतिका प्रकाश दिखाकर अनित्य संसारी जीवोंको भी अखण्ड मुक्तिका सुख देना है. इसलिए अब मैं सत्यका सम्पूर्ण वृत्तान्त समझाकर अज्ञानरूपी अन्धकारको दूर कर दूँ.

संसा सारा भांन के, उडाऊं असत अंधेर ।
निज बुध उठ बैठी हुई, गयो सो उलटो फेर ॥ १०

सबके हृदयके सन्देहको मिटाकर अज्ञानरूपी अन्धकारको मिटा दूँ. अब

अक्षरकी बुद्धि तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत हो गई, इसलिए मायाका उलटा चक्र मिट गया है.

अब फेर सब सीधा फिरे, सत आया सबों द्रष्ट ।
पेहेचान भै प्रकास थें, सुपन की जाहेर स्रष्ट ॥ ११

अब सब कोई सीधे परमधामकी ओर उन्मुख होंगे, क्योंकि सबकी दृष्टिमें सत्य (अखण्ड) वस्तु समाहित हो गई है. इस तारतम ज्ञानके प्रकाशसे स्वप्नकी झूठी दुनियाँको भी अखण्ड वस्तु (पूर्ण ब्रह्म परमात्मा) की पहचान हुई है.

खेल देख्या कालमाया का, सो कालमाया में भिल ।
अब देखो सुख जागनी, होसी निरमल दिल ॥ १२

व्रज मण्डलमें हम सबने कालमायाका आश्रय लेकर उसी कालमायाका खेल देखा. अब इस तीसरे ब्रह्माण्डमें जागनीका सुख देखो, जिससे हृदय निर्मल हो जाए.

आवेस मुझपें पिया को, तिन भेली करूं सोहागिन ।
सब सोहागिन मिल के, सुख लेसी मूल वतन ॥ १३

धामधनीका आवेश मेरे पास है. इसके द्वारा मैं समस्त सुन्दरसाथको एकत्रित करूँ. इस जागनीके ब्रह्माण्डमें सब सुन्दरसाथ मिलकर परमधामके अपार सुखका अनुभव करेंगे.

विलास तब विध विध के, होसी हरष अपार ।
करसी आनंद विनोद, आवसी साकुंडल साकुमार ॥ १४

तब विभिन्न प्रकारके सुख-विलास प्राप्त कर सब सुन्दरसाथको अपार हर्ष होगा. सब मिलकर आनन्दपूर्वक जागनी लीला करेंगे. इसी लीलामें साकुण्डल तथा साकुमार सखियाँ भी आकर सम्मिलित होंगी.

आए रेहेसी सब सोहागनी, तब लेसी सुख अखंड ।
पीछे तो जाहेर होएसी, तब उलटसी ब्रह्मांड ॥ १५

उस समय सब ब्रह्मात्माएँ एकत्रित होकर अखण्ड सुखका अनुभव करेंगी.

बादमें जैसे ही यही लीला प्रकट (जाहेर) होगी, तब ब्रह्माण्डके सभी जीव उत्साह पूर्वक हमारे पास दौड़ते हुए आएँगे.

हिसा देऊं आवेस का, सैयन को सब पर ।
होसी मनोरथ पूरन, मिल हरषे जागसी घर ॥ १६

मैं अपनी ब्रह्मात्माओंको अपने आवेश (तारतम ज्ञान) का कुछ अंश प्रदान करूँगा, जिससे सबकी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी और वे सब मिलकर परमधाममें आनन्द पूर्वक जागृत होंगी.

अब साथ न छोडूं एकला, साथ मुझे छोडे क्यों ।
कह्या मेरा साथ ना लोपे, साथ कहे करूं मैं त्यों ॥ १७

अब मैं इस संसारमें सुन्दरसाथको अकेले नहीं छोडूँगा इसलिए सुन्दरसाथ भी मुझे कैसे छोड़ेंगे ? यदि मेरी बातको सुन्दरसाथ नहीं टालेंगे तो मेरे सुन्दरसाथ जैसे कहेंगे, मैं वैसा ही करूँगा, अर्थात् उनकी इच्छाएँ पूर्ण करूँगा.

लेस है कालमाया को, बढ्यो साथ में विकार ।
सो गालूं सीतल नजरों, दे तारतम को खार ॥ १८

हमारे सुन्दरसाथ पर अभी भी कालमाया (अज्ञान) के विकारोंका थोड़ा-सा प्रभाव है, उसे मैं तारतमरूपी क्षार मिलाकर अपनी शीतल दृष्टिसे गला दूँ.

विकार काढूं विधोगतें, बढाए दयाको विस्तार ।
भानूं भरम तिन भांतसों, ज्यों आल न आवे आकार ॥ १९

धनीजीकी दयाका विस्तार कर सुन्दरसाथके हृदयके विकारोंको विधिपूर्वक दूर कर दूँ. इस प्रकार अज्ञानतारूपी भ्रमको इस भाँति मिटा दूँ कि उन्हें परमधामकी ओर उन्मुख होनेमें जरा-सा भी आलस्य न आए.

सुख देऊं मूल वतन के, कोई रचके भला रंग ।
मन वांछे मनोरथ, देऊं सुख सबों अंग ॥ २०

कोई अच्छा ढङ्ग अपनाकर मैं सुन्दरसाथको परमधामका सुख अनुभव करवा दूँ. इस प्रकार इच्छानुसार उनकी मनोकामाएँ पूर्ण कर उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें

अखण्ड सुखोंका सञ्चार कर दूँ.

मोह बढ्यो लेस माया को, निद्रा मूल विकार ।
सुध होए सबों अंगों, कर देऊं तैसो विचार ॥ २१

कालमायाका लेशमात्र अंश निद्रा ही मूल विकार है और वह मोहके रूपमें बढ़ रहा है. अतः सुन्दरसाथके सब अङ्गोंमें (हृदयमें) सुधि आ जाए, उनमें ऐसी विचार धाराका सञ्चार कर दूँ.

जोलों न काढ़ूं विकार, तोलों क्यों करके जगाए ।
जागे बिना इन रास के, किन निज सुख लिए न जाए ॥ २२

जब तक सुन्दरसाथके हृदयसे मायाके विकार न निकालूँ तब तक उन्हें कैसे जागृत किया जा सकता है ? जागृत हुए बिना जागनी रासके ये निज सुख किसी भी प्रकार प्राप्त नहीं किए जा सकते.

आमले उलटे मोह के, और मोह तो तिमर घोर ।
ए घोर रैन टालूं या विध, ज्यों सब कोई कहे भयो भोर ॥ २३

इस संसारमें मोहकी उलटी भँवरी चलतीं हैं और मोह तो घोर अन्धकार ही है. इस घने अन्धकार (अज्ञान) को अब इस प्रकार हटा दूँ जिससे सब सुन्दरसाथ कहेंगे कि ज्ञानका प्रभात हो गया है.

गुन पख अंग इन्द्री उलटे, करत हैं सब जोर ।
सो सब टेढे टाल के, कर देऊं सीधे दोर ॥ २४

तीनों गुण (सत, रज, तम) दसों इन्द्रियाँ तथा सभी अङ्ग उलटे हैं. ये सबके सब विषयोंकी ओर बलपूर्वक खींचते हैं. उन सबको विषयोंकी ओरसे मोड़कर सीधे मार्ग (परमधाम) की ओर उन्मुख कर दूँ.

अहंकार मन चित बुध, इन किए सब जेर ।
अब हारे सब जिताएके, फेरूं सो सुलटे फेर ॥ २५

(मायाकी ओर उन्मुख) मन, बुद्धि, चित्त तथा अहङ्कार इन सबको मायासे हरा कर इनको (ज्ञानके द्वारा) विजयश्री दिलवाकर सीधे धामधनीकी ओर उन्मुख कर दूँ.

प्रकृत सबे पिंड की, सीधी करूं सनमुख ।
दुख अगनी टाल के, देखाऊं ते अखंड सुख ॥ २६

इस शरीरके स्वभाव (प्रकृति) एवं प्रवृत्तिको सीधा कर धाम धनीजीके सम्मुख कर दूँ. दुःखरूपी दावानलको दूर (मिटा) कर परमधामके अखण्ड सुखोंका दर्शन करा दूँ.

चोर फेर करूं वोलावे, सुख सीतल करूं संसार ।
अंग में सबों आनंद, होसी हरष तुमें अपार ॥ २७

आत्माके बलको हरण करनेवाली इन इन्द्रियोंकी चोरीको मिटाकर उन्हें धनीजीकी ओर ले जाने वाली बना दूँ. इस प्रकार समस्त संसारको शाश्वत सुख और शीतलता प्रदान करूँ. ऐसा करनेसे सबके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें आनन्दकी लहरें उमड़ेंगी, तब तुम्हें अपार हर्ष होगा.

कोइक दिन साथ मोह के जल में, लेहेर बिना पछटाने ।
कहे महामति प्यारी मोहे वासना, ना सहूं मुख करमाने ॥ २८

कई दिनोंसे सुन्दरसाथ इस मोहरूपी जलमें लहरके बिना ही गोते खाते रहे हैं. महामति कहते हैं, मुझे ब्रह्म वासनाएँ अधिक प्रिय हैं, अतः मैं उनके कुम्हलाए हुए वदन (मुख) को कभी भी सहन नहीं कर सकता.

प्रकरण २१ चौपाई ५९८

हांसी को प्रकरण

मेरे साथ सनमंधी चेतियो, ए हांसी का है ठौर ।
पीउ वतन आप भूल के, कहा देखत हो और ॥ १

हे मेरे मूल सम्बन्धी सुन्दरसाथजी ! तुम सावधान हो जाओ. यह संसार उपहास (हँसी) का स्थान बन गया है. तुम स्वयंको, धामधनीको तथा अपने घर अखण्ड परमधामको भूलकर अन्य किस वस्तुकी ओर देख रहे हो ?

साथ जी तुमको उपज्या, खेल देखन का ख्याल ।
जाको मूल नहीं बांधे तिन, ए हांसी का हवाल ॥ २

हे सुन्दरसाथजी ! तुम्हें मायावी खेल देखनेकी इच्छा उत्पन्न हुई. किन्तु

जिसकी कोई जड़ मूल ही नहीं है, ऐसी मायाने तुम्हें बाँध लिया है. वस्तुतः यह हास्यास्पद स्थिति है.

मांग्या खेल विनोद का, तिन फेरे तुमारे मन ।
सो सब तुमको विसरे, जो कहे मूल बचन ॥ ३

तुम सबने श्री राजजीसे आनन्द-विनोदका खेल माँगा था, किन्तु इस खेलने तुम्हारे मनको उलटा कर दिया है. इसलिए परमधाममें श्री राजजीके साथ हुए प्रेमपूर्ण वार्तालाप (मूलवचन) को तुम भूल गए हो.

गूंथो जाली दोरी बिना, आप बांधत हो अंग ।
अंग बिना तलफत हो, ए ऐसे खेल के रंग ॥ ४

रस्सी बिना ही इस अस्तित्वहीन मायाका जाल बुन कर तुम उसी जालसे अपने अङ्गोंको बाँध रहे हो और (तुम्हारा मूल अङ्ग तो परमधाममें है तथापि यहाँ पर) बिना अङ्गके ही तुम तड़प रहे हो. वस्तुतः दुनियाँके खेलका रङ्ग (प्रभाव) ही कुछ इस प्रकारका है.

आप बंधाने आपसों, इन कोहेडे अंधेर ।
अमल चढ्या जानो जेहेर का, फिरत वाही में फेर ॥ ५

अज्ञानरूपी अन्धकारके कारण तुम स्वयं अपने ही गुण अङ्ग इन्द्रयोंके बन्धनमें बँध रहे हो. तुम पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिका नशा छाया हुआ है. इसलिए तुम इस झूठे चक्रमें वारंवार घूम रहे हो.

अमल चढ्या क्यों जानिए, कोई फिसले कोई गिरे ।
कोई मिने जाग के, कर पकर सीढी चढे ॥ ६

मायाका नशा चढ़ा हुआ है, यह इस प्रकार जाना जाता है कि कोई डगमगा रहा है और कोई गिर रहा है. कोई मायामें ही जागृत होकर अज्ञानी जीवोंके हाथ पकड़कर ज्ञानकी सीढ़ी पर चढ़नेका प्रयत्न करता है.

एक गिरे पगथी बिना, वाको दूजी पकरे कर ।
सो खाए दोनों गडथले, ए हांसी है या पर ॥ ७

कोई तो ज्ञानके अभावमें सीढ़ीके बिना ही गिर रहा है. दूसरा कोई ज्ञानी

बनकर उसका हाथ पकड़ता है, परन्तु मायाके नशेके प्रभावमें दोनों ही लड़खड़ाकर अन्तमें गिर जाते हैं. इस प्रकार यहाँ सब पर हँसी हो रही है.

एक पडी जिमी जान के, वाको दूजी उठावन जात ।
उलट पडी सो उलटी, ए खेल है या भांत ॥ ८

कोई तो इस झूठी भूमिको सत्य समझकर गिर रहा है. दूसरा उसे सम्हालने (पकड़ने) के लिए ज्ञानी बनकर जाता है. वे दोनों मायाके उलटे बन्धनमें फँसकर विपथगामी बन रहे हैं. इस प्रकार यह खेल चल रहा है.

ओठा लेवे जिमी बिना, पांव बिना दौडी जाए ।
जल बिना भवसागर, यामें गलचुए खाए ॥ ९

इस स्वप्नवत् संसारमें सत्यभूमिके बिना ही जीव इसका आश्रय लेना चाहते हैं और बिना पाँव (मनके द्वारा) ही भागने लगते हैं. यह भवसागर जल विहीन है, फिर भी इसमें गोते खा रहे हैं.

देखो अंत्रीख खडियां, हाथ बिना हथियार ।
नींद बडी है जागते, पिंड बिना आकार ॥ १०

यह संसार अन्तरिक्षमें अटका हुआ हैं. इसके हाथ नहीं हैं फिर भी इसने काम, क्रोधरूपी शस्त्र धारण किए हुए हैं. इसमें जागृत होने पर भी लोग अज्ञानकी निद्रामें डुबे हुए ही रहते हैं, तथा शरीर नाशवान है फिर भी स्वयंको साकार मानकर बैठे हैं.

एक नई कोई आए मिले, सो कहावे आप अजान ।
बडी होए दूजी मिने, समझावत सुजान ॥ ११

यदि किसीके घर पर नया उपदेशक आ जाता है तो वह उपदेशकके समक्ष स्वयंको अज्ञानी मानता है. वह ज्ञानी उपदेशक भी उन सबके बीच स्वयंको बड़ा समझकर (ज्ञानी मानकर) उन्हें समझाने लगता है.

कोई वचन करडे कहे, किन खंडनी न खमाए ।
सो कलपे दोऊ कलकले, वाको अमल यों ले जाए ॥ १२

इस प्रकार उपदेशक, उपदेश देते हुए यदि कठोर शब्दोंका प्रयोग करता है तो अज्ञानी उसको सहन नहीं कर पाता. पश्चात् श्रोता और वक्ता दोनों पछताकर दुःखी होते हैं. इस प्रकार उन सबको मायाका नशा खींचकर ले जाता है.

खंडी खांडी रोए रोलाए, दुख देखे दोऊ जन ।
जागे पीछे जो देखिए, तो कमी न मांहें किन ॥ १३

दूसरोंकी खण्डनी कर तथा दूसरोंसे अपनी खण्डनी सुनकर स्वयं रोते हुए तथा दूसरोंको रुलाते हुए उपदेशक तथा श्रोता दोनों ही स्वयंको दुःखी करते हैं, परन्तु जब जागृत होकर देखते हैं, तो ज्ञात होता है कि श्रोता तथा वक्ता दोनोंमेंसे किसीमें भी कोई कमी नहीं है.

हांसी होसी साथ में, इन खेलके रस रंग ।
पूर बिना बहे जात हैं, कोई आडी होत अभंग ॥ १४

इस प्रकार ऐसे मायावी खेलके रङ्गमें रङ्गे हुए सुन्दरसाथमें परस्पर हँसी होगी, क्योंकि इस रामत (मायावी खेल) का आनन्द ही कुछ इस प्रकारका है कि लोग मोह सागरके जलहीन प्रवाहमें बहते चले जा रहे हैं और कोई विरला ही इसमें स्वयंको टिका (अभङ्ग रख) पाएगा.

हरषे हांसी हेत में, करसी साथ कलोल ।
माया मांगी सो देखी नीके, कोई ना हांसी या तोल ॥ १५

जागृत होने पर सुन्दरसाथ एक दूसरे पर प्रसन्नतापूर्वक हँसेंगे तथा प्रेमपूर्वक मनोरञ्जन कर आनन्दित होंगे. हमने धामधनीसे झूठी माया देखनेकी माँग की थी, उसे भलीभाँति देखा तब ज्ञात हुआ कि इसके समान दूसरी कोई हँसी ही नहीं है.

मूल बिना ए वृख खडा, ताको फल चाहे सब कोए ।
फेर फेर लेने दौडहीं, ए हांसी इन विध होए ॥ १६

यह संसाररूपी वृक्ष मूल (आधार) बिना ही खड़ा है. सब लोग उसका

सुखरूपी फल प्राप्त करना चाहते हैं. इसलिए बार-बार सुख प्राप्त करनेके लिए दौड़ते हैं (किन्तु मिलता नहीं है). इस प्रकार यहाँ पर हँसी हो रही है.

ए खेल देख्या छल का, वैकुंठ लों पाताल ।
फल फूल पात ना दरखत, काष्ट तुचा मूल ना डाल ॥ १७

पातालसे वैकुण्ठ पर्यन्त फैला हुआ इस प्रकारका छल-कपटपूर्ण खेल मैंने देख लिया है. इस संसाररूपी वृक्षमें फल, फूल, पत्ते, तना, छाल, मूल तथा डालियाँ कुछ भी नहीं हैं.

खुले ना बंध बिना बांधे, विध विध खोले जाए ।
ए माया मोहोरें देखके, उरझ रहे सब मांहें ॥ १८

ये कोई बाँधे हुए बन्धन नहीं हैं, इसलिए विभिन्न प्रकारसे खोलनेका प्रयत्न करने पर भी ये खुलते नहीं हैं. इन मायावी मत मतान्तरोंमें पड़कर यहाँके सभी जीव माया मोहमें ही उलझ रहे हैं.

जागो जगाऊं जुगत सों, छोडो नींद विकार ।
पेहेचान कराऊं पीउ सों, सुफल करूं अवतार ॥ १९

हे ब्रह्मात्माओ ! जागो, मैं तुम्हें तारतम ज्ञान द्वारा जगा रहा हूँ. तुम इस मायावी निद्राके विकारोंका परित्याग कर दो. प्रियतम परमात्माकी पहचान करवा कर मैं तुम्हारा जीवन सफल बना दूँ.

वतन देखाऊं पीउ का, और अपनी मूल पेहेचान ।
एह उजाला करके, धोखा देऊं सब भांन ॥ २०

मैं तुम्हें धामधनीका मूल घर परमधाम दिखाकर अपने मूल स्वरूपकी भी पहचान करा दूँ. ज्ञानका यह प्रकाश फैलाकर तुम्हारे मनके सन्देह (धोखे) भी मिटा दूँ.

ए भोम हांसी देख के, आप होत सावचेत ।
मूल सुख कहें महामति, तुमको जगाए के देत ॥ २१

हे ब्रह्मात्माओ ! इस हँसीकी भूमि (संसार) को देखकर तुम स्वयं सचेत

हो जाओ. महामति तुम्हें जागृत करके मूल परमधामके सुख प्रदान कर रहे हैं.

प्रकरण २२ चौपाई ६१९

जागनी को प्रकरण

अब जाग देखो सुख जागनी, ए सुख सोहागिन जोग ।
तीन लीला चौथी घर की, इन चारों को यामें भोग ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! अब तुम जागृत होकर इस जागनीके सुखको देखो. यह जागनीका सुख सुहागिनियोंके लिए ग्रहण करने योग्य है. तीनों लीलाएँ (व्रज, रास तथा जागनी) एवं चौथी परमधामकी लीला इन चारोंका सुख इस जागनीके ब्रह्माण्डमें प्राप्त होता है.

कह्या न जाए सुख जागनी, सत ठौर के सनेह ।
तो भी कहूं जिमी माफक, नेक प्रकासूं एह ॥ २

जागनी ब्रह्माण्डके सुखोंका वर्णन नहीं हो सकता क्योंकि यहाँ पर साक्षात् सत्यभूमि परमधामका स्नेह उतर आया है. तथापि इस संसारके अनुरूप जो कुछ कहा जा सकता है, वह यत्किञ्चित् प्रकट कर रहा हूँ.

अब जगाऊं जुगत सों, उडाऊं सब विकार ।
रंगे रास रमाए के, सुफल करूं अवतार ॥ ३

अब मैं तुम्हें युक्तिपूर्वक जागृत कर रहा हूँ. तुम्हारे मनके सब विकारोंको हटा रहा हूँ. सबको आनन्द पूर्वक जागनी रास खेलाकर मानव अवतारको सफल बना दूँ.

अब दुख ना देऊं फूल पांखडी, देखूं सीतल नैन ।
उपजाऊं सुख सब अंगों, बोलाऊं मीठे बैन ॥ ४

अब मैं तुम्हें फूलकी पङ्खुड़ीके मार जितना भी दुःख नहीं दूँगा अपितु प्रेमपूर्ण शीतल दृष्टिसे देखूगा और मधुर वचनोंसे बुलाकर तुम्हारे अङ्ग-प्रत्यङ्गमें सुखानन्द उत्पन्न कर दूँगा.

आगे कलकली कलकलाए, तोहे ना गयो विकार ।
कठिन सही तुम खंडनी, वचन खांडा धार ॥ ५

मैंने पहलेसे ही रो-रोकर लगातार वेदनापूर्ण वचन कहे, तथापि तुम्हारे अन्दरके विकार दूर नहीं हुए, तब तुमने तलवारकी धारके समान मेरे कठोर एवं तीक्ष्ण वचनोंको सहन किया.

सो ए वचन मोहे सालहीं, कठिन तुमको जो कहे ।
सोहागनियों को निद्रा मिने, मूल घर विसर गए ॥ ६

मैंने तुम्हें उस समय जो कठोर वचन कहे थे, वे अब मुझे दुःखित कर रहे हैं. किन्तु खेद है कि सुहागिनी ब्रह्मवासनाएँ घोर अज्ञानताकी इस नींदमें अपना मूल घर परमधाम भूल गईं हैं.

अब गालूं ताओ दिए बिना, करूं सो रस कंचन ।
कस चढाऊं अति रंगे, दोऊ पेर करूं धन धन ॥ ७

अब कठिन वचनोंका ताप दिए बिना ही तुम्हारे हृदयको गलाकर कञ्चनके समान शुद्ध बना दूँ. प्रेमकी कसौटी पर परख कर तुम्हें खेल (संसार) तथा परमधाम दोनोंमें धन्य बना दूँ.

जानूं साथजी विदेस आए, दुख देखे कै भांत ।
जो लों ना इत सुख पावहीं, तोलों ना मोहे स्वांत ॥ ८

मैं जानता हूँ कि हमारे सुन्दरसाथ मूल वतन परमधामसे यहाँ विदेश (मायावी संसार) में आए हैं और इस मायामें उन्होंने अनेक प्रकारके दुःख देखे हैं. जब तक वे यहाँ पर (अपने जीवनमें) परमधामका अखण्ड सुख प्राप्त नहीं करते, तब तक मुझे चैन नहीं है.

नैन चढाए साथ न जागे, यों न जागनी होए ।
मूल घर देखाइए, तब क्यों कर रेहेवे सोए ॥ ९

आँखें चढ़ाकर (डाँट-फटकार) तथा क्रोधपूर्ण वचनोंसे सुन्दरसाथकी जागनी नहीं होती. मूलघर परमधामकी पहचान करवा देने पर वे स्वयं इस संसारमें कैसे सोए हुए रह पाएँगे ?

खंडनी कर खीजिए, जागे नहीं इन भांत ।
दीजे आप ओलखाए के, यों साख देवाए साख्यात ॥ १०

क्रुद्ध होकर खण्डनी करने पर भी वासनाएँ जागृत नहीं होंगी. स्वयं (आत्मा) की पहचान करवाने पर ही उनकी आत्मा परमधामकी साक्षी देगी.

जगाऊं सुख याद देने, करूं आप अपनी बात ।
पीछे हम तुम मिलके, जाहेर कीजे विख्यात ॥ ११

परमधामके सुखोंकी याद दिलानेके लिए मैं तुम्हें जगा रहा हूँ. अपने घरके मूल सम्बन्धकी बातें अपनी आत्माओंसे ही की जा सकती हैं. पश्चात् हम सब (हम, तुम) मिलकर परमधामका सम्पूर्ण वृत्तान्त प्रकट करेंगे.

आगे आवेस मोपें पिया को, दे अंग लई जगाए ।
निसंक निद्रा उडाए के, साख्यात लई बैठाए ॥ १२

सर्वप्रथम नवतनपुरी धाममें सद्गुरु महाराजने अपना आवेश देकर मुझे जागृत किया. इस प्रकार सद्गुरुने अज्ञानरूपी निद्राको निश्चित रूपसे निर्मूल कर मुझे मूल घर परमधाममें जागृत कर साक्षात् बैठाया.

अब रह्यो न जाए मैं नेक न्यारे, यों किए जागनी ले ।
अहंमेव जाग्या धाम का, हम मिने आया जे ॥ १३

सद्गुरुने इस प्रकार जागृत किया कि अब पलमात्रके लिए भी उनसे अलग रहा नहीं जा सकता. 'मैं परमधामकी आत्मा हूँ' इस प्रकार परमधामका अहंभाव जागृत होकर हमारे हृदयमें समा गया है.

पेहेले जोगमाया भई रास में, ताको सो अति उजास ।
पर साथ जोग होसी जागनी, ताको कह्यो न जाए प्रकास ॥ १४

सर्वप्रथम योगमाया रचित रासमण्डलका प्रकाश अत्यन्त तेजोमय था परन्तु इस जागनी ब्रह्माण्डमें सुन्दरसाथके लिए आत्म-जागृतिकी लीला होगी, उसके प्रकाशका वर्णन नहीं हो सकता.

अब विछोहा खिन एक साथ को, सो मैं सह्यो न जाए ।
अब नेक वाओ इन मायाकी, जानों जिन आवे ताए ॥ १५

अब मुझे अर्धक्षणके लिए भी सुन्दरसाथका वियोग सहन नहीं होगा. मैं चाहता हूँ कि अब मायाका जरा-सा झोंका भी सुन्दरसाथको प्रभावित न करे.

साथजी इन जिमी के, सुख देऊं अति अपार ।
हंस हंस हेते हरष में, तुम नाचसी निरधार ॥ १६

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हें इस भूमि (संसार) के असीम सुख दूँ. इन्हें प्राप्त कर तुम निश्चय ही प्रेमपूर्ण (प्रसन्न चित्त) होकर हँसते हुए नाचने लगोगे.

प्रीतम मेरे प्रान के, अंगना आतम नूर ।
मन कलपे खेल देखते, सोए दुख करूं सब दूर ॥ १७

हे मेरे प्राणके प्रियतम तथा धामधनीकी प्रकाशमयी अङ्गनाओ ! यह खेल देखते हुए तुम्हारा मन व्याकुल हो गया है, इसलिए अब मैं तुम्हारे दुःखको दूर कर देता हूँ.

मुख करमाने मन के, सो तुमारे मैं ना सहूं ।
ए दुख सुख को स्वाद देसी, तो भी दुख मैं ना देऊं ॥ १८

तुम्हारे मुरझाए हुए चेहेरे तथा दुःखित मनको मैं सहन नहीं कर सकता. यद्यपि ये सांसारिक दुःख परमधामके अखण्ड सुखोंका आस्वादन कराएँगे तथापि मैं तुम्हें दुःख नहीं दूँगा.

सत सुख में सुख देवहीं, इन जिमी के दुख जेह ।
तुम हंसोगे हरष में, रस देसी दुखडा एह ॥ १९

मायावी संसारके ये दुःख भी तुम्हें परमधामके अखण्ड सुख प्रदान करेंगे. तब तुम प्रेमानन्दमें विभोर होकर हँसोगे. इस प्रकार यहाँका दुःख परमधाममें प्रेमानन्द रस दिलाएगा.

हम उपाया सुख कारने, ए जो मांग्या खेल तुम ।
दुख दे वतन बोलावहीं, ए इन घर नहीं रसम ॥ २०

यह मायावी झूठा खेल हमारे आनन्दके लिए ही उत्पन्न किया गया है जिसकी

तुमने माँग की थी. अब तुम्हें दुःखी करके परमधाम बुलाना, यह अपने अखण्ड घरकी रीति नहीं है.

सेहेजल सुख तुमें है सदा, अलप नहीं असुख ।
तुम सुख को स्वाद लेने, खेल मांग्या ए दुख ॥ २१

तुम सर्वदा परमधामके सहज-प्रेमानन्द सुखोंमें मग्न रहते थे. वहाँ किञ्चित भी दुःख नहीं है. इन अखण्ड सुखोंका स्वाद लेनेके लिए तुमने दुःखरूपी खेलकी माँग की.

खेल मांग्या दुख का, तब कह्या हम तुम ।
दुख का खेल तुमको, क्यों देखावें हम ॥ २२

जब तुमने दुःखरूपी मायावी खेल देखनेकी माँग की तब श्रीराजजीने तुम्हें कहा था कि यह दुःखरूपी रामत मैं तुम्हें कैसे दिखाऊँ ?

दुख तो क्योंए देऊं नहीं, तो खेल देख्या क्यों जाए ।
खंत लागी खरी खेल की, तिनको सो एह उपाए ॥ २३

उस समय श्री राजजीने कहा, हे ब्रह्मात्माओ ! यदि तुम्हें किसी भी प्रकारका दुःख न दूँ तो संसारका खेल तुमसे कैसे देखा जाएगा ? तुम्हारे मनमें खेल देखनेकी तीव्र इच्छा हुई है, उसके लिए यही एक मात्र उपाय है.

पिया हम खेल जान्या घरका, ज्यों खेल करत सदाए ।
हम खेल खडे यों देखसी, ए भी इन अदाए ॥ २४

हे धनी ! जिस प्रकार हमलोग परमधाममें सदैव रमण करते हैं, उस समय हमने सांसारिक खेलको भी उसी प्रकार समझा. हमारी यह धारणा थी कि हम सब परमधाममें ही खड़े रहकर सांसारिक खेल देखेंगी.

वस्तोगते दुख ना कछू, जो पीछे फेरो द्रष्ट ।
जो देखो वचन जागके, तो नाहीं कछुए कष्ट ॥ २५

वस्तुतः परमधामकी ओर दृष्टि डालेंगे तो वास्तवमें दुःख कुछ भी नहीं है. तारतमके वचनों द्वारा जागृत होकर मायाका खेल देखने पर लेश-मात्र भी कष्ट नहीं होगा.

लगोगे जो दुख को, तो दुख तुमको लागसी ।
याद करो जो निज सुख, तो दुख तुमथें भागसी ॥ २६

यदि इस दुःखमय संसारमें मग्न होकर डूबे रहोगे, तो तुम्हें दुःख ही प्राप्त होगा. यदि परमधामके अखण्ड सुखोंका स्मरण करोगे, तो ये सांसारिक दुःख तुमसे भाग जाएँगे.

फेर देखो जो नजरों, तो रेहेसी न्यारे दुख ।
करोगे इत खेल रंगे, विनोद बातें मुख ॥ २७

मायाकी ओरसे दृष्टि हटा कर यदि परमधामकी ओर देखोगे, तो ये सांसारिक दुःख तुमसे दूर हट जाएँगे. तब तुम इसी संसारमें रहते हुए भी परमधामके सुखोंका अनुभव करते हुए अपने मुखसे आनन्द विनोदकी बातें करोगे.

सागर सुख में झीलते, तहां दुख नहीं परवेस ।
तो दुख तुम मांगिया, सो देखाया लवलेस ॥ २८

तुम सब परमधामके सुख सागरमें मग्न थे, वहाँ दुःखका प्रवेश नहीं था. इसलिए तुमने दुःख देखनेकी माँग की जिसे श्री राजजीने लेश-मात्र दिखाया है.

पौंढे भेले जागसी भेले, खेल देख्या सबों एक ।
बातां करसी जुदी जुदी, विध विध की विसेक ॥ २९

ब्रह्मात्माएँ परमधामसे इस संसारमें सुरतारूपमें एक साथ ही आईं हैं तथा वे पुनः एक ही साथ परमधाममें जागृत होंगी. इस प्रकार इस झूठे खेलको ब्रह्मात्माओंने एक साथ ही देखा है. किन्तु परमधाममें जाग्रत होने पर वे खेलकी बातें अलग-अलग रूपमें करेंगी. जिन्होंने जिस प्रकारकी विशेषता देखी है, वे उसीके अनुरूप बातें करेंगी.

दुख तुमारे मैं ना सहूं, सो जानो चित चौकस ।
ए दुख देसी बोहोत सुख, खेल होसी रंग रस ॥ ३०

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हारा दुःख सहन नहीं कर पाता इस बातको निश्चित रूपसे मान लो. किन्तु यहाँके दुःख परमधामके अधिक सुख प्रदान करेंगे. इस प्रकार यह खेल रसदायी (आनन्ददायी) होगा.

साथ को इन जिमी के, सुख देने को हरष अपार ।
रासमें रंग खेल के, भेले जागिए निरधार ॥ ३१

सुन्दरसाथको इस संसारके सुख दिलानेमें मुझे अपार हर्ष हो रहा है. उन्हें आनन्दके साथ जागनी रासमें खेलाकर हम सब एक साथ परमधाममें जागृत हो जाएँगे.

अब ल्यो रे मेरे साथ जी, इन जिमी के ए सुख ।
मैं तुमारे ना सेहे सकों, जो देखे तुम दुख ॥ ३२

हे सुन्दरसाथजी ! अब तुम इस भूमिके सुखोंका आनन्द प्राप्त करो. क्योंकि तुम सबने अब तक जो दुःख देखे हैं, मैं उन्हें सहन नहीं कर सकता.

लेहेर लगे तुमें मोह की, सो आतम मेरी ना सहे ।
अब खंडनी भी ना करूं, जानों दुखाऊं क्यों मुख कहे ॥ ३३

तुम्हें मोहजलकी लहरोंके थपेड़े लगें, उसे मेरी आत्मा सहन नहीं कर सकती. अब मैं तुम्हारी खण्डनी भी नहीं करूँगा. अपने मुखसे कुछ कहकर तुम्हारे दिलको दुःख देनेकी इच्छा मेरे मनमें बिलकुल नहीं है.

अब क्यों देऊं कसनी, मुख करमाने ना सहूं ।
तिन कारन सबद कठन, मेरे प्यारों को मैं क्यों कहूं ॥ ३४

अब मैं तुम्हें कठिनाइयाँ (कसनी) कैसे दूँ ? क्योंकि तुम्हारे मुखकी मलिनता (मुरझाए हुए चेहेरे) को मैं देख नहीं सकता. इसलिए मेरे प्यारे सुन्दरसाथको मैं कठोर वचन कैसे कहूँ ?

अब तारूं तुमें या विध, ज्यों लगे ना लेहेरें लगार ।
सुखपाल में बैठाए सुखें, घर पोहोंचाऊं निरधार ॥ ३५

अब मैं तुम्हें इस प्रकार भवसागरसे पार करूँ कि तुम्हें मायावी लहरें स्पर्श तक न कर सकें. तारतम ज्ञानके सुखपालमें बैठाकर निश्चितरूपसे तुम्हें मूल घर–परमधाम पहुँचा दूँ.

उपजाए देऊं अंग थें, रस प्रेम के परकार ।
प्रकास पूरन करके, सब टालूं रोग विकार ॥ ३६

मैं अपने अङ्गों द्वारा अनेक प्रकारसे प्रेमरस उत्पन्न करवा दूँ. तारतम ज्ञानका प्रकाश फैलाकर सभी प्रकारके रोगों तथा विकारोंको दूर कर दूँ.

अंग दिए बिना आवेस, नाहीं प्रेम उपाए ।
आवेस दे करूं जागनी, लेऊं अंग में मिलाए ॥ ३७

सुन्दरसाथको मेरा ज्ञानरूपी आवेश दिए बिना परमधामके मूल सम्बन्धका प्रेम कैसे प्रकट होगा ? इसलिए मैं अपना आवेश देकर सुन्दरसाथको जागृत करूँ तथा सबको अपने अङ्गोंमें समाहित करूँ.

अब भेले तो सब चलिए, जो अंग ना काहूं अटकाए ।
तो तुमें होवे जागनी, जो सांचवटी बटाए ॥ ३८

अब हम सब सुन्दरसाथ मिलकर तभी एक साथ चलेंगे, जब किसीका भी मन (अङ्ग) इस संसारमें कहीं भी नहीं अटकेगा. यह सच्चा ज्ञान प्रदान करने पर ही तुम्हें जागनीका सुख प्राप्त होगा.

अब दुख आवे तुमको, तहां आडा देऊं मेरा अंग ।
सुख देऊं भली भांतसों, ज्यों होए ना बीच में भंग ॥ ३९

अब यदि सुन्दरसाथको किसी भी प्रकारका दुःख प्राप्त होगा, तो मैं अपने ज्ञानरूपी अङ्गको बीचमें रखकर उसे रोक लूँ. मैं हर प्रकारसे तुम्हें भलीभाँति सुख दूँ, जिससे परमधामके मार्गमें कोई व्यवधान न पड़े.

ए लीला करूं इन भांतें, तो रास रंग खेलाए ।
विध विध के सुख विलसिए, विरहे जागनी सह्यो न जाए ॥ ४०

अब मैं इस प्रकार लीलाकी व्यवस्था करूँ जिससे जागनी रास खेला जा सके. इस लीलाके विभिन्न सुखोंमें विलास करो क्योंकि जागनीके ब्रह्माण्डमें विरहका दुःख सहा नहीं जाता.

जगाए नीके सुख देऊं, रेहेस खेलाऊं रंग ।
सत सुख क्यों आवहीं, जोलों ना दीजे अंग ॥ ४१

मैं तुम्हें जागृतकर अखण्ड सुख प्रदान करते हुए जागनीरासमें तल्लीन कर दूँ. जब तक मैं तुम्हें अपना अङ्ग (अखण्ड तारतम ज्ञान) प्रदान न करूँ, तब तक तुम्हें अखण्ड सुखका अनुभव कैसे होगा ?

अंगना को अंग दीजिए, अंगना लीजे अंग ।
पास देऊं पूरा प्रेम का, नेहेचल का जो रंग ॥ ४२

ब्रह्मात्माओंको अपना अङ्ग देकर उन्हें भी अपने ही अङ्गोंमें समा लेता हूँ. मैं प्रेमका ऐसा पक्का रङ्ग लगा दूँ, जो सर्वदा अमिट रहे.

असतसों उलटाए के, सतसों कराऊं संग ।
पर आतमसों बंध बांधूं, ज्यों होए ना कबहूं भंग ॥ ४३

अनित्य (असत्य) मायासे उलटाकर धामधनीके अखण्ड सुखोंका साक्षात्कार करा दूँ. पर आत्माके साथके ऐसे सम्बन्धकी पहचान करवा दूँ, जो कभी भी भङ्ग नहीं होगा.

पीऊ जगाई मुझे एकली, मैं जगाऊं बांधे जुथ ।
ए जिमी झूठी दुख की, सो कर देऊं सत सुख ॥ ४४

सद्गुरु निजानन्द स्वामीने मुझे अकेलेको ही जगाया. मैं एक साथ पूरे समूहको ही जागृत करूँ. यह नश्वर संसार अत्यन्त दुःखदायी है, उसे भी अखण्ड सुखदायी बना दूँ.

सब साथ करूं आपसा, तो मैं जागी परमान ।
जगाए सुख देऊं धाम के, मिलाए मूल निसान ॥ ४५

सब सुन्दरसाथको ज्ञान देकर मैं अपने समान बना दूँ, तभी मेरा जागृत होना सार्थक माना जाएगा. उन्हें जागृत कर परमधामके अखण्ड सुख दूँ तथा उनके हृदयमें परमधामके मूल निशान स्थापित कर दूँ.

आवेस जाको मैं देखे पूरे, जोगमाया की नींद होए ।
पर जो सुख दीसे जागनी, हम बिना न जाने कोए ॥ ४६

मैंने जिस स्वरूपमें (विहारीजीमें) पूर्ण आवेश देखा, उनमें भी योगमायाकी निद्रा दिखाई दी है. परन्तु जागनीमें जो सुख प्राप्त होता है, उसे हमारे बिना अन्य कोई जान नहीं सकता.

जो जाग बैठे धाममें, ताए आवेस को क्या कहिए ।
तारतम तेज प्रकास पूरन, तिनथें सकल विध सुख लहिए ॥ ४७

जो ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत हो चुकी हैं, उनके लिए आवेशके विषयमें क्या कहा जा सकता है ? क्योंकि तारतमका तेज पूर्ण प्रकाश देनेवाला है, इसके द्वारा सब प्रकारके अखण्ड सुख प्राप्त किए जा सकते हैं.

आवेस को नहीं अटकल, पर जागनी अति भारी ।
आवेस जागनी तारतमें, जो देखो जाग विचारी ॥ ४८

धनीजीके आवेशको अटकलों द्वारा मापा नहीं जा सकता, परन्तु ज्ञानद्वारा जागृत होना विशेष महत्त्वपूर्ण बात है. यदि जागृत होकर विचारपूर्वक देखें, तो ज्ञात होगा कि आवेश प्राप्त होना तथा जागृत होना, ये दोनों तारतम ज्ञान पर आधारित हैं.

ए पैए बतावे पार के, नहीं तारतम को अटकल ।
आवेस जागनी हाथ पिया के, एह हमारा बल ॥ ४९

यह तारतम ज्ञान पारका मार्ग स्पष्ट करता है, इसलिए तारतम ज्ञानमें अनुमानका कोई स्थान नहीं है. आवेश देकर जागृत करना अथवा ज्ञान देकर जागृत करना, ये दोनों सद्गुरु धनीके हाथकी बातें हैं, हमारे पास भी उनकी ही दी हुई शक्ति है.

तारतम के सुख साथ आगे, विध विध पियाने कहे ।
पीछे ए सुख इन्द्रावती को, दया कर सारे दिए ॥ ५०

सद्गुरु धनीने सुन्दरसाथके समक्ष तारतम ज्ञानके सुख अलग-अलग प्रकारसे प्रकट किए. बादमें धनीजीने दयाकर ये सब सुख इन्द्रावतीको दिए हैं.

धन पिया धन तारतम, धन धन सखी जो ल्याई ।
धन धन सखी मैं सोहागनी, जो मोंमें ए निध आई ॥ ५१

धनीजी धन्य हैं तथा तारतम ज्ञान भी धन्य है. श्री श्यामाजीके आवेशके साथ तारतम ज्ञान लेकर आनेवाली सुन्दरबाई सखी भी धन्य हैं और मैं सुहागिनी इन्द्रावती भी धन्य हो गई हूँ, क्योंकि यह तारतम ज्ञानरूपी निधि सद्गुरु द्वारा मुझे प्राप्त हुई है.

पिया ल्याए मुझ कारने, और हुआ न काहूं जान ।
मैं लिया पिया विलसिया, विस्तारिया परमान ॥ ५२

सद्गुरु धनी मेरे लिए ही परमधामसे यह अखण्ड तारतम ज्ञान ले आए हैं. इस रहस्यकी जानकारी अन्य किसीको भी नहीं हुई. मैंने इस तारतम ज्ञानको अपने हृदयमें धारण किया एवं उसपर आचरण करते हुए अखण्ड ज्ञानमें विलास भी किया तथा यथार्थ रूपसे इसका विस्तार भी किया.

ए बानी सब में पसरी, पर किया न साथें विचार ।
पीछे दया कर दई धनिएं, अंग इन्द्रावती विस्तार ॥ ५३

सद्गुरुकी यह अखण्ड वाणी सभी सुन्दरसाथमें फैल गई परन्तु इस पर सुन्दरसाथने अधिक विचार नहीं किया. फिर सद्गुरु धनीने दया कर इन्द्रावतीके द्वारा उसका विस्तार किया.

बोहोत धन ल्याए धनी धाम थें, विध विध के परकार ।
सोए सब मैं तौलिया, तारतम सबमें सार ॥ ५४

धामधनी सद्गुरु परमधामसे विपुल धन (प्रेम, आनन्द, दया, क्षमा आदि) लेकर आए. यह अखण्ड धन विभिन्न प्रकारका है. उन सबका मैंने मूल्याङ्कन किया, तो ज्ञात हुआ कि तारतम ज्ञान ही सबका सार (सर्वश्रेष्ठ) है.

तारतम को बल कोई न जाने, एक जाने मूल सरूप ।
मूल सरूप के चित की बातें, तारतममें कै रूप ॥ ५५

इसलिए तारतमका बल (सामर्थ्य) दूसरा कोई नहीं जानता है, इसे केवल

मूल स्वरूप श्रीराजजीकी अर्धाङ्गिनी श्रीश्यामाजीके अवतार स्वरूप सद्गुरु ही जानते हैं. उनके अन्तर्मनकी बातें तारतममें अनेक रूपसे प्रकट हुई हैं.

साख्यात सरूप इन्द्रावती, तारतम को अवतार ।
वासना होसी सो बलगसी, इन बचन के विचार ॥ ५६

सद्गुरु धनी कहते थे, इन्द्रावतीका स्वरूप साक्षात् तारतम ज्ञानका ही अवतार है. परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही इस अद्वैत वाणी पर विचार कर इन्द्रावती द्वारा निर्दिष्ट मार्गका अनुसरण करेंगी.

सरूप साथकी पेहेचान, तारतममें उजास ।
जोत उदोत प्रगट पूरन, इन्द्रावती के पास ॥ ५७

मूल स्वरूप श्री राजजी तथा सुन्दरसाथकी पहचान तारतम ज्ञानके प्रकाशमें ही सम्भव है. अब इस तारतमकी ज्योतिका पूर्ण प्रकाश इन्द्रावतीके हृदयमें आ गया है.

वास्नाओंकी पेहेचान, बानी करसी तिन ताल ।
निसंक निद्रा उड जासी, सुनते ही ततकाल ॥ ५८

अब यह तारतम वाणी उसी समय ब्रह्मात्माओंकी पहचान कराएगी एवं इस ब्रह्म वाणीको सुनते ही निश्चितरूपसे अज्ञानरूप निद्रा उड़ जाएगी.

एक लवा सुने जो वासना, सो संग ना छोडे खिन मात्र ।
होसी सब अंगों गलित गात्र, प्रगट देखाए प्रेम पात्र ॥ ५९

जो ब्रह्मात्माएँ इस तारतम वाणीका एक शब्द भी सुन लेंगी, वे क्षण भरके लिए भी इस वाणीका सङ्ग नहीं छोड़ेंगी. उस समय उनका प्रत्येक अङ्ग प्रेमसे गल जाएगा तथा प्रत्यक्ष रूपसे वे प्रेमके पात्र (स्वरूप) दिखाई देंगी.

ए बानी सुनते जिनको, आवेस न आया अंग ।
सो नहीं नेहेचे वासना, ताको करूं जीव भेलो संग ॥ ६०

इस अखण्ड वाणीको सुनते ही जिसके अङ्गमें प्रेम नहीं छलकता, वह

निश्चित रूपसे परमधामकी आत्मा नहीं है. उसे मैं जीवसृष्टिके साथ मिला दूँ अर्थात् जीवसृष्टि कहूँ.

वासना जीव का बेवरा एता, ज्यों सूरज द्रष्टें रात ।
जीव का अंग सुपनका, वासना अंग साख्यात ॥ ६१

ब्रह्मात्माओं तथा जीवमें उतना ही अन्तर है जितना सूर्य और रात्रिमें होता है. जीव सृष्टिका अङ्ग स्वप्नका है जबकि ब्रह्मसृष्टि साक्षात् श्री राजजीकी अङ्ग स्वरूपा हैं.

भी बेवरा वासना जीवका, याके जुदे जुदे हैं ठाम ।
जीवका घर है नींद में, वासना घर श्री धाम ॥ ६२

ब्रह्मात्माओं तथा जीवमें और भी अन्तर है क्योंकि इन दोनोंके उद्गमस्थान भी अलग-अलग हैं. जीव सृष्टिका घर अज्ञानरूपी निद्राके अन्तर्गत है और ब्रह्मात्माओंका घर अखण्ड परमधाम है.

ना होए नया न पुराना, श्री धाम इन परकार ।
घटे बढे नहीं पत्र एक, सत सदा सरबदा सार ॥ ६३

अखण्ड परमधाम इस प्रकारका है कि वहाँ न तो कोई नया उत्पन्न होता है और न पुराना लुप्त होता है, यहाँ तक कि वृक्षके पत्तोंमें भी घट-बढ़ नहीं होती. वहाँकी सभी वस्तुएँ सत्य हैं, नित्य हैं तथा सदैव एकरस हैं.

जो किन जीवे संग किया, ताको करूं ना मेलो भंग ।
सो रंगे भेलूं वासना, वासना सत को अंग ॥ ६४

यदि किसी जीवने ब्रह्म वासनाओंके साथ सङ्ग किया हो तो उसको भी मैं अलग (अखण्ड सुखसे वञ्चित) न होने दूँगा. उसे भी वासनाओंके साथ मिलाकर प्रेमानन्दका सुख दूँगा, क्योंकि वासना तो सत्य स्वरूप धनीजीकी ही अङ्गनाएँ हैं.

तारतम तेज प्रकास पूरन, इन्द्रावती के अंग ।
ए मेरा दिया मैं देवाए, मैं इन्द्रावती के संग ॥ ६५

सद्गुरु धनीने कहा है कि तारतम तेजका पूर्ण प्रकाश इन्द्रावतीके अङ्गोंमें

समाहित हुआ है. मैंने इन्द्रावतीको तारतम ज्ञान दिया और उनके द्वारा सुन्दरसाथको दिलवाया है. मैं सदैव इन्द्रावतीके साथ ही हूँ.

इन्द्रावती के मैं अंगे संगे, इन्द्रावती मेरा अंग ।
जो अंग सोंपे इन्द्रावती को, ताए प्रेमें खेलाऊं रंग ॥ ६६

सद्गुरुने यह भी कहा कि मैं इन्द्रावतीके अन्तःकरणमें हूँ, इन्द्रावती मेरी ही अङ्ग स्वरूपा है. इसलिए जो कोई सुन्दरसाथ इन्द्रावतीको अपना अङ्ग (सर्वस्व) अर्पण करेगा, उसे मैं प्रेमके रङ्गमें (प्रेमानन्द लीलामें) रङ्ग दूँगा.

बुध तारतम जित भेलें, तित पेहेले जानो आवेस ।
आग्या दया सब पूरन, अंग इन्द्रावती परवेस ॥ ६७

तारतम ज्ञान तथा जागृत बुद्धि दोनों जहाँ एकत्रित हो जाते हैं, वहाँ श्री राजजीका आवेश पहलेसे ही विराजमान रहता है. श्री राजजीकी आज्ञा (हुकम) तथा श्री श्यामाजीकी दया, ये सब पूर्णरूपसे इन्द्रावतीमें समाविष्ट हैं.

सुख देऊं सुख लेऊं, सुखमें जगाऊं साथ ।
इन्द्रावतीको उपमा, मैं दई मेरे हाथ ॥ ६८

मेरी इच्छा है कि मैं ब्रह्मात्माओंको सुख दूँ तथा उनका सुख ग्रहण करूँ एवं उन्हें सुखपूर्वक परमधामके सुखमें जागृत कर दूँ. मैंने स्वयं अपने हाथोंसे इन्द्रावतीको यह कार्यभार सौंपकर उसे यह शोभा (उपमा) दी है.

मैं दया तुमको करी, जो देखो नैना खोल ।
ना खोलो तो भी देखोगे, छाया निकसी ब्रह्मांड फोड ॥ ६९

हे सुन्दरसाथजी ! मैंने तुम पर अत्यन्त कृपा की है. उसे अपनी विवेकरूपी आँखे खोलकर देखो. यदि तुम आँख नहीं खोलोगे तो भी देख सकोगे क्योंकि अब तारतम ज्ञानकी ज्योति ब्रह्माण्डको फोड़कर पार पहुँचेगी.

ए खेल देख्या बैठे घर, अग्याएं सैयों नजर ।
जब अंतर आंखा खुली, तब द्रष्ट घरकी घर ॥ ७०

ब्रह्मात्माओंने परमधाममें परब्रह्म परमात्माके चरणोंमें बैठकर उनकी आज्ञासे

ही इस खेल पर दृष्टि डाली है. जब उनकी अन्तर्दृष्टि खुलेगी, तब वे स्वयंको परमधाममें ही पाएँगी.

निज नैना देऊं खोलके, ज्यों आडी न आवे मोह स्त्रष्ट ।
होसी पेहेचान सत सुख, निज वतन देखो द्रष्ट ॥ ७१

मैं तुम्हारी मूल दृष्टि (पर-आत्माकी आँखें) खोल दूँ ताकि इस माया मोहकी सृष्टि तुम्हारे मार्गमें अवरोधक न बने. तब तुम्हें परमधामके अखण्ड सुखोंकी पहचान होगी तथा तुम अपने मूल घर परमधामको देखने लगोगी.

तारतमको जो तारतम, अंग इन्द्रावती विस्तार ।
पैए देखावे सार के, तिन पार के भी पार ॥ ७२

तारतम मन्त्र (निजनाम) का तारतम (रहस्य) अठारह हजार सात सौ अठावन चौपाईवाली तारतम वाणी (सागर) है. इसका विस्तार इन्द्रावती द्वारा होगा. इस वाणीके द्वारा हद भूमिसे परे बेहद तथा उससे भी परे अक्षर और अक्षरातीतका सारगर्भित मार्ग दिखाया गया है.

ब्रह्मांड दोऊ अखंड किए, तामें लीला हमारी ।
तीसरा ब्रह्मांड अखंड करना, ए लीला अति भारी ॥ ७३

व्रज तथा रास दोनों ब्रह्माण्डको अखण्ड किया है. इन दोनोंमें हम ब्रह्मात्माओंकी ही लीला है. जागनीके इस तीसरे ब्रह्माण्डको भी अखण्ड बनाना है क्योंकि यह जागनी लीला इन दोनों (व्रज तथा रास) से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है.

तीन लीला माया मिने, हम प्रेमें विलसी जेह ।
ए लीला चौथी विलसते, अति अधिक जानी एह ॥ ७४

व्रज, रास तथा जागनी इन तीनों लीलाओंका अनुभव हम सबने कालमाया तथा योगमायाके ब्रह्माण्डोंमें प्रेमपूर्वक किया. परन्तु जागनी लीलामें चौथी परमधामकी लीलाका भी अनुभव होनेके कारण यह जागनी लीला (व्रज तथा राससे) अधिक श्रेष्ठ मानी गई है.

एक सुख सुपनके, दूजे जागते ज्यों होए ।
तीन लीला पेहेलें ए चौथी, फरक एता इन दोए ॥ ७५

जिस प्रकार स्वप्नके सुखोंसे अधिक आनन्द जागृतिके सुखों द्वारा प्राप्त होता है, उसी प्रकार व्रज तथा रासकी लीलाओंसे अधिक आनन्द जागनी लीलामें प्राप्त होता है. व्रज, रास तथा जागनी इन तीनों लीलाओंसे भी अधिक श्रेष्ठ चौथी परमधामकी लीलाका अनुभव भी इसी जागनी लीलामें होगा. व्रज तथा रासकी लीलाओंसे इस जागनी लीलामें यही तो अन्तर है.

पेहेलें द्रष्ट जो हमारे आइया, तेते मिने उजास ।
हम खेलें तिन उजासमें, और लोक सब को नास ॥ ७६

पहले योगमाया निर्मित रास मण्डलमें हमें जो दृष्टि–गोचर हुआ, वहाँ उतनेमें ही प्रकाश था. उस प्रकाशमें हम रमण करते रहे. उस समय अन्य सब लोकोंका विनाश हो गया था.

अब लोक चौदे तरफ चारों, प्रकास होसी साथ जोग ।
जीव सबको जगाए के, टालूं सो निद्रा रोग ॥ ७७

अब तो चौदह लोकों तथा चारों दिशाओंमें सुन्दरसाथके लिए तारतम ज्ञानका प्रकाश फैल जाएगा. इसलिए अखण्ड तारतम ज्ञान द्वारा सब जीवोंको जागृत कर इस निद्रा (अज्ञान) रूपी रोगको सदाके लिए मिटा दूँ.

हम जाहेर होए के चलसी, सब भेलें निज घर ।
वैराट होसी सनमुख, एक रस सचराचर ॥ ७८

अब हम सब सुन्दरसाथ प्रकट (एकत्रित) होकर निजघर (परमधाम) की ओर एक साथ प्रस्थान करेंगे. पूरा विश्व ही अज्ञानताका मार्ग छोड़कर सन्मार्गगामी बनेगा (उन्हें आठ प्रकारकी अखण्ड मुक्ति प्राप्त होगी). इस प्रकार समग्र सृष्टि एकरस हो जाएगी.

जब हम जाहेर हुए, सुध होसी संसार ।
दुनियां सारी दौडसी, करने को दीदार ॥ ७९

जब हम ब्रह्मात्माएँ प्रकट होंगी तब पूरी दुनियाँको परमात्माकी सुधि होगी.

तब सम्पूर्ण विश्व ब्रह्मात्माओंके दर्शनके लिए दौड़ पड़ेगा.

हम सदा संग पिया के, जो रूहें सोहागिन ।
सो आग्याएं उठ बैठसी, सब अपने वतन ॥ ८०

हम सब सुहागिनी ब्रह्मात्माएँ सदैव अपने प्रियतम धनीके साथ हैं. उनकी आज्ञासे ही हम मायाकी नींदको त्यागकर अपने परमधाममें जागृत होकर बैठेंगी.

अव्वल सब सोहागनी, एक ठौर पिया पास ।
सबों सुख होसी सोहागनी, रंग रस प्रेम विलास ॥ ८१

पहले भी सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके पास एक साथ बैठी थीं. अब इस जागनी ब्रह्माण्डसे जागृत होकर भी इन सुहागिनियोंको सब प्रकारके सुख प्राप्त होंगे, तब वे धनीके प्रेमरङ्गमें विलसित होंगी.

जो जोत होसी जागनी, ए नूर बिना हिसाब ।
लोक चौदे पसरसी, तब उड जासी ए ख्वाब ॥ ८२

यह जागनी लीला सर्वत्र प्रकाशित होगी. इसका प्रकाश असीम होगा. जब यह प्रकाश चौदह लोकोंमें विस्तृत होगा तब अज्ञानरूपी नींद उड़ जाएगी.

ए बानी तो करूं जाहेर, जो करना सबों एक रस ।
वस्त देखाए बिना, वैराट न होवे बस ॥ ८३

इस तारतम वाणीको मैं इसलिए प्रकट कर रहा हूँ कि सबको एकरस करना है. अखण्ड वस्तुका ज्ञान (दर्शन) करवाए बिना (तारतम ज्ञान द्वारा परमधामका अनुभव कराए बिना) यह वैराट वशीभूत नहीं होगा.

वैराट बस किए बिना, क्यों कर होए अखंड ।
हम खेल देख्या इछाएं कर, सो भंग ना होए ब्रह्मांड ॥ ८४

वैराट (संसारके प्राणियों) को इस प्रकार वश किए बिना अर्थात् उन्हें तारतम ज्ञानके द्वारा सन्मार्गगामी (एक परमात्माके उपासक) बनाए बिना वे किस प्रकार अखण्ड होंगे ? खेल देखनेकी इच्छासे ही हम ब्रह्मात्माओंने श्री

राजजीसे माँगकर संसारका यह खेल देखा है. इसलिए यह खेल अखण्ड हुए बिना ब्रह्माण्डका नाश नहीं होगा.

अनेक आगे होएसी, इन बानी को विस्तार ।
ए नेक कह्या मैं करने, अखंड ए संसार ॥ ८५

भविष्यमें इस तारतम वाणीका अनेक गुणा विस्तार होगा. संसारको अखण्ड बनानेके लिए अभी तो मैंने यह थोड़ा ही कहा है.

ए बानी कही मैं जाहेर, सो विस्तरसी विवेक ।
मैं गुझ कही जो साथ को, पर सो है अति विसेक ॥ ८६

इस वाणीको मैंने अभी थोड़ा ही प्रकट किया है. भविष्यमें इसका विवेकपूर्वक विस्तार होगा. मैंने अपने सुन्दरसाथको यह रहस्य सङ्केत द्वारा ही कहा है, परन्तु यह वाणी तो बहुत ही विशिष्ट है.

संसार सब के अंग में, मेरी बुध को करूं परवेस ।
असत सब होसी सत, मेरे नूर के आवेस ॥ ८७

संसारके समस्त जीवोंमें मैं अपनी बुद्धि (ज्ञान) का प्रवेश करवा दूँ. जिससे असत्य (अनित्य) जीव भी तारतमरूपी मेरे आवेशके द्वारा सत्य (अखण्ड) हो जाएँगे.

बुध मूल अक्षर की, आई हमारे पास ।
जोगमाया को ब्रह्मांड, तिन हिरदे था रास ॥ ८८

अक्षर ब्रह्मकी मूल बुद्धि हमारे पास आ गई है. उसी अक्षर ब्रह्मके हृदयमें योगमायाके ब्रह्माण्डकी रास लीला अखण्ड हुई है.

ए हुती पिया चरने, दिन एते गोप ।
वचन कोई कोई सत उठे, सोए करूं क्यों लोप ॥ ८९

अक्षरकी यह बुद्धि रास लीलाके उपरान्त अभी तक धामधनीके चरणोंमें थी तथापि शास्त्रोंमें कहीं-कहीं पर अखण्ड (सत्य) धामकी चर्चा हुई है. अब शास्त्रोंके उन सङ्केत वचनोंको मैं कैसे लुप्त होने दूँ ? अर्थात् उनको अवश्य स्पष्ट करूँगा.

व्रज रास में हम रमे, बुध हुती रास में रंग ।
अब आए जाहेर हुई, इत उदर मेरे संग ॥ ९०

हम सबने व्रज तथा रास मण्डलमें खेल किया तब अक्षर ब्रह्मकी बुद्धि रास मण्डलके रङ्गमें रङ्गी हुई थी. अब वह मेरे अङ्गमें प्रवेश कर यहाँ प्रकट हो गई है.

इन्द्रावती पिया संगे, उदर फल उतपन ।
एक निज बुध अवतरी, दूजा नूर तारतम ॥ ९१

धामधनी सद्गुरुके संसर्गसे इन्द्रावतीके हृदयमें दो फलों (अखण्ड निधियों) का अवतरण हुआ है. एक ओरसे अक्षर ब्रह्मकी बुद्धि तथा दूसरी ओरसे तारतमकी ज्योति उसके अन्तःकरणमें अवतरित हुई है.

दोऊ सरूप प्रगटे, लई मिनो मिने बाथ ।
एक तारतम दूजी बुध, देखसी सनमुख साथ ॥ ९२

दोनों स्वरूप, तारतमज्ञान एवं अक्षरकी बुद्धि एक साथ मिलकर (परस्पर बाथ भरते हुए) मेरे हृदयमें प्रकट हुए हैं. अब सब सुन्दरसाथ इन्हें अपने सम्मुख देखेंगे.

अक्षर केरी वासना, कहे जो पांच रतन ।
कागद ल्याया बेहद का, सुकदेव मुनी धन धन ॥ ९३

अक्षरब्रह्मकी वासनाएँ जिन्हें पाँच रत्न कहा गया है, उनमेंसे एक रत्न श्री शुकदेवजी हैं, जो बेहद भूमि (परमधाम) का विवरण पत्र (श्रीमद्भागवत) ले आए, इसलिए वे धन्य माने जाते हैं.

विस्नु मन खेल ले खडा, पकड के दोऊ पार ।
भली भांत भेलें विस्नु के, सनकादिक थंभ चार ॥ ९४

भगवान विष्णु अपने मनमें खेल देखनेकी इच्छा लेकर नीचे पातालमें शेषशायी नारायणके रूपमें तथा ऊपर आदिनारायणके रूपमें विराजमान हैं.

(भगवान विष्णु आदि नारायण तथा शेषशायी नारायणको एक ही रूप माना जाता है.) उनके साथ धर्म और ज्ञानके स्तम्भ स्वरूप चारों सनकादि भी हैं.

महादेवजीएं व्रज लीला, ग्रह्यो अखंड ब्रह्मांड ।
अक्षर चित सदासिव, ए यों कहावे अखंड ॥ ९५

भगवान शङ्करने अखण्ड व्रज लीलाको अपने हृदयमें ग्रहण किया. यह व्रजलीला अक्षरब्रह्मके चित्त सदाशिवमें (सवलिक लोकमें) अङ्कित होकर अखण्ड हुई है.

कबीर साख जो पूरने, ल्याया सो वचन विसाल ।
प्रगट पांचों ए भए, दूजे सागर आडी पाल ॥ ९६

सन्त कबीर अक्षरातीत ब्रह्म तथा ब्रह्मसृष्टियोंकी साक्षी देनेके लिए विशाल (गूढ़) वचन ले आए हैं. इस प्रकार अक्षर ब्रह्मकी ये पाँचों वासनाएँ (शुकदेवमुनि, सनकादि, विष्णु भगवान, भगवान शङ्कर तथा सन्त कबीर) प्रकट हुई हैं. शेष सबके लिए यह भवसागर बाँधकी दीवारकी भाँति अवरोधक बन गया.

हम बुध नूर प्रकास के, जासी हमारे घर ।
वैकुंठ विस्नु जगावसी, बुध देसी सारी खबर ॥ ९७

हम सब जागृत बुद्धिके प्रकाशके द्वारा अपने घर परमधाममें जागृत हो जाएँगे. यही बुद्धि वैकुण्ठमें विष्णु भगवानको अखण्डका बोध करवाकर उन्हें जागृत करेगी. इस प्रकार अक्षरकी बुद्धि सारे संसारको शुभ समाचार देगी.

खबर देसी भली भांतें, विस्नु जागसी ततकाल ।
तब आवसी नींद इन नैनों, प्रले होसी पंपाल ॥ ९८

अक्षरकी जागृत बुद्धि सबको सम्पूर्ण समाचार देगी, तब भगवान विष्णु तत्काल ही जागृत हो जाएँगे. पुनः उनकी आँखोंमें नींद आ जाएगी अर्थात् उनकी रुचि अनित्य मायावी संसारसे हटकर अखण्ड (अद्वैत) भूमिका (परमधाम) की ओर लौटेगी. उस समय इस झूठे ब्रह्माण्डका प्रलय हो जाएगा.

अक्षर खेल इछाएं कर, क्षर रचके उडात ।
वासना पांचों पोहोंचे इत, ए सत मंडल साख्यात ॥ ९९

अक्षरब्रह्म अपनी इच्छासे नश्वर ब्रह्माण्डोंकी रचना कर उनका लय करते हैं, तब अक्षरकी पाँचों वासनाएँ इस साक्षात् सत्यमण्डल अक्षरधाममें पहुँचेंगी.

पांचों बुध ले वले पीछे, तामें बुध विसेक विचार ।
अक्षर आंख खोलसी, होसी हरष अपार ॥ १००

इन पाँचों वासनाओंके अक्षर ब्रह्मकी बुद्धि (अन्तःकरण) में लौट जाने पर, अक्षरकी बुद्धि ध्यान द्वारा इस खेलकी विशेष बातों पर विचार करेगी. जब अक्षरब्रह्म अपनी आँखें खोलेंगे अर्थात् जागृत होंगे तब उनके मनमें असीम आनन्द उत्पन्न होगा.

लीला तीनों थिर होएसी, अखंड इन परकार ।
निमख एक ना विसरसी, रेहेसी दिल में सार ॥ १०१

इस प्रकार ये तीनों लीलाएँ (व्रज, रास तथा जागनी) अक्षरब्रह्मके अन्तःकरणमें स्थिर होकर अखण्ड होगी. अक्षरब्रह्म क्षण मात्रके लिए भी इन लीलाओंको नहीं भूलेंगे अर्थात् उनके हृदयमें ये तीनों लीलाएँ साररूपमें स्थिर होंगी.

उतम भी कहूं इनमें, जहां तारतम को विस्तार ।
वासना पांचों बुध ले, साख पूरसी संसार ॥ १०२

मैं पुनः इस ब्रह्माण्डमें उत्तम (श्रेष्ठ) स्थानकी बात कर रहा हूँ, वह स्थान नवतनपुरी है जहाँ तारतमज्ञानका उदय तथा विस्तार हुआ है. अब अक्षरब्रह्म पाँचों वासनाओंको जागृत बुद्धिमें समावेश करेंगे तथा समस्त संसारके प्राणी इसकी साक्षी देंगे.

मेरी संगते ऐसी सुधरी, बुध बडी हुई अक्षर ।
तारतमें सब सुध परी, लीला अंदर की घर ॥ १०३

अक्षरब्रह्मकी बुद्धि मेरा सान्निध्य प्राप्त कर कुछ इस प्रकार प्रखर हुई (सुधरी)

और महान बुद्धि (महामति) कहलाई. इस प्रकार तारतम ज्ञानके द्वारा अक्षरब्रह्मको अखण्ड परमधामके अन्दर सम्पन्न हो रही लीलाकी जानकारी प्राप्त हुई.

मेरे गुन अंग सब खडे होसी, अरचासी आकार ।
बुध वासना जगावसी, तिन याद होसी संसार ॥ १०४

(अक्षर ब्रह्मके सत्स्वरूपके निर्मल चैतन्यके अक्सी बहिश्तमें) मेरे गुण, अङ्ग सब जागृत होकर खड़े होंगे तथा मेरे आकार (इन्द्रावतीकी वासना जिसमें बैठी है वह जीव) की वहाँ पर पूजा होगी अर्थात् उसे सम्मान मिलेगा. इस प्रकार अक्षरकी बुद्धि पञ्चवासनाओंको जागृत करेगी. तब दुनियाँमें हुई सभी लीलाएँ उनकी स्मृतिमें उभर आएँगी.

बुध तारतम लेयके, पसरसी वैराट के अंग ।
अक्षर हिरदें या विध, अधिक चढसी रंग ॥ १०५

अक्षरकी बुद्धि तारतम ज्ञानको लेकर वैराटके प्राणियोंमें विस्तृत होगी अर्थात् संसारमें तारतम वाणीका प्रचार होगा. इस प्रकार अक्षर ब्रह्मके हृदयमें प्रेमका रङ्ग अधिक चढ़ेगा.

प्रकरण २३ चौपाई ७२४

निज बुध भेली नूर में, आग्या मिने अंकूर ।
दया सागर जोस का, किन रहे न पकरयो पूर ॥ १

तारतमका प्रकाश और अक्षरब्रह्मकी मूलबुद्धि एकाकार होकर श्री धनीजीकी आज्ञासे इन्द्रावतीके हृदयमें अङ्कुरित हुई. अक्षरातीत ब्रह्मके आवेशके साथ अवतीर्ण दयाके सागरका प्रवाह किसीसे भी पकड़ा नहीं जा सकता.

ए लीला है अति बडी, आइया इंड मांहें ।
कै हुए कै होएसी, पर किन ब्रह्मांडों नांहें ॥ २

परमधामकी यह लीला अति महत्त्वपूर्ण है, जो इस ब्रह्माण्डमें जागनी लीलाके रूपमें प्रकट हुई है. भूतकालमें ऐसे कई ब्रह्माण्ड बने और भविष्यमें भी बनेंगे परन्तु यह लीला अन्य किसी ब्रह्माण्डमें न हुई है और न ही होगी.

ए अगम अकथ अलख, सो जाहेर करें हम ।
पर नेक नेक प्रकास ही, जिन सेहे न सको तुम ॥ ३

इन अगम, अकथ तथा अप्रकट लीलाओंको हम प्रकट कर रहे हैं, किन्तु इनको धीरे धीरे ही प्रकाशित कर रहे हैं. अन्यथा इन्हें तुम एक साथ सहन (सुन) नहीं कर पाओगे.

जो कबूं कानों ना सुनी, सो सुनते जीव उरझाए ।
ताथें डरती मैं कहूं, जानूं जिन कोई गोते खाए ॥ ४

जो बात कभी कानोंसे नहीं सुनी है, उसे सुनते ही जीव उलझनमें पड़ेगा. इसीलिए मैं कहते हुए सङ्कोच करता हूँ कि कोई व्यर्थमें गोते न खाए.

ना तो सब जाहेर करूं, नाहीं तुमसों अंतर ।
खेंच खेंच तो केहेती हूं, सो तुमारी खातर ॥ ५

अन्यथा मैं तुम्हारे सामने सब कुछ एक ही बार प्रत्यक्ष कर देता, मैं तुम्हारे साथ कोई अन्तर नहीं रखता. तुम्हारे लिए ही मैं सोच-विचार कर कहता हूँ.

तुम दुख पाया मुझे साल ही, अब सुख सब तुम हस्तक ।
दिया तुमारा पावहीं, दुनियां चौदे तबक ॥ ६

तुमने अभी तक जो दुःख प्राप्त किए हैं, उनसे मुझे भी कष्ट हो रहा है, इसलिए अब सभी सुख तुम्हारे हाथमें सौंप दिए हैं. यहाँ तक कि चौदह लोकोंकी दुनियाँ भी तुम्हारे दिए हुए सुख ही प्राप्त कर पाएगी.

अजूं केहेती सकुचों, पर बोहोत बडी है बात ।
सोभा पाई तुम याथें बडी, जो पिया वतन साख्यात ॥ ७

अभी भी यह सब कहते हुए मुझे सङ्कोच हो रहा है, किन्तु यह बात सचमुच

बहुत बड़ी है. तुमने तो इससे भी बड़ी शोभा प्राप्त की है क्योंकि संसारको मुक्ति देनेके सामर्थ्यके साथ साथ तुम्हें अपने प्रियतम धनीके परमधामका भी अनुभव हो गया है.

इंड अखंड भी जाहेर, किए जागनी जोत ।
अब सुंन फोड आगे चली, जहां थे इंड पैदा होत ॥ ८

जागनी लीलामें तारतमकी इस अखण्ड ज्योतिने व्रज, रास आदि अखण्ड ब्रह्माण्डको भी प्रकट कर दिया. अब शून्य मण्डल पारकर यह ज्योति वहाँ तक पहुँची, जहाँसे यह जगत उत्पन्न होता है.

सोभा इन मंडल की, क्यों कर कहूं वचन ।
सो बुध नूर जाहेर करी, जो कबूं सुनी न कही किन ॥ ९

मैं इन वचनोंसे इस अखण्ड मण्डलकी शोभाका वर्णन कैसे करूँ ? आज तक जिसको किसीने कहा या सुना तक नहीं था, उस शोभाको तारतम ज्ञानके प्रकाश और अक्षरब्रह्मकी जागृत बुद्धिने इस जगतमें प्रकट कर दिया है.

रास वरनन भी ना हुआ, तो अक्षर वरनन क्यों होए ।
कही न जाए हद में, पर तो भी कहूं नेक सोए ॥ १०

इन सांसारिक शब्दोंके द्वारा रासका भी वर्णन नहीं हो सका, तो अक्षर धामकी लीलाका वर्णन कैसे हो सकता है ? इस क्षर ब्रह्माण्डमें बेहद लीलाका वर्णन नहीं किया जा सकता, फिर भी मुझे थोड़ा-सा कहना है.

जोगमाया तो माया कही, पर नेक न माया इत ।
ख्वाबी दम सत होवहीं, सो अक्षर की बरकत ॥ ११

योगमायाको माया कहा गया है किन्तु इसके अन्तर्गत रास मण्डलमें मायाका लेश मात्र भी नहीं है. अक्षरब्रह्मकी जागृत बुद्धिमें इतना सामर्थ्य है कि उससे स्वप्न जगतके जीव अखण्ड हो जाते हैं.

ताथें कालमाया जोगमाया, दोऊ पल में कै उपजत ।
नास करे कै पल में, या चित थिर थापत ॥ १२

अक्षर ब्रह्मके एक पल मात्रमें योगमाया तथा कालमाया द्वारा निर्मित ऐसे अनेक ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं. ऐसे कई ब्रह्माण्डोंका वे पल भरमें नाश कर देते हैं और कितनोंको अपने चित्तमें धारण कर अखण्ड कर लेते हैं.

तहां एक पलक ना होवहीं, इत कै कलप वितीत ।
कै इंड उपजे होए फना, ऐसे पल में इन रीत ॥ १३

अक्षर धाममें एक पल भी नहीं हुआ होता इतनेमें संसारमें कई कल्प व्यतीत हो जाते हैं. इस प्रकार अक्षर ब्रह्मके एक पलमें ऐसे कई ब्रह्माण्ड उत्पन्न होकर लय हो जाते हैं.

जागते ब्रह्मांड उपजे, पाव पल में अनेक ।
सो देखे सब इत थें, विध विध के विवेक ॥ १४

अक्षरब्रह्म जागृत अवस्थामें पाव पलक (पलकके चौथाई समय) में अनेक ब्रह्माण्ड उत्पन्न करते हैं. उन सबको हम तारतम ज्ञानके प्रकाशमें यहींसे देख रहे हैं.

ए लीला है अति बडी, द्रष्टें उपजे ब्रह्मांड ।
ए खेल खेलें नित नए, याकी इछा है अखंड ॥ १५

अक्षरब्रह्मकी यह लीला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है. उनकी दृष्टिमात्रसे अनेक ब्रह्माण्डोंकी उत्पत्ति हो जाती है. वे नित्य नई (बाल) लीलाएँ करते हैं. उनकी इच्छा भी अखण्ड होती है.

ए मंडल है सदा, जाए कहिए अक्षर ।
जाहेर इत थें देखिए, मिने बाहेर थें अंतर ॥ १६

यह मण्डल सदा रहनेवाला (शाश्वत) है जिसे अक्षरधाम कहा गया है. अक्षर ब्रह्म तथा उनके धामकी लीलाओंका रहस्य तारतम ज्ञान द्वारा यहींसे स्पष्ट देखा जा सकता है.

उतपन देखी इंड की, ना अंतर रती रेख ।
सत वासना असत जीव, सब विध कही विवेक ॥ १७

इसमें लेश-मात्र भी सन्देह नहीं है कि तारतम ज्ञानके द्वारा मैंने इस ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति जान ली और विवेकपूर्वक यह भी कहा कि जगतके जीव असत् हैं और ब्रह्मवासनाएँ सत् हैं.

मोह उपज्यो इतथें, जो सुंन निराकार ।
पल मीच ब्रह्मांड किया, कारज कारन सार ॥ १८

अक्षर ब्रह्मके (अव्याकृत) द्वारा मोहतत्त्वकी उत्पत्ति हुई जिसे शून्य, निराकार भी कहा गया है. अक्षरब्रह्मने ब्रह्मात्माओंके लिए निमेष मात्रमें इस मायावी खेलकी रचना की.

मोह अग्यान भरमना, करम काल और सुंन ।
ए नाम सारे नींद के, निराकार निरगुन ॥ १९

मोह, अज्ञान, भ्रम, कर्म, काल तथा शून्य ये सब निद्राके ही नाम हैं. इनको निराकार, निर्गुण भी कहा जाता है.

मन पोहोंचे इत लों, बुध तुरिया वचन ।
उनमान आगे केहेके, फेर पडे मांहें सुन ॥ २०

यहीं तक मन, बुद्धि, चित्त तथा वाणी पहुँचती है. ज्ञानी जन इससे आगेका वर्णन अनुमान द्वारा करते हैं और पुनः शून्य-निराकारमें आकर रुक जाते हैं.

जो जीव होसी सुपन के, सो क्यों उलंघे सुन ।
वासना सुंन उलंघ के, जाए पोहोंचे अक्षर वतन ॥ २१

जो जीव स्वयं स्वप्न द्वारा ही उत्पन्न हुए हैं, वे शून्य निराकारको किस प्रकार लाँघ सकते हैं ? ब्रह्मात्माएँ शून्यको लाँघकर अविनाशी धामको प्राप्त करतीं हैं.

ए सबे तुम समझियो, वासना जीव विगत ।
झूठा जीव नींद ना उलंघे, नींद उलंघे वासना सत ॥ २२

हे ब्रह्मात्माओ ! ब्रह्मवासना तथा नश्वर जगतके जीवोंका विवरण इस प्रकार

समझ लो. झूठे जीव नींदको लाँघकर आगे नहीं जा पाएँगे. सत्य आत्माएँ ही भ्रमरूपी निद्राको पार कर सकेंगी.

सुपने नगरी देखिए, तिन सब में एक रस ।
आपै होवे सब में, पांचों तत्व दसों दिस ॥ २३

जिस प्रकार स्वप्न द्रष्टा इस जगतमें स्वप्नकी नगरीको देखता हुआ उन सभी दृश्योंमें स्वयं एक रस विद्यमान रहता है, दसों दिशाओंमें तथा पाँचों तत्त्वों द्वारा निर्मित सभी वस्तुओंमें वह स्वयं रूपायित होता है (इसी प्रकार अक्षरब्रह्मके द्वारा यह जगतरूप स्वप्न देखा जा रहा है).

तिनमें भी दोए भांत है, एक वासना दूजे जीव ।
संसा न राखूं किनका, मैं सब जाहेर कीव ॥ २४

संसारके इस स्वप्नके अन्दर भी दो प्रकारके जीव हैं, एक तो वासना (आत्मा) द्रष्टा है तथा दूसरे (जीव) दृश्यमान नाटकके पात्र है. इस विषयमें किसीका संशय शेष न रहे, इसलिए इसे और स्पष्ट कर देता हूँ.

देखो सुपनमें कै लड मरे, सबे आपे पर ना दुखात ।
जब देखे मारते आपको, तब उठे अंग धुजात ॥ २५

देखो, स्वप्न देखनेवाला स्वप्नमें कई लोगोंको झगड़ते हुए देखता है. वह स्वयं ही सम्पूर्ण दृश्योंमें रूपायित हुआ है किन्तु उस समय उसे किसी भी प्रकारके दुःखका अनुभव नहीं होता. परन्तु जब उसी स्वप्नमें स्वयं उसे ही कोई मारने पीटने लगे तो डरसे कम्पायमान होता हुआ स्वप्नसे जागृत होता है (इसी प्रकार ब्रह्मात्माएँ स्वप्नके संसारका भयावह खेल देखकर स्वयं परमधाममें जागृत होंगी किन्तु स्वप्नके जीव स्वप्नकी भाँति वहीं मिट जाएँगे).

वासना उतपन अंग थें, जीव नींदकी उतपत ।
कोई ना छोडे घर अपना, या विध सत असत ॥ २६

वासनाएँ श्री राजजीके अङ्गसे उत्पन्न हुई हैं और जीव निद्रा द्वारा उत्पन्न हुए हैं. इस प्रकार दोनों (वासना तथा जीव) अपना-अपना घर (उद्‌गमस्थान) नहीं छोड़ते हैं. सत्य वासनाओं तथा असत्य जीवोंकी यही वास्तविकता है.

ब्रह्मांड चौदे तबक, सब सत का सुपन ।
इन द्रष्टांतें समझियो, विचारो वासना मन ॥ २७

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड तथा इसके चौदह लोक सभी सत्स्वरूप अक्षरब्रह्मका ही स्वप्न है. इसी दृष्टान्तके द्वारा अपने अन्तर्मनसे वासनाका महत्त्व समझना चाहिए.

सुपन सत सरूप को, तुम कहोगे क्यों कर होए ।
ए विध सब जाहेर करूं, ज्यों रहे न धोखा कोए ॥ २८

तुम कहोगे कि सत्स्वरूप अक्षर (जो जागृत अवस्थामें है) को स्वप्न कैसे आया ? इस विषयमें भी सविस्तार समझाऊँगी ताकि किसीको भी किसी प्रकारका सन्देह न रहे.

एक तीर खेंच के छोडिए, तिन बेधाए कै पात ।
सो पात सब एक चोटें, पाव पल में बेधात ॥ २९

पेड़के पत्तोंको एकत्रित करके यदि उन पर तीर फेंका जाय तो एक साथ कई पत्ते बींध जाते हैं. वे सब पत्ते एक ही चोटमें मात्र पाव पल (एक पलके चौथाई भाग) में बींध जाते हैं.

पर पेहेलें पात एक बेध के, तो दूजा बेधाए ।
यामें सुपन कै उपजे, बेर एती भी कही न जाए ॥ ३०

परन्तु बींधते समय प्रथम तो एक पत्तेको बींधकर वाण दूसरे पत्ते तक पहुँचता है. एक पत्तेसे दूसरे पत्ते तक पहुँचनेमें जितना समय लगता है, उससे भी कम समयमें अक्षरब्रह्म द्वारा कई ब्रह्माण्ड उत्पन्न हो जाते हैं.

तो बेर एक की कहा कहूं, इत हुआ कहां सुपन ।
पर सत ठौर का असत में, द्रष्टांत नहीं कोई अन ॥ ३१

इतने कम समयमें अक्षरब्रह्मको स्वप्न हुआ यह कैसे कह सकते हैं ? किन्तु अखण्ड भूमिकाको समझानेके लिए इस झूठे संसारमें कोई अन्य दृष्टान्त भी तो नहीं है.

इत भेलें रूह नूर बुध, और आग्या दया परकास ।
पूरूं आस अक्षर की, मेरा सुख देखाए साख्यात ॥ ३२

मेरे हृदयमें श्री श्यामाजीकी आत्मा, तारतम (नूर), अक्षरकी जागृत बुद्धि (बुध), श्री राजजीकी आज्ञा और कृपाका पूर्ण प्रकाश है. अब मैं इन सबके द्वारा मेरे घरका सुख दिखाकर परमधामकी लीला देखनेकी अक्षरब्रह्मकी इच्छाको पूर्ण कर दूँ.

इत भी उजाला अखंड, पर किरना न इत पकराए ।
ए नूर सब एक होए चल्या, आगूं अक्षरातीत समाए ॥ ३३

तारतम ज्ञानके अखण्ड प्रकाशसे यह संसार भी प्रकाशित हुआ है किन्तु इस दिव्य ज्ञानकी किरणें यहाँ समा नहीं रहीं हैं. उपर्युक्त बुद्धि, आज्ञा, दया सबके सब एक साथ अपना प्रकाश फैलाते हुए अक्षरातीत धाममें जाकर समा जाते हैं.

ए नूर आगे थें आइया, अक्षर ठौर के पार ।
ए सब जाहेर कर चल्या, आया निज दरबार ॥ ३४

अक्षरसे परे अक्षरातीतके धामसे ही तारतमका प्रकाश इस संसारमें आया है. सम्पूर्ण क्षर ब्रह्माण्ड, अक्षरधाम और परमधाम इन सभी भूमिकाओंको प्रकट कर यह फिर अपने स्थान परमधाममें ही समा जाएगा.

वतन देख्या इत थें, सो केते कहूं परकार ।
नूर अखंड ऐसा हुआ, जाको वार न काहूं पार ॥ ३५

ब्रह्मात्माओंने इस तारतम ज्ञानके प्रतापसे संसारमें रहते हुए भी परमधामके दर्शन किए, इसका विवरण कहाँ तक दूँ ? ज्ञानका ऐसा अखण्ड प्रकाश फैला जिसका कोई पारावार ही नहीं है.

किए विलास अंकूर थें, घर के अनेक परकार ।
पिया सुंदरबाई अंग में, आए कियो विस्तार ॥ ३६

परमधामके सम्बन्धी होनेके कारण हम ब्रह्मात्माओंने इस जगतमें रहते हुए भी परमधामके अनेक प्रकारके अखण्ड सुखोंमें विलास किया. सुन्दरबाई (सद्गुरु) के स्वरूपमें स्वयं प्रियतम परमात्माने मेरे हृदयमें विराजमान होकर धाम लीलाका विस्तार किया.

ए बीज बचन दो एक, पिया बोए किओ परकास ।
अंकूर ऐसा उठिया, सब किए हांस विलास ॥ ३७

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्रजी महाराजने मेरे हृदयमें तारतम ज्ञानके बीज वचन बोकर ही यह प्रकाश किया है. उसका ऐसा अङ्कुर फूटा (तारतम वाणी प्रकट हुई) कि इसके द्वारा सभीने परमधामके अपार सुखोंका अनुभव किया.

सूर ससी कै कोट कहूं, नूर तेज जोत परकास ।
ए सबद सारे मोहलों, और मोह को तो है नास ॥ ३८

यदि मैं सद्गुरु प्रदत्त तारतम ज्ञानरूपी प्रकाशको करोड़ों सूर्य-चन्द्रमाके प्रकाशकी उपमा दूँ, तो भी ये सब शब्द तो मोहतत्त्व तक ही पहुँचते हैं और मोहतत्त्वका तो नाश हो जाता है.

अब इन जुबां मैं क्यों कहू, निज वतन विस्तार ।
सबद ना कोई पोहोंचहीं, मोह मिने हुआ आकार ॥ ३९

अब मैं इस मायावी जिह्वा द्वारा अखण्ड घर परमधामके विस्तारका वर्णन किस प्रकार करूँ ? क्योंकि संसारकी वाणीका एक भी शब्द उस अखण्ड घर (दिव्य ब्रह्मपुर धाम) तक नहीं पहुँचता है और हमारा यह आकार (शरीर) भी तो मोहके अन्तर्गत ही है.

मोह सो जो ना कछू, इनसे असंग बेहद ।
सत को असत ना पोहोंचहीं, या विध ना लगे सबद ॥ ४०

मोहतत्त्व तो कुछ भी नहीं है अर्थात् वह नाशवान है और बेहदभूमि इस मोह तत्त्वसे भिन्न है. इसलिए असत्य वस्तु सत्य तक कभी नहीं पहुँचती. इस प्रकार इस झूठी जिह्वाके वचन अखण्ड परमधाम तक नहीं पहुँच पाते.

बेहद को सबद ना पोहोंचहीं, तो क्यों पोहोंचे दरबार ।
लुगा न पोहोंच्या रास लों, इन पार के भी पार ॥ ४१

जब ये शब्द बेहद भूमिका तकका ही वर्णन नहीं कर सकते तो ब्रह्मधामका कैसे वर्णन कर सकेंगे ? जब रासके वर्णनमें ही एक अक्षर भी सक्षम न हुआ तो फिर परमधाम तो उसके पार (अक्षरधाम) से भी पार है.

कोट हिसे एक लुगे के, हिसाब किया मिहीं कर ।
एक हिसा न पोहोंच्या रास लों, ए मैं देख्या फेर फेर ॥ ४२

मैंने एक-एक अक्षरके करोड़ों सूक्ष्मभाग बनाकर अति सूक्ष्मरूपसे हिसाब किया और बार-बार देखा भी किन्तु उन सूक्ष्म भागोंमेंसे कोई एक भाग भी रास लीलाके वर्णनके लिए उपयुक्त नहीं पाया.

मैं अंगे रंगे अंगना संगे, करूं आप अपनी बात ।
अब बोलते सरमाऊं, ताथें कही न जाए निध साख्यात ॥ ४३

श्री श्यामाजी स्वरूप सद्गुरु धनी इस प्रकार कहते थे कि मैं अपनी अङ्गना इन्द्रावतीके सङ्गमें रङ्गा हुआ हूँ. हम परस्पर अपनी (अखण्ड घर परमधामकी) ही बातें करते हैं. परन्तु संसारमें ऐसा कहते हुए (परमधामकी-निजानन्दकी बातें करते हुए) मुझे लज्जाका अनुभव होता है. इसलिए संसारमें साक्षात् निधि कही नहीं जा सकती.

वतन बातें केहेवे को, मैं देखती नहीं कोई काहूं ।
देखों तो जो होए दूसरा, नहीं गांऊ नांऊ न ठांऊ ॥ ४४

परमधामकी बात करने (सुनाने) के लिए मैं किसीको भी योग्य नहीं देख रहा हूँ. ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीका अस्तित्व हो तभी न दिखाई दे. अन्य जीवोंका तो न नाम है, न गाँव है, न ही कोई स्थान है अर्थात् वे सब तो अस्तित्वहीन एवं नाशवान् हैं.

जहां नहीं तहां है कहे, ए दोऊ मोह के वचन ।
ताथें विस्तार अंदर, बाहेर होत हों मुन ॥ ४५

जहाँ (इस नाशवान संसारमें) कुछ भी नहीं है वहाँ परमात्मा हैं, ऐसा कहा जाता है. वस्तुतः संसारमें परमात्मा 'है' कहना अथवा 'नहीं है' कहना ये दोनों वचन मोहके हैं (क्योंकि जब संसार ही अस्तित्व हीन है तो उसको लेकर विवाद ही क्यों ?) इसलिए मैंने अपने अन्तर हृदयमें ही इसका विस्तार किया है और बाहर कहनेके लिए मैं मौन रह जाता हूँ अथवा मैं सुन्दरसाथके अन्दर ही इस वाणीका विस्तार करता हूँ और बाहरके लोगोंके लिए मौन रहता हूँ.

एता भी मैं तो कह्या, जो साथ को भरम का घेन ।
वचन दो एक केहेके, टालूं सो दूतिया चेन ॥ ४६

इतने वचन भी मैंने इसलिए कहे हैं कि सुन्दरसाथ पर माया (अज्ञान) का नशा चढ़ा हुआ है. इस प्रकारके दो चार वचन कहकर मायाके द्वैतभावको मिटा दूँ.

साथ के सुख कारने, इन्द्रावती को मैं कह्या ।
ताथें मुख इन्द्रावती के, कलस सबन का भया ॥ ४७

सुन्दरसाथको परमधामके अखण्ड सुख प्रदान करनेके लिए मैंने ही इन्द्रावतीको यह सब कहनेका आदेश दिया. इसलिए इन्द्रावतीके मुखारविन्दसे प्रस्फुटित यह तारतम वाणी समस्त शास्त्रोंके ज्ञान मन्दिर पर कलशके रूपमें प्रतिष्ठित हुई.

प्रकरण २४ चौपाई ७७१

श्री कलश ग्रन्थ (हिन्दुस्तानी) सम्पूर्ण

पहले बीज उदय हुआ, पुरी जहां नौतन ।
सब पुरियों में उत्तम, हुई धन धन ॥

ए मधे जे पुरी कहावे, नौतन जेहनुं नाम ।
उत्तम चौदे भवनमां, जिहां वालानो विश्राम ॥

– *महामति श्री प्राणनाथ*

श्री ५ नवतनपुरीधाम, जामनगर